सुन्दर श्याम

श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी द्वारा रचित दसम ग्रंथ साहिब में संकलित दो बारहमाह

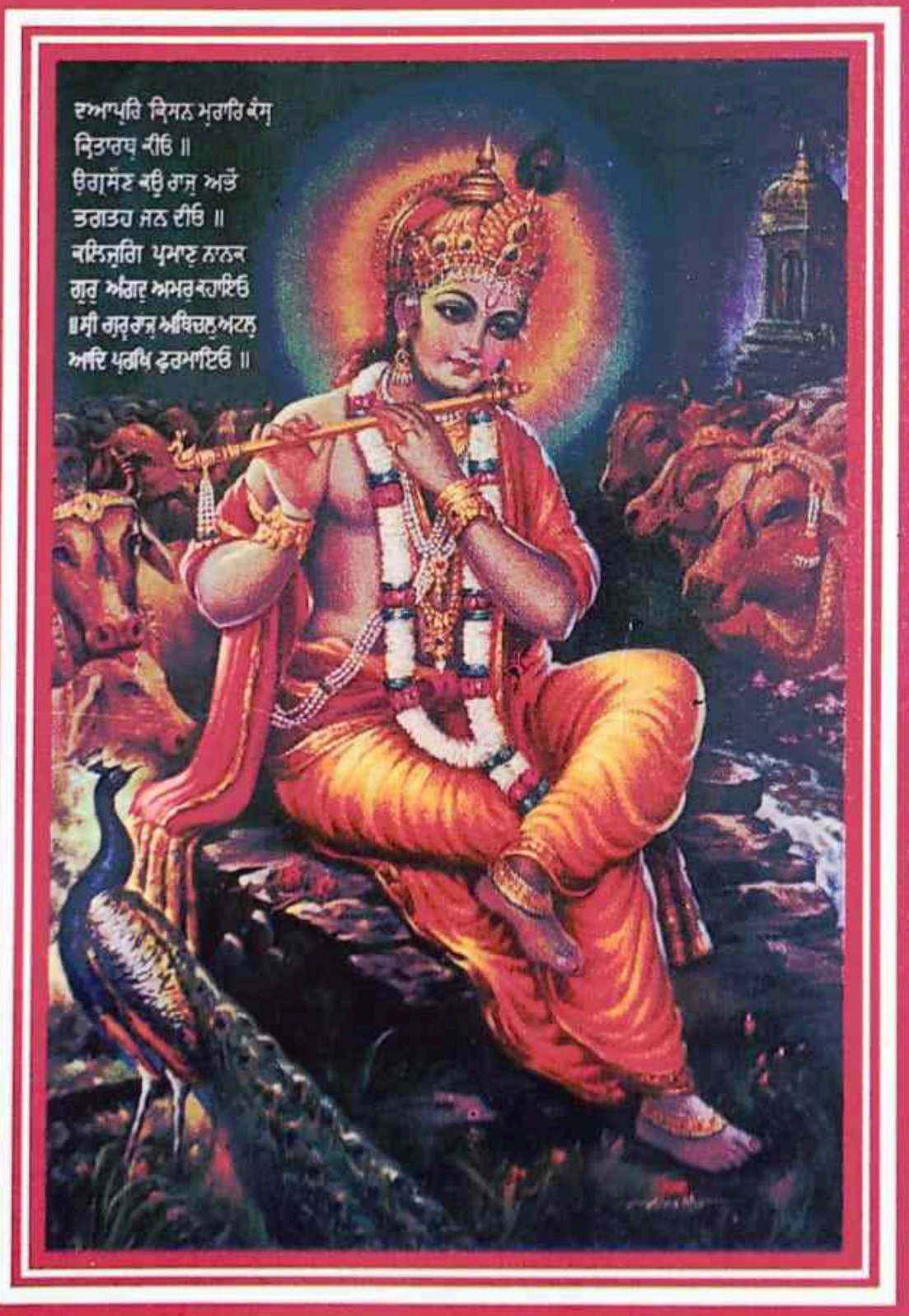

प्रिं: बेअन्त कौर

सुन्दर श्याम

लेखिका की अन्य रचनाएँ :

१	सूबा गन्डा सिंह (जीवन कथा)	— १९९०
२	सतिगुरू प्रताप सिंह जी अते होले महह्ले (घटनाएँ)	— १९९१
३	लाल ऐहि रतन, भाग—१ (उपदेश)	— १९९५
४	दरसनु देहु दअिापति दाते (बाररमाह)	— १९९६
५	लाल ऐहि रतन, भाग—२ (उपदेश)	— १९९९
६	इहि सुन्दरि सयाम की मान तमै (बाररमाह)	— १९९९
७	बचित्र नाटक—ईक अपूर्व कृति (गुरूबाणी)	— १९९९
८	The Namdhari Sikhs (History)	– 1999
९	सुन्दर श्याम (बारहमाह)	— २०००
१०	बचित्र नाटक—एक अद्वितीय रचना (गुरूवाणी)	— प्रकाशन अधीन
११	लाल ऐहि रतन, भाग—३ (उपदेश)	— प्रकाशन अधीन
१२	लाल ऐहि रतन, भाग—४ (उपदेश)	— प्रकाशन अधीन
१३	नामधारी रहत मर्यादा (रहत मर्यादा)	— प्रकाशन अधीन

सुन्दर श्याम

(श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी द्वारा रचित दसम ग्रंथ साहिब में संकलित दो बारहमाह)

प्रकाशक

Sundar Shyam

By
Pr. Beant Kaur
F213 A-1, Mansarover Garden,
New Delhi - 110015

© 2000

प्रकाशक : **विजय पब्लिकेशन्स,** ४७/४, ओल्ड राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली.
☎ 5745433, 5851173
E-mail : gkct@bol.net.in
Web site : www.techvilla.com\vijay_kohli

लेज़र टाइप सैटिंग : **एस आर एस कम्प्यूटर**, नई दिल्ली, ११० ०१५.
☎ 5422956

मुद्रक : **कैम्ब्रिज प्रिंटिंग वर्क्स**, नारायणा, नई दिल्ली ११० ०२८.
☎ 5706039

मूल्य : २०० रू

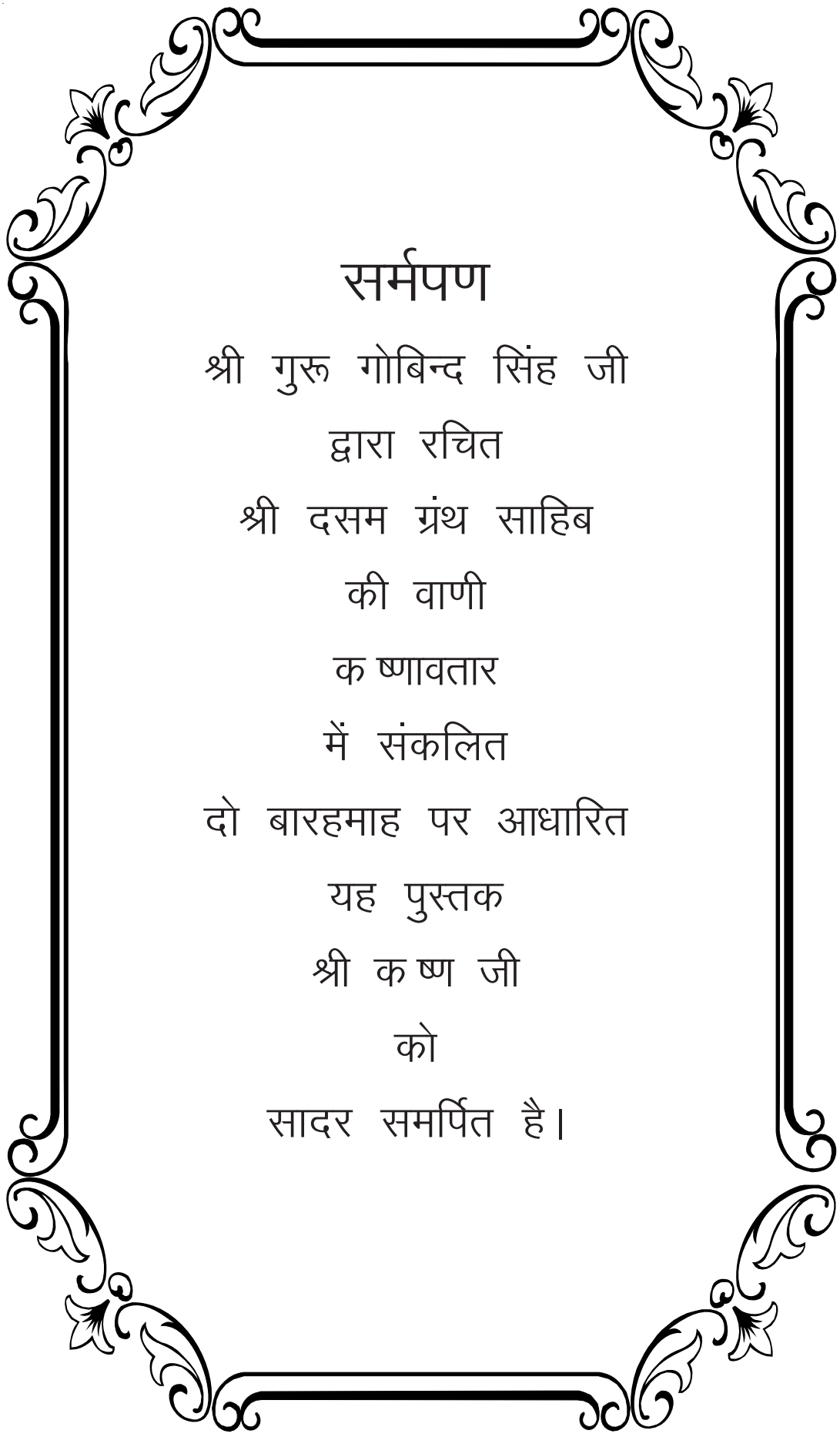

सर्मपण

श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी

द्वारा रचित

श्री दसम ग्रंथ साहिब

की वाणी

क ष्णावतार

में संकलित

दो बारहमाह पर आधारित

यह पुस्तक

श्री क ष्ण जी

को

सादर समर्पित है।

यह पुस्तक श्री गुरू गोबिन्द सिंह द्वारा रचित दशम ग्रंथ साहिब जी में संकलित वाणी कृष्णावतार में आये 'बारहमाह' और 'ब्रिह नाटक बारहमाह' पर आधारित है। इस ग्रंथ में गुरमुखी लिपि में लिखित गुरूवाणी के मौलिक रूप को बिना किसी मात्रा एवं शब्द के बदलाव के देवनागरी लिपि में लिखने का प्रयास किया गया है। आशा करती हूँ कि पाठक जन इसका शुद्ध उच्चारण करके आनंदित होंगे।

— लेखिका

विषय सूची

			पृष्ठ
(क)	दो शब्द	— लेखिका	11
(ख)	भूमिका	— डा० महीप सिंह	16
(ग)	प्रस्तावना	— लेखिका	21

प्रथम भाग

१	फागन मै सखी डार गुलाल — *इह सुंदरि सयाम की मान तमै*	**फागुन**	35
२	फूल सी गवारन फूल रही — *जह देखत होत हुलास हिये*	**चैत्र**	42
३	एक समै रहै किंसक फूलि सखी — *मुरली नंद लाल बजाई*	**बैशाख**	46
४	जेठ समै सखी तीर नदी — *ताकी प्रभा बरनी नही जाई*	**ज्येष्ठ**	57
५	पउन प्रचंड चलै जिह अउसर — *पउन प्रचंड चलै जिह अउसर*	**आषाढ़**	64

पष्ठ

६ जोर घटा घन आए जहां सखी — **श्रावन** 72
— *कानह्र के संग खेलत थी*

७ मेघ परै कबहूं उघरै सखी — **भाद्रपद** 78
— *इस अउसर कऊ बरनयो नही जाई*

८ मास असू हम कानह्र के संग — **आश्विन** 89
— *ता छबि को बरनयो नही जाई*

९ कातक की सखी रास बिखै — **कार्तिक** 95
— *हरि सो चित लाई*

१० मघ्र समै सभ सयाम के संग हुइ — **मार्गशीर्ष** 104
— *मन आनंद पाई*

११ बीच सरद रूत के सजनी — **पौष** 112
— *सयाम सो प्रीत लगाई*

१२ माघ बिखै मिल कै हरि सो — **माघ** 118
— *रस रास की खेल मचाई*

१३ सयाम चितार सभै तह गव्ारन — **अंतिका** 129
— *तयाग दई सुध और सभै*

पष्ठ

द्वितीय भाग
ब्रिह नाटक बारहमाह

१४ प्रेम छकी आपने मुख ते — **आरंभिक सवैया** 136
— *सयाम गए मथरा तजिकै*

१५ सेज बनी संग फूलन सुंदर — **आरंभिक सवैया** 144
— *सोऊ लयो कुबजा बस कै*

१६ रात बनी धन की अति सुंदर — **आरंभिक सवैया** 151
— *बिन को नही सयाम सहाई*

१७ फूल रहे सिगरे ब्रिज के तर — **चैत्र** 159
— *कंत बिना न सुहाई*

१८ बास सुबास अकास मिली अर — **बैशाख** 171
— *बि ज लोगनि की दुखदाई*

१६ नीर समीर हुतासन के सम — **ज्येष्ठ** 177
— *अति बिआकुल जीय*

२० पउन प्रचंड बहै अति तापत — **आषाढ़** 187
— *गाढ परी बिरही जन को*

			पृष्ठ
२१	ताल भरे जल पूरनि सौं — *भावन नाहि हहा घरि माई*	**श्रावन**	192
२२	भादव माहि चड़यो बिनु नाहि — *अवनी सगरी जल पूरनि छाई*	**भाद्रपद**	201
२३	मास कुआर चढ़यो बलधार — *पुकार रही न मिले सुखदाई*	**आश्विन**	206
२४	कातकि मै गनि दीप प्रकासत — *आयो नही मन भायो तही*	**कार्तिक**	213
२५	बारज फूल रहे सर पुंज — *बासुर रैन न चैन कहुं छिन*	**मार्गशीर्ष**	219
२६	भुम अकास अवास सु बासु — *तन सोखत जिउ कुमदी मुरझाई*	**पौष**	225
२७	माहि मै नाहि नही घरि माहि सु — *प्रीत की रीत करी उन सो*	**माघ**	232
२८	फागुन फाग बढयो अनुराग — *आस को तयाग निरास भई*	**फागुन**	238
२६	अंतिका		243

।।कबितु।।
कमल सो आनन कुरंग ता के बाके नैन
कट सम केहरि म्रिनाल बाहै ऐन है।।
कोकल सो कंठ कीर नासका धनुखु भउहै
बानी सुर सर जाहि लागै नहि चैन है।।
त्रिअनि को मोहति फिरति ग्राम आस पास
बिरहन के दाहबे को जैसे पति रैन है।।
पुन मंदि मति लोक कछु जानत न भेद या को
एते पर कहै चरवारो सयाम धेन है।।१६०।।
—दशम ग्रंथ प ष्ठ
२७७

।।कबितु।।
कमल सो आनन कुरंग ता के बाके नैन
कट सम केहरि म्रिनाल बाहै ऐन है।।
कोकल सो कंठ कीर नासका धनुखु भउहै
बानी सुर सर जाहि लागै नहि चैन है।।
त्रिअनि को मोहति फिरति ग्राम आस पास
बिरहन के दाहबे को जैसे पति रैन है।।
पुन मंदि मति लोक कछु जानत न भेद या को
एते पर कहै चरवारो सयाम धेन है।।१६०।।
—दशम ग्रंथ प ष्ठ
२७७

।।कबितु।।

कमल सो आनन कुरंग ता के बाके नैन
कट सम केहरि म्रिनाल बाहै ऐन है।।
कोकल सो कंठ कीर नासका धनुखु भउहै
बानी सुर सर जाहि लागै नहि चैन है।।
त्रिअनि को मोहति फिरति ग्राम आस पास
बिरहन के दाहबे को जैसे पति रैन है।।
पुन मंदि मति लोक कछु जानत न भेद या को
एते पर कहै चरवारो सयाम धेन है।।१६०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २७७

।।कबितु।।

कमल सो आनन कुरंग ता के बाके नैन
कट सम केहरि म्रिनाल बाहै ऐन है।।
कोकल सो कंठ कीर नासका धनुखु भउहै
बानी सुर सर जाहि लागै नहि चैन है।।
त्रिअनि को मोहति फिरति ग्राम आस पास
बिरहन के दाहबे को जैसे पति रैन है।।
पुन मंदि मति लोक कछु जानत न भेद या को
एते पर कहै चरवारो सयाम धेन है।।१६०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २७७

प्रि० बेअन्त कौर

प्रि० बेअन्त कौर जी का साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण स्थान है। आपने पंजाबी, अंग्रेजी तथा हिन्दी भाषा में अनेकों विषयों पर अपनी सुन्दर लेखनी द्वारा अनुठी छाप छोड़ी है। अपनी भाषा को सुद ढ़ बनाने हेतु ही आपने पंजाबी, अंग्रेजी में एम. ए. किया एवम् हिन्दी में साहित्य रत्न की ड़िग्री प्राप्त की।

आपने अध्यापन के क्षेत्र में रहकर भी शिक्षा को एक नया आयाम दिया। आपको विभिन्न संस्थाओं में कार्य करने का अवसर मिला और आपने अपने अनुभव का भरपूर प्रदर्शन भी किया। अध्यापन कार्य और साहित्यिक योगदान के लिए आपको कई बार सम्मानित भी किया गया।

आपकी साहित्य में रूचि बहुत छोटी उम्र से पनपने लगी थी। आपकी अनेकों रचनाएँ राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं हैं, जो क्रम आज भी जारी है। आपने कई पुस्तकें लिखकर साहित्य को अपने ढ़ंग से सम द्ध किया है। आपने गुरू गोबिन्द सिंह जी की लगभग सभी रचनाओं का सूक्ष्म रूप से अध्ययन किया है। यही उनका लक्ष्य भी है और साधना का विषय भी, जिस ने उनको एक नई जीवन-दिशा और प्रेरणा दी।

सुन्दर श्याम

(श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी द्वारा रचित दसम ग्रंथ साहिब में संकलित दो बारहमाह)

एक बुद्धिजीवी, कर्मठ उद्यमी, कुशल प्रबन्धक उससे भी अधिक एक मनुष्यजाति से प्रेम करने वाली नारी के रूप में उनकी प्रतिष्ठा, उनकी उपलब्धियों को मात करती हैं। विजय कोहली ने समाज सेवा की अनेकों परियोजनाओं पर निजी धन व्यय किया है।

उनकी समाज के प्रति निष्ठापूर्वक सेवाओं को 'लायन्स कल्ब इण्टरनेश्नल' ने मान्यता प्रदान की और उन्हें १९९७ में 'मेलविन जोन्स फैलोशिप' जैसे प्रतिष्ठित अवार्ड से सम्मानित किया गया। दूसरों के लिए जीना, उनके दुखों में शामिल होना, उनके जीवन का परमलक्ष्य है। वे संतुष्ट जीवन जी रही हैं और अपनी उपलब्धियों के प्रति उनकी सोच अत्यन्त विनीतपूर्ण है।

श्री सदगुरू राम सिंह जी सहाए

दो शब्द

'बारहमाह' काव्य की वह रूप है जिसमें महीनों का वर्णन होता है। देशी सम्मत के अनुसार बारह महीने इस भांति है : चैत्र, बैसाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावन, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फागुन।

'बारहमाह' कोई आधुनिक काव्य रूप नहीं है, यह अपना अस्तित्व बारहवीं सदी से पूर्व ही स्थापित कर चुका था। यह ऋतुओं के वर्णन का ही स्वरूप है। अनगिणत कवियों ने बारहमाह लिखे हैं परन्तु श्री गुरू नानक देव जी के द्वारा राग तुखारी में रचित 'बारहमाह' और श्री गुरू अर्जुन देव जी द्वारा राग माझ में रचित 'बारहमाह' अपना एक विशेष अस्तित्व तथा महत्व रखते हैं। इन दोनों 'बारहमाह' पर आधारित 'दर्शन देहु दइआ पति दाते' नाम की पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है और पाठक इस का आनन्द ले रहे हैं। श्री दशम ग्रंथ में संकलित कृष्णावतार में सम्मिलित, दो 'बाहरमाह' व्योग, कसक, पीड़ा की शिखरों को स्पर्श कर रहे है। यदि यह कहा जाये कि यह दोनों 'बारहमाह' साहित्यिक संसार में अपना एक विशेष स्थान रखते हैं और श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी की अद्वितीय तथा सर्वश्रेष्ठ रचनाओं में से एक हैं तो यह कोई अत्यकथनीय नही होगी।

श्री गुरू गोबिन्द सिंह द्वारा रचित 'दशम ग्रंथ साहिब' की अध्यात्मक साहित्यिक जगत एवं सिक्ख समाज में एक विशेष अस्तित्व है। सदगुरू जी 'गागर में सागर' भर कर और बड़े

संक्षिप्त रूप में अपने हावों-भावों, उदगारों, भावनाओं को इतने सुन्दर और भाव पूरित ढंग से स्पष्ट करते हैं कि पाठक इन की वाणी की लय में, शब्दावली की मस्ती में झूम जाता है और झूमता-झूमता उसी बहाव में बहता चला जाता है। वह आनन्द विभोर होकर विस्मादित अवस्था में पहुँच जाता है।

श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी दशम ग्रंथ में चौबीस अवतारों का वर्णन करते हुए श्री कृष्ण जी के जीवन पर कुछ विसतार में डालते है, भले ही '**ग्रंथ बडनि ते अधिक डराऊँ**' का विचार सदैव ही सदगुरू के समक्ष प्रस्तुत रहता है। हिन्दी भाषा के अन्य कवियों ने, जैसे कि सूरदास, रसखान, बिहारी आदि ने भी श्री कृष्ण जी की प्रंशसा की है अतः गुन गान किया है परन्तु जिस शैली में श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी ने उन के बहुपक्षीय व्यक्तित्व को प्रस्तुत किया है उस का सानी अन्य कोई नहीं है।

सूरदास की क तियों में श्री कृष्ण जी के दर्शन मैं पहले ही कर चुकी हूँ। उन की गोपियों का विरहा, वियोग, श्री कृष्ण जी के साक्षात दर्शन की ति ष्णा आदि के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त थी परन्तु श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी की रचना दशम ग्रंथ मे संकलित कृष्णावतार में श्री कृष्ण जी की बहुपक्षीय प्रतिभा और व्यक्तित्व के दर्शन करने के पश्चात मैं क त-क त हो गई हूँ। सदगुरू जी की लेखनी से प्रदर्शित सौन्दर्य से अवगत होने के पश्चात मैं अपने इष्ट पर बलिहार जाती हूँ। जिस सुन्दर शैली में गोपियों की वेदना-विरहा, ह्रदय की कसक, पीड़ा का उल्लेख किया गया है, उसने मुझे प्रभावित किया है। वह स्वयं में एक अद्वितीय उदाहरण है, ऐसा रोचक वर्णन साहित्यक जगत में और कहीं उपलब्ध नहीं है। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी ने श्री कृष्ण जी के दर्शनों का साक्षात्कार करा दिया है और प्रेरणा दी है कि कृष्णावतार में संकलित दोनो 'बारहमाह' का रसास्वादन स्वयं भी किया जाये और दूसरों को भी

कराया जाये। इस पुस्तक में श्री कृष्ण जी के प्रियजनों, पाठकों और अनुरागियों को दर्शन कराने का भरपूर प्रयत्न किया गया है। आशा है कि पाठक जन उन के जीवन व तांतों के विषय में अध्ययन कर के अपने इष्ट के चरण कंवलों का स्पर्श प्राप्त करके अपने जीवन के क्षण सार्थक करेंगे।

श्याम सुन्दर जी की आज्ञा को कौन टाल सकता था? श्याम सुन्दर जी के कुंज गलियों में, हाथों में पिचकारियाँ ले कर सब गोप-ग्वालों से मिल जुल कर, एक दूसरे पर गुलाल का छिडकाव करते और उस समय उन के सुन्दर मुख से उच्चारण किये हुए सुरीले गीत वातावरण को और सुहावना बना देते थे। सारे ग़म दूर कर के अपने घरों की लालसा छोड कर इस सुन्दर श्याम जी की आज्ञा का पालन करके गोपियाँ गीत गा कर अत्यन्त आनन्दित होती थीं।

यह केवल यहीं तक सीमित नहीं था बल्कि गोपियाँ अपने प्रिय इष्ट की जीवन भर आज्ञाकारी बनी रहीं। उनके वियोग में तड़पती तथा बिलखती रही। व ंदावन की कुंज गलियों से मथुरा कितनी समीप है परन्तु वे तो श्याम सुन्दर जी की आज्ञा अनुसार वहीं रहीं, दर्शनों के लिये मथुरा गई ही नहीं। सारा जीवन उन की आज्ञा के बंधन में बंधी रहीं और उसी के अनुसार वे अपना जीवन व्यतीत करती रहीं।

सर्वप्रथम मैं अपने परम पूज्य इष्ट श्री सदगुरू जगजीत सिंह जी की क तज्ञ हूँ जिनकी अपार क पा और बख़शिश ने मेरी अन्तर आत्मा में श्री दशम ग्रंथ साहिब का अध्ययन करने की प्रेरणा उत्पन्न की। अंग-संग हो कर श्री दशम ग्रंथ साहिब की वाणी की सूझ-बूझ प्रदान की, श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी के चरणों से प्रीत उत्पन्न की। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी के नूरानी, रूहानी और प्रभावशाली व्यक्तित्व के समक्ष करबद्ध वन्दना जिन की शिक्षा भरपूर लेखनी द्वारा श्री कृष्ण जी के चरणों के साथ प्रीत और अनुराग ने उन से साक्षात्कार करा दिया।

मैं धन्यवाद करती हूँ डाक्टर महीप सिंह जी का जिन्होने अपनी अत्यन्त व्यस्तता से कुछ क्षण खोज निकाले और इस पुस्तक के लिए कुछ शब्द लिखे। उन्हें दशम ग्रंथ साहिब के विषय में बहुत सी जानकारी प्राप्त है और वह हिन्दी के सुलझे हुए लेखक हैं। उन का नाम साहित्यक जगत में अत्यन्त विख्यात है।

मैं आभार प्रकट करती हूँ श्रीमती विजय कोहली का जिन्होंने यह पुस्तक प्रकाशित कराने की जिम्मेदारी ली। लायन विजय कोहली एक सम द्ध एवम् व्यापारिक परिवार से सम्बन्ध रखती हैं। उनके स्वर्गीय पति श्री देविन्दर कोहली तथा उनके स्वर्गीय ससुर श्री दीना नाथ कोहली काफी धनी व्यक्ति थे। अपने ससुर का उन पर बहुत प्रभाव रहा। विजय कोहली ने लेडी श्री राम कालिज से स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त संगीत में एम. ए. किया। सौन्दर्य कला एवम् जैमोलोजी में भी उन्होंने विशेष योग्यता प्राप्त की। ललित कलाओं और साहित्य में गहरी अभिरूची के कारण वे शिक्षा और अच्छी पुस्तकों की तरफ आकर्षित हुई। अन्ततः वे पुस्तकों के प्रकाशन के कार्य में जुट गईं। इसी तरह 'विजय पब्लीकेशन्स' का १९९८ में शुभारम्भ हुआ। अब तक २५ से भी अधिक टाइटल्स विभिन्न विषयों पर वे प्रकाशित कर चुकी हैं। पुस्तकों की विषय-वस्तु भारतीय संस्क ति, उसके अनेकों धर्म और धर्म पुस्तकों पर आधारित है। उनके ठोस व्यक्तिव के पीछे 'लायनिज्म' का महत्वपूर्ण प्रभाव है जिससे उनको समाज सेवा के लिए भरपूर प्रेरणा मिली।

एक बुद्धिजीवी, कर्मठ उद्यमी, कुशल प्रबन्धक उससे भी अधिक एक मनुष्यजाति से प्रेम करने वाली नारी के रूप में उनकी प्रतिष्ठा, उनकी उपलब्धियों को मात करती हैं। विजय कोहली ने समाज सेवा की अनेकों परियोजनाओं पर निजी धन व्यय किया है। उन्होंने राजेन्द्र नगर स्थित अपने निवास स्थान

में चेरिटेबल डिस्पेन्सरी 'गुरू क पा चेरिटेबल ट्रस्ट' के नाम से स्थापित किया है। अपने निवास स्थान के पिछवाड़े ही आस-पास के झुगी-झोपड़ीयों के बच्चों के लिए 'गुरू क पा पाठशाला' भी शुरू की। कमज़ोर वर्ग की महिलाओं के लिए आरम्भ किया गया उनका व्यवसायिक केन्द्र उनकी आर्थिक स्थिति को सुधारने और उनको आत्मनिर्भर बनाने में सहायक सिद्ध हुआ। प्रक ति प्रेम के रूप में उन्होंने स्कूल के बच्चों को लेकर कई व क्षारोपन योजनाओं में भाग लिया। गरीब बच्चों के लिए कम्पयुटर शिक्षा उनकी उपलब्धियों की सूची में एक नया जोड़ है। उनकी समाज के प्रति निष्ठापूर्वक सेवाओं को 'लायन्स कल्ब इण्टरनेश्नल' ने मान्यता प्रदान की और उन्हें १९९७ में 'मेलविन जोन्स फैलोशिप' जैसे प्रतिष्ठित अवार्ड से सम्मानित किया गया। अपने सभी संसाधन समाज के पिछड़े वर्ग के उत्थान के लिए व्यय करना उनकी उदारता और आतिथ्य का परिचय देता है। दूसरों के लिए जीना, उनके दुखों में शामिल होना, उनके जीवन का परमलक्ष्य है। वे संतुष्ट जीवन जी रही हैं और अपनी उपलब्धियों के प्रति उनकी सोच अत्यन्त विनीतपूर्ण है।

अंत में इस पुस्तक को लिखते समय अनेकों अशुद्धियाँ रह गई होगी, उन के लिये, क्षमा-याचना करना मैं अपना कर्त्तव्य समझती हूँ अतः क्षमा याचना की प्राथी हूँ।

प्रिं: बेअंत कौर
एफ–२१३, ए–१,
मानसरोवर गार्डन
नई दिल्ली–११००१५

भूमिका

सनातनी हिन्दू परंपरा में श्री क ष्ण जी को सोलह कला सम्पूर्ण अवतार माना गया है। इस तरह श्री क ष्ण पूर्ण अवतार माने गये है जबकि बाकी सभी अंश-अवतार है। यही कारण है कि भारतीय साहित्य में जितनी रचना श्री क ष्ण जी को केंद्रित कर के रची गई है उतनी और किसी अवतार पुरुष के बारे में नहीं। दशम ग्रंथ में सभी अवतारों की कथा दी गई है। यह बात भी ध्यान योग्य है कि क ष्णावतार की छंद संख्या २४६२ है जबकि रामावतार की कथा को मात्र ८६४ छंदों में लिखा गया है।

दशम ग्रंथ में संग्रहीत क ष्णावतार एक दीर्घ प्रबंधात्मक रचना है। क ष्ण चरित्र पर प्रबंधात्मक काव्य लिखने की कोई पुष्ट परंपरा ब ज भाषा में नहीं। विद्यापति, सूरदास, नंददास, रसखान, जगन्नाथ, दास रत्नाकर जैसे कवियों ने अपनी भावना को स्फुट छंदों में ही प्रस्तुत किया है। क ष्णावतार का महत्व इस बात में भी है कि यह ब ज भाषा में लिखा गया एक विशिष्ट महाकाव्य है।

दशम ग्रंथ में संकलित जिन कुछ रचनाओं का रचना काल दिया गया है, क ष्णावतार उन्हीं में से एक है। छंद संख्या २४६० और ६१ में कवी ने दो बातें लिखी है—एक रचना काल —

सत्रह सै पैताल महि सावन सुदि थिति दीप।।
नगर पावटा सुभ करन जमना बहै समीप।।२४६०।।

दूसरी बात इस से भी महत्त्वपूर्ण है। कवि बताता है कि इस रचना रचने के पीछे उसका क्या मन्तव्य है।

दसम कथा भागौत की भाखा करी बनाइ।।
अवर वासना नाहि प्रभ धरम जुद्ध के चाइ ।।२४६१।।

अर्थात,''मैं भागवत पुराण के दसवें स्कंध को भाखा (ब ज भाषा) में रच रहा हूँ। इसके पीछे मेरी और कोई इच्छा नहीं। मेरे मन में तो धर्मयुद्ध का चाव है।''

दशम ग्रंथ और इस में सम्मिलित अवतार कथाओं के बारे में जब बहुत सारे विवाद उठाये जाते हैं तो सामान्यतः इस बात की तरफ ध्यान नहीं दिया जाता। कवि स्पष्ट करता है कि लोगों में धर्म-युद्ध के प्रति चाव पैदा करने के लिये मैं भागवत के दसवें स्कंध में लिखे क ष्ण चरित्र को ब ज भाषा में लिख रहा हूँ।

अपने देश में क ष्ण चरित्र की विकास यात्रा सैकड़ों वर्षों में समाई हुई है। ऋग्वेद में क ष्ण का उल्लेख जिस प्रकार से हुआ है और उसके बाद रचे गये पुराणों में जिस प्रकार से क ष्ण चरित्र को चित्रित किया गया है, उस में बहुत विरोधाभास है। भागवत पुराण में यह चरित्र वह स्वरूप धारण कर लेता है जो बाद में आये क ष्ण भक्त कवियों ने स्वीकार किया। आम पौराणिक मान्यता यह है कि जब प थ्वी पर पापों का भार बढ़ जाता है और आसुरी शक्तियों का बोलबाला हो जाता है तो ब्रह्मा जी देवताओं को साथ ले कर भगवान विष्णु जी के पास जाते हैं, जो क्षीर सागर में शेषनाग की शैया पर विश्राम कर रहे होते हैं। देवता उनसे विनती करते हैं कि वह संसार में आसुरी शक्तियों का विनाश करने के लिये और संतों की रक्षा हेतु अवतार धारण करें। देवताओं की इस विनती को स्वीकार करके विष्णु संसार में अवतार धारण करते हैं। क ष्णावतार के रचयिता ने इस मान्यता को अपने ही ढंग से लिखा है। वह लिखते हैं कि क्षीर सागर में विष्णु नहीं बल्कि स्वयं प्रभु विराजमान थे। ब्रह्मा जी की विनती पर प्रभु ने विष्णु जी को बुलाकर आज्ञा दी कि आप क ष्ण जी के रूप में अवतार धारण करिये।

ब्रह्मा गयो छीर निध जहां।।
कालपुरख इसथित थे तहां।।
कहयो बिशन कर निकट बुलाई।।
किशन अवतार धरों तुम जाई।।
काल पुरख के बचन ते संतन हेत सहाई।।
मथुरा मंडल के बिखै जनम धरयौं हरि आइ।।

क ष्ण चरित्र का विकास इस देश में दो रूपों में हुआ है—एक वासुदेव क ष्ण जो सुदर्शन चक्रधारी है, जरासंध, कालयवन, शिशुपाल जैसे बडे-बड़े योद्धाओं को पराजित करने वाले हैं, महाभारत में अर्जुन के सारथी हैं और द्वारका के राजा है। दूसरा रूप है गोपाल क ष्ण का जो व्रिंदावन में गायें चराते हैं, बाँसरी बजाते हैं, गोपियों के साथ रास रचाते हैं और लीला करते हैं। भागवत पुराण में क ष्ण जी के यह दोनों रूप मिलते हैं परन्तु इसमे राधा का कोई उल्लेख नहीं मिलता। क ष्ण के साथ राधा की चर्चा भागवत पुराण की रचना के बाद शुरू हुई। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी ने क ष्णावतार के लिये भागवत के दसवें अध्याय को आधार बनाया है परन्तु उस में राधा की पूरी चर्चा की है क्योंकि उस समय तक राधा क ष्ण जी से पूरी तरह युक्त हो चुकी थी और हिन्दी साहित्य में रीति काल का वह समय (सत्रहवीं-अठारवीं सदी) पूरी तरह श्रंगार रस से ओत-प्रोत समय था। इस काल के अधिकतर कवि क ष्ण चरित्र को आधार बना कर काव्य का स जन कर रहे थे, परन्तु उन का ध्यान सुदर्शन चक्रधारी क ष्ण की ओर नहीं था। उन की रुचि श्रं गारी भाव वाले क ष्ण गोपाल की ओर ही रही।

गुरू गोबिन्द सिंह जी ने रीति काल के इस चलन में एक बड़ा परिवर्तन किया। कुल २४६२ छंदों में से बाल लीला, रास मण्डल और मथुरा गमन, गोपी विरहा प्रसंगों के लिये १०२८ छंदों का प्रयोग किया। युद्ध प्रबन्ध के लिये लगभग १००० छंद और अन्तिम प्रसंगो के लिये ५०० छंदों का प्रयोग किया। दशम

ग्रंथ में संकलित क ष्णावतार लगभग ३०० प ष्ठों में है, उन में से युद्ध संदर्भ एक तिहाई प ष्ठों से अधिक में फैला हुआ है। उस काल के किसी क ष्ण भक्त कवि ने युद्ध संदर्भ को इतना महत्व नहीं दिया था।

वास्तव में इस खण्ड की रचना ही दशम गुरू का मनोरथ था। धर्म युद्ध लड़ने की इच्छा की अभिव्यक्ति इसी खण्ड से सार्थक होती है।

श्रीमती बेअंत कौर ने अपनी रचना 'सुन्दर श्याम' में क ष्णावतार में संकलित दोनों 'बारहमाह' को अपना आधार बनाया है। 'बारहमाह' भारतीय लोक-काव्य की प्राचीन परम्परा का मुख्य अंग है। गुरू ग्रंथ साहिब में भी इस का प्रयोग किया गया है। श्रीमती बेअंत कौर ने इस रचना में श्री क ष्ण के अनुपम सौन्दर्य का बहु पक्षीय वर्णन किया है। उन का यह कहना बहुत सटीक है कि श्री गुरू नानक देव जी द्वारा रचित तुखारी 'बारहमाह' और श्री गुरू अर्जन देव जी द्वारा रचित माझ राग में 'बारहमाह' और श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी द्वारा क ष्णावतार में संकलित 'बारहमाह' साहित्यिक एवम् अध्यात्मिक रंगों में रंगी हुई अमूल्य रचनाएँ है।

श्री क ष्णा का ब ज को छोड़ कर मथुरा चले जाने से गोपियों, ग्वालनों की जो दशा हुई उस विषय के सम्बन्ध में रीति कालीन कवियों ने बहुत कुछ लिखा है। क ष्णावतार में वर्णित यह संदर्भ किसी भी ब ज भाषा में लिखित इस घटना से कम प्रभावशाली या मार्मिक नहीं है। श्रीमती बेअंत कौर ने इस मार्मिकता को बड़ी गहन भावनाओं और श्रद्धा से दर्शाया है।

संपूर्ण दशम ग्रंथ में संकलित की गई रचनाएं १४२८ प ष्ठों पर अंकित की हुई हैं। इस में फारसी और पंजाबी रचनाएं ५० प ष्ठों से अधिक नहीं हैं, शेष सम्पूर्ण भाग ब ज भाषा में रचित है। आज दशम ग्रंथ के पठन-पाठन की परंपरा सिखों में बहुत कम हो गयी है, उस का एक कारण यह भी है कि दशम ग्रंथ

की भाषा जन-साधारण के लिए सहज ग्र नहीं है। श्रीमती बेअंत कौर ने क ष्णावतार में से जो छंद गोपियों की मनोदशा और क ष्णा के सौन्दर्य को अभिव्यक्त करने हेतु चयन किये हैं उन की सरल व्याख्या भी साथ ही कर दी है। इस से जन-साधारण इसका सम्पूर्ण आनन्द उठाने योग्य हो जाता है।

भारतीय जन-जीवन में क ष्ण की महिमा की व्याप्ति सब से अधिक है। वह लोक नायक भी हैं और लोक रंजक भी। इस लोक रंजक रूप को क ष्णावतार के माध्यम से श्रीमती बेअंत कौर ने जिस ढंग तथा विधि से उजागर किया है वह बड़ा ही प्रशंसनीय है। ऐसी अद्वितीय रचना के लिये मैं उन्हें हार्दिक बधाई देता हूँ।

एच–१०८, शिवाजी पार्क, **डा० महीप सिंह**
नई दिल्ली–११००२६

१

।।बारहमाह।।

।।सवैया।। फागन मै सखी डार गुलाल
सभै हरि सिउ बन बीच रमै।।
पिचकारन लै करि गावति गीत
सभै मिलि गव्ारन तउन समै।।
अति सुंदर कुंज गलीन के बीच
किधौ मन के करि दूर गमै।।
अरू तयाग तमै सभ धामन की
इह सुंदरि सयाम की मान तमै।।८६७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६६

शब्दार्थ : रमै—जंगल में जाती थी। तउन—उस समय। गमै—ग़म, शोक, उदासियों को दूर करके। तमै—लालच, लोग मोहा। तमै—खव्हाईश, इच्छा।

व्याख्या : श्री कृष्ण जी ब ज को छोड़कर मथुरा चले गये, सारी गोपियाँ, ग्वालने श्री कृष्ण जी को याद करके राती और विलाप करती थी। उन्हें ऐसा अनुभव होता था कि मथुरा जा कर श्री कृष्ण जी उन्हें बिल्कुल भूल गये हैं। श्री कृष्ण जी ने न तो उनको कोई संदेश भेजा और न स्वयं ही वापिस आये। इस लिए श्री कृष्ण की स्म ति में पीड़ा, कसक, दुख का गहरा अनुभव होता। उन्हें बीते हुए सुखमय कई क्षणों की याद बार-बार आ कर सताती। उनकी आँखों के समझ एक द श्य के पश्चात् दूसरा द श्य आ कर उन के ह्रदयों को झंझोड़ देता। उन्हें स्मरण हो आया कि पिछले फागुन में वे सब आपस में

मिलजुल कर एक दूसरे पर गुलाल छिड़का करतीं थीं और श्री कृष्ण जी के साथ वनों और उपवनों में घूमती-फिरती थीं। उस समय सारी गोपियाँ और ग्वाले हाथों में पिचकारियाँ लिये हुए एक-दूसरे पर विभिन्न रंगों का छिड़काव किया करते, आमोद-प्रमोद में व्यस्त रहते थे। इसके साथ-साथ गोपियाँ अपने-अपने हृदयों के उद्‌गारों को अभिव्यक्त करने के लिए मधुर तानों और सुरों में गीत गाया करती थीं। कुंज गलियों में श्री कृष्ण जी और गोपियाँ मिलकर गीत गाते, गुलाल छिड़काते, हास-परिहास करते और सारा वातावरण आनन्द से भरपूर होता था। ग़मगीन होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता था। उस समय गोपियाँ अपने घरों के कार्य भुला देती थीं। उन्होंने अपने मन की इच्छाओं का परित्याग किया हुआ था। उनके मन में केवल एक ही इच्छा होती थी और वह थी श्री श्याम सुन्दर जी के दर्शनों की अभिलाषा। इसलिये, इसे सुन्दर श्याम जी की इच्छा मानकर, सारी गोपियाँ गीतों का गायन करती थीं।

भाव : गोपियाँ अपने ग़मों को भुलाकर अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के प्रेम में मस्त होकर कुंज गलियों में रंग-रलियां मनाया करती थीं। उन्हें अपने प्रिय श्याम सुन्दर के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नहीं थी।

इह सुंदरि सयाम की मान तमै

तन-बदन सुन्दर होने से मनुष्य सुन्दर नहीं हो जाता। कई बार श्याम रंग की सुन्दरता की झलक मारता है। श्री कृष्ण जी सांवले रंग के होते हुए भी रूप के अत्यन्त सुन्दर थे। श्री कृष्ण जी का मुख-मण्डल अत्यन्त सुन्दर था। आँखें बड़ी विशाल थीं, वह तो कान्हा काला था परन्तु था बड़ा सुन्दर, अति सुन्दर।

विशाल नेत्रों वाले श्री कृष्ण जी के सुन्दर मुख के जो भी दर्शन करता, अपने आप उनकी ओर आकर्षित हो जाता। वह चुम्बक की भाँति थे। जो भी उनके पास जाता, उसे वह अपनी

ओर आकर्षित कर लेते। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी बड़ी अनूठी शैली में श्री कृष्ण जी की सुन्दरता का वर्णन करती हैं।

।।कबितु।। कमल सो आनन कुरंग ता के बाके नैन
कट सम केहरि म्रिनाल बाहै ऐन है।।
कोकल सो कंठ कीर नासका धनुखु भउहै
बानी सुर सर जाहि लागै नहि चैन है।।
त्रिअनि को मोहति फिरति ग्राम आस पास
बिरहन के दाहबे को जैसे पति रैन है।।
पुन मंदि मति लोक कछु जानत न भेद या को
एते पर कहै चरवारो सयाम धेन है।।१६०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २७७

श्री कृष्ण जी का मुखड़ा कमल जैसा सुन्दर था। उनके विशाल नेत्र हिरण के नेत्रों जैसे सुन्दर थे। शेर की भाँति पतली कमर थी और कमल फूल की डंडी जैसी सुडोल-लम्बी भुजायें थीं। दोनों जाघें केले के व क्ष के समान थीं और दोनों टांगों की सुन्दरता तीर समान थी, भाव दोनों टांगे तीर के समान सीधी थीं। कोयल जैसा कंठ था और तोते जैसी सुन्दर नाक। धनुष जैसी टेढ़ी भौहें थीं। उच्चारण तीर के समान था, जिसे लग जाता, वह बेचैन होकर तड़प उठता। गांव के आस-पास का स्त्रियों को श्री कृष्ण जी अपने सुन्दर स्वरूप से मोह लेते। वियोग से पिड़ित गोपियों को जलाने के लिए वह चन्द्रमा के समान थे। ब ज की गोपियाँ सब एक जुट होकर श्री कृष्ण के चरण-कंवलों में विनती करती हुईं उनके मुख-मण्डल की प्रशंसा करतीं कि उनका सुन्दर मुखड़ा चन्द्रमा के समान है, हिरन जैसी यह मस्त आँखें और उनका सुन्दर स्वरूप रात-दिन गोपियों के ह्रदयों में बसा रहता है।

श्री कृष्ण जी के सुन्दर मुखड़े के दर्शन करके धरती भी रंग-बिरंगे परिधान पहन कर अनेक भाँति के फूल पत्तों के साथ अपना हार-श ंगार करती है। उसका मन करता है कि वह भी

श्री कृष्ण जी के सुरूप की भाँति सुन्दर बन जाये और श्री कृष्ण जी के करतब और सुन्दर स्वरूप का भरपूर आनन्द उठा सके।

जंगल के सारे पक्षियों को लज्जा आ रही थी और वे सारे रूष्ट थे कि श्री कृष्ण जी ने उनके समस्त अंग चुरा लिये हैं, कहीं उनकी रूप भी न ले लें, क्योंकि उन की सुन्दर मूर्ति में म ग की आँखें, तोते की नाक, कबूतर जैसी गर्दन, शेर जैसी कमर और कोयल और सारस जैसे मीठे वचन थे।

गुलाब के फूल श्री कृष्ण जी का सुन्दरता के समक्ष तुच्छ प्रतीत होते हैं और चंद्रमा की आभा भी श्री कृष्ण जी को देखते लजा जाती है। कमल के पत्ते और नर्गिस के फूल भी श्री कृष्ण जी को देखते ही अति लज्जित हो जाते हैं। श्री कृष्ण जी की सुन्दरता का सानी पूर्व से पश्चिम तक कोई नहीं है। गोपियाँ तो श्री कृष्ण जी के स्वरूप पर मोहित थीं।

।।सवैया।। कोऊ कहै हरि को मुख सुंदर
कोऊ कहै सुभ नाक बनयो है।।
कोऊ कहै कट केहरि सी
तन कंचन सो रिझ काहू गनयो है।।
नैन कुरंग से कोऊ गनै जस
ता छबि को कबि सयाम भनयो है।।
लोगन मै जिमु जीव बनयो
तिनके तन मै तिम कानह् मनयो है।।२६२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २६१

कोई कहती, श्री कृष्ण जी का मुखड़ा सुन्दर है; कोई कहती नाक की बनावट सुन्दर है; कोई कहती, श्री कृष्ण जी की कमर शेर जैसी पतली है और कईयों ने अत्यन्त प्रसन्न होकर श्री कृष्ण की देह को सोने का बनी हुई कहा। कोई कहती है कि उनके नेत्र हिरन जैसे हैं। उनके सुन्दर मुखड़े को देखकर ब ज की सभी स्त्रियाँ चकोर की भाँति मोहित हो जाती हैं। गोपियाँ

श्री कृष्ण जी के सुन्दर सलौने शरीर पर इतनी मोहित और मस्त हो जाती थीं कि उनको श्री कृष्ण जी के दर्शनों के बिना चैन और शांति ही नहीं मिलती थी। श्री कृष्ण के नेत्र बड़े सुन्दर थे और अपने इन सुन्दर नेत्रों से गोपियों के हृदयों को मोहित कर लेते थे। मोहित हुई गोपियाँ, श्री कृष्ण जी के मुखड़े का दर्शन करके शांति का अनुभव करतीं।

।।सवैया।। कोमल कंज से फूल रहे द्रिग
मोर को पंख सिर ऊपर सोहै।।
है बरनी सर सी भरुटे धन
आनन पै ससि कोटक को है।।
मित्र की बात कहा कहिये
जिह को पिख कै रिप को मन मोहै।।
मानहु लै शिव के रिप आप
दयो बिधना रस याहि निचोहै।।३१७।।

—दशम ग्रंथ पष्ठ २६४

श्री कृष्ण जी के नेत्र कमल फूल जैसे कोमल और सदैव खिले रहते थे। सिर पर मोर के पंखों का मुकट सुशोभित था। तीर जैसी तीक्ष्ण दष्टि थी, भौहें धनुष जैसी गोल थीं, मुख की सुन्दरता के सामने करोड़ों चन्द्रमा भी तुच्छ थे। श्री कृष्ण जी के सुन्दर स्वरूप को देख कर शत्रु भी मोहित हो जाते थे। उनकी सुन्दरता को देख कर ऐसे प्रतीत होता था जैसे कामदेव ने स्वयं सुन्दरता लेकर, उसका रस ब्रह्मा को दे दिया हो और ब्रह्मा ने उसी रस से श्री कृष्ण का शरीर बनाया हो।

श्री कृष्ण जी के पीले रंग के वस्त्र ऐसे लगते थे जैसे सावन के महीने में उड़ती हुई घनघोर घटाओं में से बिजली चमक रही है। श्री कृष्ण जी का श्याम वर्ण सावन की काली घटा और पीले रंग के वस्त्र बिजली की चमक के समान सुशोभित हो रहे थे। श्री कृष्ण जी के नेत्रों के दर्शन करके ब्रह्माण स्त्रियाँ मस्त हो रही थीं। उनको अपने तन-मन की सुध नहीं रहती थी, श्री

कृष्ण जी के दर्शन करने से ब्राह्ममण स्त्रियों के दुःख ऐसे दूर हो जाते थे, जैसे गंगा जी के स्पर्श से ही सारे पाप दूर हो जाते हैं। श्री कृष्ण जी के सुन्दर स्वरूप को देखकर वे अपनी आँखों में उसे बंद कर लेती थीं जैसे कोई धनवान पुरूष धन को प्राप्त कर के अपने घर मे रखकर अपने घर के द्वार बंद कर लेता है, कहीं श्री कृष्ण जी के दर्शन आँखों के द्वारा बाहर न निकल जाये।

श्री कृष्ण जी धैर्य, सन्तोष और गुणों के अथाह भण्डार थे। अपनी चंचल आँखों से एक क्षण में दुष्टों का संहार कर देते, शत्रुओं का नाश करते। श्री कृष्ण जी अवतारी पुरूष थे जो साधु संतों के व्यथा को सदैव दूर करते थे, मित्रजनों का पालन करते थे। संसार के जीवों का उद्धार करते थे। उनकी छवि को देख तथा सुन कर दुष्ट लोगभीतर ही भीतर जलते-भुनते रहते थे।

श्री कृष्ण जी का मुख चन्द्रमा के समान था और कंवल पत्रों के समान कोमल आँखें थीं। भौंहें धनुष के समान एक जैसी गोल थीं और आँखों की चमक तीर के समान मन को घायल कर देने वाली थीं। उनके नेत्र, साधु और सन्तों के दुःख हरने वाले थे।

श्री कृष्ण जी पीतांबर धारी थे। अपनी देह को पीले वस्त्रों से सुसज्जित किया करते थे। अपने सुन्दर माथे पर चन्दन का टीका लगाया करते थे। श्री कृष्ण जी की देह के सारे अंग इतने सुन्दर थे कि उनकी शोभा शब्दों के द्वारा वर्णन नहीं की जा सकती। श्री कृष्ण जी अति सुन्दर थे। उनके अपार सौंदर्य के दर्शन पाकर गोपियाँ अपनी होश गंवा बैठती थीं और बेसुध हो कर धरती पर गिर पड़ती थीं।

श्री कृष्ण जी के गले में वह मणि सुशोभित हो रही है जो समुद्र ने उन्हें भेंट स्वरूप दी थी। श्री कृष्ण जी के सर पर मोर के पंखों का मुकुट विराजमान होता था। दोनों कानों में कुण्डल शोभायमान हो रहे थे। कंठ में मोतियों की माला सुशोभित थी।

राह चलते लोग श्री कृष्ण जी के दर्शन करने के लिए रूक जाते थे और यहाँ तक कि देवते भी दर्शन करने के लिये स्वर्ग को त्याग कर म त्यलोक पर पहुँच जाते थे।

ब्रखभान सुता पिखि रीझ रही
अति सुंदर सुंदर कानह् को आनन।।५६७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३२७

श्री कृष्ण जी को अति सुन्दर मुखड़े को देखकर राधा जी अत्यन्त प्रसन्न होती। शेष गोपियाँ श्री कृष्ण जी के सुन्दर स्वरूप को देखकर अपने-अपने शरीर में ही कृष्ण स्वरूप हो जाती थीं। श्री कृष्ण जी के सुन्दर मुखड़े से सभी रागों के स्वर निकलते थे और उनकी वाणी ही जैसे रागों का अलाप था। जिस भाँति मधु में मक्खियां होती हैं, उसी भाँति लोगों की मति उनके सुन्दर स्वरूप में युक्त थी। अपने सुन्दर मुख से श्री कृष्ण जी बहुत ही सुरीले स्वर में राग अलापते थे।

श्री कृष्ण जी के लम्बे केश इस भाँति शोभा पा रहे हैं जैसे चन्दन के व क्ष के साथ काले सर्पों के बच्चे लटके हुए हों। श्री कृष्ण जी की सुन्दरता अनूठी थी, समाधि लगाने वालों को समाधि ही भूल जाती थी क्योंकि वे हर समय दर्शनों के अभिलाषी रहते थे। ऐसे अति सुन्दर, मनमोहक श्री कृष्ण जी की सारी इच्छाओं को स्वीकार कर के ब ज की गोपियाँ अपने घर-परिवार की परवाह न करते हुए स्वयं को न्यौछावर करने के लिए हमेशा तत्पर रहती थीं। उनका इच्छा में रह कर, उन की छवि पर बलिहार जाती थीं और सदा आनन्द-मग्न रहती थीं।

सुन्दर श्याम

२

।।सवैया।। फूल सी गव्ारन फूल रही
पटि रंगन के फुन फूल लिए।
इक सयाम सीगार सु गावत है
पुन कोकलका सम होत जीए।
रित नामहि सयाम भयो सजनी
तिह ते सभ छाड सु साज दीए।।
पिखि जा चतुरानन चउक रहै
जिह देखत होत हुलास हीए।।८६८।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६६

शब्दार्थ : पटि—पहने हुये वस्त्रों से मिलते—जुलते रंगों के फूलों को लेकर। कोकलका—कोयल समान मीठी सुर में गाकर। जिए—हृदय में खुश होतीं। रित—ऋतु, मौसम—मौसम के अनुसार। सयाम—माधव। साज—सजावट, श्रंगार। जा—जिस को देखकर। चतुरानन—चार मुख वाला ब्रह्मा। चउक—अचंभित।

व्याख्या : समस्त गोपियों का मन हर्ष और अथाह प्रेम से भरपूर था। वे अति प्रसन्न हो रही थीं, जिस प्रकार फूल खिले हुये होते हैं उसी प्रकार फूलों की भाँति वे खिली हुई थीं, जो वस्त्र उन्होंने पहने हुए थे, वे भी फूलों जैसे विभिन्न रंगों के थे। एक गोपी श्री कृष्ण जी के श्रंगार की प्रशंसा करती है, उनके हार-श्रंगार के गीत गाती है और कोयल की भाँति मन में प्रसन्न होती है। श्री कृष्ण जी का नाम ही चैत्र या मौसम बहार बना हुआ है, उसी के कारण ही सब सखियों ने अपने शरीर पर

सुन्दर श्रंगार किया हुआ है। उनके सुन्दर श्रंगार को देखकर श्री ब्रह्मा जी भी चकित हो रहे हैं और उसे देखते ही हृदय में उल्लास भर जाता है।

भाव : समस्त गोपियाँ फूलों वाले रंगों के कपड़े पहनकर फूलों की भाँति ही लग रही थीं। उन्होंने अपने तन को हार श्रंगार करके इस तरह से सुसज्जित किया हुआ था जिसको देखते ही प्रत्येक का मन पुलिकत हो उठता था।

जह देखत होत हुलास हिये

अर्जुन श्री कृष्ण जी के परम भक्त, सखा, बंधु, प्रेमी, स्नेही थे। श्री कृष्ण जी ने इन्हें अपना नम्मित बनाकर महाभारत की लड़ाई में बड़े-बड़े योद्धाओं को नष्ट करके, प थ्वी को राक्षसों से मुक्त करके, इस लोक में अपने आने का मन्तव्य सार्थक कर दिया। इसी तथ्य को श्री कृष्ण जी ने गीता के विश्व रूप दर्शन के प्रसंग में यह कहकर स्वीकार किया है,''ये सारे तेरे शत्रु, मेरे द्वारा पहले ही मारे जा चुके हैं। तुझे इनका संहार करने के लिये सिर्फ नम्मित बनना होगा।''

।।सवैया।। रात बितीत भई अर प्रात भई
फिर रात तबै चड़ आए।।
छाड दए हथि फूल हजार
दोऊ भुच पयोधर अैस फिराए।।
अउर हवाइ चली नभ को
उपमा तिह की कबि सयाम सुनाए।।
देखहि कउतक देव सभै
तिहते मनो कागद कोट पठाए।।३३।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २५७

अर्जुन श्री कृष्णजी के अति प्रिय भक्तों में से एक थे। वह श्री कृष्ण को अपना निकट संबन्धी भी स्वीकार करते थे। अर्जुन श्री कृष्ण जी के साथ कई बार अलग-अलग स्थानों पर कई-कई

महीने इकट्ठे रहते थे। ऐसे अवसरों पर यह स्वभाविक ही था कि उन दोनो का उठना-बैठना, खाना-पीना, घूमना-फिरना सोना-लेटना साथ-साथ ही होता था और इन हालातों में उन दोनों में किसी प्रकार का कोई संकोच नहीं होता था। ये दोनों एक दूसरे के बहुत समीप थे। इनके प्यार का प्रकाश संजय के ध तराष्ट्र को कहे हुए शब्दों से स्पष्ट पता चलता है।

संजय ने कहा,''महाराज ! मैं आप का संदेश देने के लिये अर्जुन के अंतहपुर में गया था। उस स्थान पर अभिमन्यु, नकुल, सहदेव नहीं जा सकते थे। वहाँ पहुँचकर मैंनें देखा कि श्री कृष्ण जी ने अपने दोनों चरण अर्जुन की गोद में रखे हुए हैं और अर्जुन के चरण द्रौपदी और सत्यभामा की गोद में हैं।'' जब पाण्डव जुए की शर्त हार कर चले जाते हैं, उस क्षण, श्री कृष्ण जी उन्हें मिलने के लिये जाते हैं। उस समय श्री कृष्ण जी और अर्जुन के एक होने का प्रमाण मिलता है। श्री कृष्ण ने कहा,''अर्जुन ! तुम केवल मेरे लिये हो और मैं केवल तेरे लिये हूँ। जो मेरे हैं वे तेरे हैं, जो तेरे हैं, वे मेरे हैं। जो तेरे साथ द्वेष करता है वह मेरे साथ द्वेष करता है, जो तेरा प्रेमी है, वह मेरा प्रेमी है। तुम नर हो और मैं नारायण हूँ। हम दोनों में कोई अन्तर नहीं और हम दोनों एक हैं।''

श्री कृष्ण जी और अर्जुन का सम्बन्ध चाँद चकोर का है, जल और मछली जैसा है। द्वारका में भी श्री कृष्ण और अर्जुन दोनों कई-कई दिन इकट्ठे ही रहते थे और यहाँ तक कि वे रात को इकट्ठे ही सोते थे। श्री कृष्ण जी अर्जुन को सुभद्रा से विवाह करने की आज्ञा देते हैं और उसे रथ, हथियार आदि सुभद्रा के हरण हेतु देते हैं और पूरी सहायता प्रदान करते हैं। खांडवदाह के संदर्भ में अर्जुन इन्द्र से यह वरदान मांगता है कि उनकी श्री कृष्ण से मित्रता दिन-रात बढ़ती ही जाये। श्री कृष्ण जी के साथ अर्जुन के प्यार की कोई सीमा नहीं थी। यही कारण था कि अर्जुन ने श्री कृष्ण जी की नारायणी सेना न लेते

हुए अकेले श्री कृष्ण जी का चयन किया था। उन्होंने ऐश्वर्य त्यागकर श्री कृष्ण जी को अपनाया। श्री कृष्ण जी ने अपने प्रिय मित्र के बस में होकर उस का सार्थी बनना स्वीकार कर लिया। अर्जुन अपने जीवन की बागडोर श्री कृष्ण जी के हाथों में देकर निश्चिंत हो गये।

श्री कृष्ण जी का अर्जुन के साथ बड़ा अनोखा प्यार था। अर्जुन पूर्ण रूप में श्री कृष्ण के प्रिय विश्वास पात्र बन चुके थे। अर्जुन का गुन-गान करते हुए श्री कृष्ण जी ने कहा है,''अर्जुन मेरा सखा, सम्बन्धी और शिष्य है। यदि आवश्यकता पड़ी तो मैं अपने शरीर का अंग काटकर भी दे सकता हूँ। अर्जुन भी मेरे लिये अपने प्राणों का त्याग कर सकता है।''

अर्जुन ने जयद्रथ को मारने का वादा किया। श्री कृष्ण जी आधी रात को जाग पड़े। अपने सार्थी को बुलाकर अपनी व्यथा के बारे में कहने लगे,''दारूक ! मेरे लिये स्त्री, मित्र अथवा भाई-बंधु कोई भी अर्जुन से बढ़कर प्रिय नहीं है। इस संसार को बिना अर्जुन के क्षण भर के लिये भी नहीं देख सकता। मैं अर्जुन का प्रिय मित्र हूँ। अर्जुन मेरा आधा शरीर है।'' अगले दिन श्री कृष्ण जी की बताई गई युक्ति अनुसार अर्जुन ने जयद्रथ को मार कर अपनी सौगंध पूरी की और अपने प्यारे मित्र की क पा के कारण अर्जुन को रंच-मात्र भी कष्ट न हुआ। अर्जुन बड़े धीर-वीर, दयालु और कोमल स्वभाव के थे। सत्यवादी, दैवी गुणों के धारणी और अत्यन्त महा कुशल धनुर्धारी और सदाचारी थे।

इस भाँति प्रेमी और इष्ट एक दूसरे के बिना नहीं रह सकते। श्री कृष्ण जी अपने प्यारे भक्त को मिलकर पुलिकत और प्रसन्न होते। इसी भाँति दूसरी ओर अर्जुन भी अपने प्रभु के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त करके हमेशा उल्लास से भरपूर रहते, अति प्रसन्नचित्त रहते और श्री कृष्ण जी जैसे इष्ट की प्राप्ति करके अपने भाग्य की सराहना करते।

३

एक समै रहै किंसक फूलि
सखी तह पउन बहै सुखदाई।
भउर गुंजारत है इत ते
उत ते मुरली नंद लाल बजाई।
रीझ रहियो सुनिकै सुर मंडल
ता छबि को बरनयो नही जाई।
तउन समै सुखदाइक थी रित
अउसर याहि भई दुखदाई।।८६६।।

—दशम ग्रंथ, प ष्ठ ३६६

शब्दार्थ : किंसक—केसू के फूल। सुर मण्डल—देवताओं का देस। अउसर—इस अवसर या मौके पर।

व्याख्या : गोपियों को श्री कृष्ण जी के साथ बिताये हुए क्षणों की याद सताती है, दुखी करती हैं। गोपियाँ उन पलों की याद में, उन घड़ियों को एक क्षण के लिये भी भुला नहीं पाती। एक वह समय था जब केसू के फूल चारों ओर खिले हुए थे और वातावरण को सुहावना और सुगंधमयी बनाते थे। उधर वह वायु उन फूलों के उपर से होकर उन्हे स्पर्श करते हुये निकलती और गोपियों को सुखदायक प्रतीत होती थी। एक ओर फूलों का खिलना और दूसरी ओर भंवरे उन का रस चूसने को बेचैन। भंवरे गुंजार करते हुए इधर से उधर और उधर से इधर आते-जाते, भीं-भीं करते, ध्वनि करते। फूलों-फूलों पर मंडराते फिरते। ऐसे सुहावने क्षण में श्री कृष्ण जी अपने हस्त कंवलों से मुरली अपने मधुर अधरों से लगाते और उस समय

विभिन्न धुनों को छेड़कर, अलग-अलग तानें बजा कर, श्री कृष्ण जी गोपियों के हृदयों को झंझोड़ कर रख देते। स्वर्ग में विचर रहे देवता भी श्री कृष्ण जी की मुरली में से निकली धुनों को सुनकर अति प्रसन्न हो रहे थे। उस समय की शोभा का वर्णन करना अत्यन्त कठिन है, असंभव है। उस शोभा का शब्दों में वर्णन करना बहुत कठिन है। उस समय, एक ओर बसंत ऋतु दूसरी ओर फूलों का खिलना, खिले हुए फूलों पर भंवरो की गुंजार और श्री कृष्ण का संग फिर भला गोपियों को यह सब कुछ अच्छा क्यों न लगता। उस समय गोपियाँ रस-विभोर हो कर, आनन्दित होकर, श्री कृष्ण के साथ थीं परन्तु अब जब श्री कृष्ण जी गोपियों से दूर हैं, अतः अब गोपियों को सब कुछ दुःखदायी प्रतीत होने लगा। उनको श्री कृष्ण जी के बिना सब कुछ सूना-सूना और नीरस लग रहा था। वे विरह की अग्नि में तड़प रहीं थीं। उनकी विवशता और बेबसी उनको दुःख देकर सता रही थी।

भाव : प्रक ति की सुन्दरता अपने पूरे यौवन पर थी। भंवरे गुंजार कर रहे थे। श्री कृष्ण जी ने मुरली बजाकर वातावरण को और सुहावना बना दिया था। इस द श्य को देखकर देव मण्डल भी अति प्रसन्नचित हो रहा था। वे पल सबके लिये अत्यन्त सुखदायक बने हुये थे।

मुरली नंद लाल बजाई

मुरली से भाव है बाँसुरी। बाँस की नलकी में आठ छेद करके बनाया गया एक साज़, एक बाजा सा। मुरली का नाम आते ही श्री कृष्ण जी के दर्शनों का साक्षात्कार हो जाता है। मुरली श्री कृष्ण जी के होठों की शान थी। मुरली श्री कृष्ण के अधरों की मिठास थी। जब कभी भी श्री कृष्ण जी तीव्र भावनाओं के साथ ओत-प्रोत होते, तो फिर वह मुरली पर करोड़ों राग अलापते, जो उनकी शान को चार-चांद लगा

देते थे। गुरू गोबिन्द सिंह जी इस का वर्णन इस प्रकार करते हैं।

सोरठ सारंग अउ गुजरी
ललता अरु भैरव दीपक गावै।।
टोडी अउ मेघ मलह्रार अलापत
गौंड अउ सुद्ध मलह्रार सुनावै।।
जैतसिरी अरु मालसिरी
अउ परज सु राग सिरी ठट पावै।।
सयाम कहै हरि जी रिझ कै
मुरली संग कोटक राग बजावै।।२३१।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २८२

श्री कृष्ण जी अपने गोप ग्वालों के साथ क्रीड़ाएँ करते समय बाँसुरी बजाया करते थे। ग्रीष्म ऋतु समाप्त हो गई और वर्षा ऋतु आ गई। श्री कृष्ण जी अपने बाल ग्वालों और बछड़ों के साथ वन में घूमते-फिरते थे। जब वर्षा होती तो गुफा में बैठकर आमोद-प्रमोद करने के लिये मुरली पर सबके मन को मोहने वाली धुन बजाते।

।।कबितु।। ललत धनासरी बजावै संगि बासुरी
किदारा और मालवा बिहागड़ा अउ गूजरी।।
मारू अउ परज और कानड़ा कलिआनि सुभ
कुंभक बिलावलु सुने ते आवै मूजरी।।
भैरव पलासी भीम दीपक सु गउरी नट
ठाढो द्रम छाइ मै सु गावै कान्ह पूजरी।।
ताते ग्रिह तिआगि ता की सुनि धुनि स्रोनन मै
म्रिग नैनी फिरत सु बन बन ऊजरी।।२३२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २८२

श्री कृष्ण जी अपने बाल ग्वालों के साथ सुन्दर-सुन्दर व क्षों के नीचे घूम रहे थे। सभी को जब बहुत ज़ोर की भूख लगी तो वे घर जाने के लिए आतुर हो उठे। श्री कृष्ण जी ने जैसे ही

उन व क्षों के नीचे बाँसुरी बजानी आरम्भ कर की तो एकाएक उनकी भूख दूर हो गई।

।।सवैया।। कान बजावत है मुरली
अति आनंद कै मन डेरन आए।।
ताल बजावत कूदत आवत
गोप सभो मिल मंगल गाए।।
आपन ह्वै धनठी भगवान
तिनो पहि ते बहु नाच नचाए।।
रैन परी तब आपन आपन
सोइ रहै ग्रिह आनंद पाए।।३३४।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २६६

जब श्री कृष्ण जी मुरली बजाते थे, सभी लोग बहुत ही प्रसन्नचित्त हो जाते और सारे ग्वाल बाल आपस में मिल कर तालियां बजाते थे। मंगल गीत गा-गाकर नाचते थे। श्री कृष्ण जी अपने बाल-ग्वालों को प्रेरणा देकर अपनी रूचि अनुसार तरह तरह के नाच नचाते थे। सब के सब अपने-अपने घर जाकर आनन्दित व प्रसन्नचित हो कर सोते थे।

श्री कृष्ण जी की मुरली के मधुर स्वर सुन-सुनकर हर कोई मोहित और प्रसन्न होता। गोपियाँ और श्री कृष्ण जी की मुरली का अटूट और गहन सम्बन्ध था। मुरली की धुन के साथ गोपियों के हृदयों की धड़कन तीव्र हो उठती थी।

जब गोपियों ने रस की बातें की तो श्री कृष्ण जी चुप रहे और मुरली पर काफ़ी राग बजाना शुरू कर दिया। श्री कृष्ण जी के कहने पर गोपियाँ घर जाने पर सहमत नहीं हुई, तो उस समय श्री कृष्ण जी अपने हाथों में मुरली लेकर सुर-ताल से बजाने लगे। उस सुर ने गोपियों की ऐसी हालत कर दी, जैसे कि गोपियों के घायल मन पर किसी ने नमक छिड़क दिया हो।

।।सवैया।। मुरली मुख कानह्र के तरुए
तर सयाम कहै बिधि खूब फकी।।

ब्रिज भामन आ पहुची दवरी
सुध हिया जु रही न कछू मुख की।।
मुख को पिख रूप के बसय भई
मत ह्वै अति ही कहि कानह्ब की।।
इक झूम परी इक गाइ उठी
तन मै इक ह्वै रहिगी सु जकी।।४४७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३११

श्री कृष्ण जी ने रास-लीला के समय राधा को न त्य करते हुए देखकर मन में अति सुख प्राप्त किया, फिर प्रेम और उत्साह के साथ मस्त होकर बाँसुरी बजाने लगे। गोपियों को भी राग का बहुत ज्ञान था, इस लिये श्री कृष्ण जी की बाँसुरी के साथ-साथ वे भी बहुत सुन्दर धुनों में गाती थीं। श्री कृष्ण जी के गायन पर गोपियाँ हिरनियों की भाँति मोहित हो जाती थीं। श्री कृष्ण जी बाँसुरी बजा कर उन्हे बुलाते। श्री कृष्ण जी बाँसुरी बजाते, तो उस की मीठी-मीठी ध्वनि को सुनकर गोपियाँ मन में प्रसन्न होतीं।

।।दोहरा।। क्रिशन मनै अति रीझ कै मुरली उठयो बजाइ।
रीझ रही सभ गोपीया महा प्रमुद मन पाइ।।६३७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३३७

बाँसुरी को सुनकर ब ज की गोपियाँ मोहित हो रही थीं। जो ब ज की स्त्री जहाँ कहीं भी खड़ी होती बाँसुरी की ध्वनि सुनते ही उस का हृदय धड़कने लगता और शरीर में झुन-झुनी शुरू हो जाती। बाँसुरी की धुन सुनते ही उनके शरीर में कोई सुध-बुध न रहती और ऐसे लगता जैसे पीछे उनका चित्र-मात्र ही रह गया हो।

गोपियों ने अपने मन में कोई शंका न की और वे बड़े प्रेम से श्री कृष्ण जी को निहार रही थीं। श्री कृष्ण जी के शरीर की चमक सोने के समान और मुख की आभा चंद्रमा के तुल्य थी। उनकी बाँसुरी की धुन सुन कर गोपियों का मन, उसी में विलीन हो जाता।

बाँसुरी की धुन सुनकर देवता, मनुष्य और गोपियाँ सभी अत्यन्त प्रसन्न हो रहे थे। वह जादूभरा सुर इस भाँति पैदा हुआ, जैसे भगवान ने इसमें फास रखकर चलाई हो। जैसे पुरातन समय में फास रखकर तीर चलाये जाते थे। श्री कृष्ण जी ने 'सुरों' में फास रखकर बजाना शुरू किया, जो भी उसे सुनता, वह उसमें ही फंसता चला जाता। जब राधा श्री कृष्ण जी से रूष्ट हो जाती, उस समय सखी ब्रजबाला राधा के पास पहुँच कर प्रेरित करती कि वह शीघ्र ही श्री कृष्ण जी के पास मान-अपमान की भावनाओं का त्याग कर के पहुँच जाये। जहाँ भी श्री कृष्ण जी बैठकर बाँसुरी बजाते, वहीं गोपियाँ एकत्र हो कर गातीं। ब जबाला ने राधा से विनती की कि श्री कृष्ण जी बहुत सुन्दर स्थान पर बैठकर बाँसुरी बजा रहे हैं और चन्द्रप्रभा बाँसुरी के साथ नाच रही है और राधा के बिना सभी सखियां श्री कृष्ण के साथ आनन्द लूट रही हैं।

ताही ते बाल बलाइ लिउ
तेरी मैं बेग चलो नंद लाल बुलावै।।
सयाम बजावत है मुरली जह
गव्ारनीया मिलि मंगल गावै।।
सोरठ सुध्ध मलार बिलावल
सयाम कहै नंद लाल रिझावै।।
अउर की बात कहा कहीये
सुर तयाग सभै सुर मंडल आवै।।६८६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३४४

ब्रजबाला उस पर से बलिहार जाती है और उसे श्री कृष्ण के पास पहुँचने के लिये विनती करती है। जहाँ भी श्री कृष्ण जी बाँसुरी बजाते थे, वहीं सब गोपियाँ मिलकर खुश होती और गीत गाती।

सखी की बातों का राधा पर कोई प्रभाव न पड़ा। राधा ने उत्तर दिया,''भले ही उस जैसी सैंकड़ों गोपियाँ कृष्ण जी भेज

दें, वह वहाँ नहीं जायेगी। यदि श्री कृष्ण जी बाँसुरी बजाते हैं, तो फिर क्या हो गया और यदि आप गीत गाती हो तो फिर भी क्या हुआ ? भले ही ब्रह्मा जी आकर, श्री कृष्ण का संदेश दें और भले ही श्री कृष्ण जी स्वयं उसे बुलाने आयें, वह नहीं जायेगी।'' एक बार फिर सखी ने राधा से कहा,''जहाँ काली धटाओं के रूप में बादल आते हैं, जहाँ चारों ओर मोर बोलते हैं, जहाँ गोपियाँ नाच रही हैं, वहाँ श्री कृष्ण जी बाँसुरी बजाते हैं, राधा जी को बुलाते हैं, स्मरण करते हैं, इस लिये उसे वहाँ शीघ्र जाना चाहिये। परन्तु इन सब बातों का राधा के मन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

गोपियाँ अपने पतियों को छोड़कर वैराग्य अवस्था में भी श्री कृष्ण जी की ओर इस तरह चल पड़ीं जैसे कोई पुरूष वैरागी होकर घर-परिवार एवम धन-दौलत त्याग कर चला जाता है। श्री कृष्ण जी की बाँसुरी की मधुर ध्वनि सुनकर हर कोई मोहित हो जाता है और प्रसन्न होता है। गोपियाँ भी बाँसुरी की ध्वनि पर अति मोहित होकर कहती हैं,''कृष्ण महाराज जी का मुख तो गुलाब का फूल है और बाँसुरी उससे सटी हुई है जिस में से राग स्वरूप रस निकलता है।''

बाँसुरी बाल-ग्वाल और गोपियों को तो मोहित करती ही थीं परन्तु यमुना भी उसकी मधुर ध्वनि से प्रभावित हुए बिना न रह सकी। यमुना नदी बाँसुरी पर मोहित होकर अपने सीधे बहाव के विपरीत बहने लगी। यमुना नदी के किनारे गोपियों के समूह में प्रसन्न होकर श्री कृष्ण जी बाँसुरी बजा रहे थे।

कानह् तबै हसि कै मुरली सु बजाइ
उठ्यो अपने कर लै कै।।
ठाढ भई जमना सुनि कै धुनि
पउन रहयो सुनि कै उरझै कै।।३३०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २६६

श्री कृष्ण जी की बजाई हुई बाँसुरी सुनकर सभी गोपियाँ

वहीं की वहीं मस्त हो जातीं। बाँसुरी की धुन सुन कर यमुना भी एक घड़ी भर के लिये बहना भूल गई, नदी का पानी बहना बंद हो गया और वायु भी रूक गई।

मालसिरी अरु जैतसिरी
सुभ सारंग बाजत है अरु गउरी।।
सोरठि सुध मलार बिलावल
मीठी है अंम्रित ते नह कउरी।।
कानह् बजावत है मुरली
सुन होत सुरी असुरी सभ बउरी।।
आइ गई ब्रिखभान सुता सुन
पै तरनी हरनी जिमु दउरी।।३०२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २६२

जब श्री कृष्ण जी ने बाँसुरी पर विभिन्न प्रकार के राग बजाये तो उनको सुनकर देव स्त्रियाँ स्वयं को भूलकर बावरी हो गईं और उस की मधुर ध्वनि सुनकर व षभान की सुपुत्री राधा भागती हुई वहाँ आ पहुँची। इस मधुर संगीत के स्वर सुनकर ब ज की स्त्रियाँ घरों के सभी कार्य छोड़कर बाहर इस प्रकार भागी चली आती थीं जैसे नाद की ध्वनि सुनकर हिरनी भागी चली आती है।

।।सवैया।। रामकली अरु सोरठि सारंग
मालसिरी अरु बाजत गउरी।।
जैतसिरी अरु गौंड मलह्ार
बिलावल राग बसै सुभ ठउरी।।
मानस की कह है गनती सुन
होत सुरी असुरी धुन बउरी।।
सो सुनि कै धुनि स्त्रउनन मै
तरनी हरनी जिम आवत दउरी।।३३१।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २६६

श्री कृष्ण जी की बाँसुरी के अलग-अलग रागों की सुरीली धुनों को सुनकर देव स्त्रियों और असुरों की स्त्रियों को अपने तन-बदन की सूझ तक न रहती। उनको बाँसुरी की ध्वनि में सभी रागों का मिश्रण अनुभव होता।

।।कबितु।। बाजत बसंत अरु भैरव हिंडोल राग
बाजत है ललता के साथ ह्वै धनासरी।।
मालवा कलयान अरु मालकउस मारू राग
बन मै बजावै कान मंगल निभासरी।।
सुरी अरु आसुरी अउ पंनगी जे हूती तहां
धुन के सुनत पै न रही सुध जासरी।।
कहै इउ दासरी सु अैसी बाजी बासुरी सु
मेरे जाने या मै सभ राग को निवासरी।।३३२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २९६

देवताओं की सुपुत्रियाँ बाँसुरी की मनोहर ध्वनि अपने कानों में सुनकर स्वर्ग का निवास छोड़कर भागती हुई ब ज की ओर आतीं। रूप और राग को देखकर वे प्रसन्नचित्त होकर कह उठती थी कि विधाता ने इस स्थान को रागों का ग ह बनाया है।

।।कबितु।। करुना निधान बेद कहत बखान या की
बीच तीन लोक फैल रही है सु बासुरी।।
देवन की कंनिआ ता की सुनि धुनि स्रउनन मै
धाई धाई आवै तजि कै सुरग बासुरी।।
ह्वै करि प्रसिंनय रूप राग कौ निहार कहयो
रचयो है बिधाता इह रागन को बासुरी।।
रीझे सभ गन उडगन भे मगन जब
बन उपवन मै बजाई कान बासुरी।।३३३।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २९६

बाँसुरी की ध्वनि और विभिन्न प्रकार के रागों को सुनकर ब ज की नारियां तो रीझ ही रही थीं, उसके साथ-साथ देवता भी प्रसन्न हो रहे थे। हर कोई कहता फिरता कि सारी इन्द्र सभा

अपने इन्द्र लोक को छोड़कर ब ज भूमि पर बाँसुरी का आनन्द उठाने के लिये आ पहुँची है।

श्री कृष्ण जी विभिन्न रागों को अलापने हेतु बाँसुरी की मधुर धुनों को बजाकर उसे और रंगमयी बना लेते थे। अलग-अलग रागों में सुन्दर ढंग से बजाई गई बाँसुरी को सुनकर धरती पर बसने वाले सारे लोग प्रसन्न हो रहे थे और देवताओं का राजा भी सुन-सुन कर मस्त हो रहा था।

सभी देवी-देवता बाँसुरी पर बज रहे मधुर रागों को सुनने के लिये एकत्रित हो गये। बाँसुरी की धुन सुन कर, देवलोक के निवासी भी पुरी को छोड़कर सभी सुर के ध्यान में रीझे हुए ब ज भूमि पर चले आये थे। और तो किसी का क्या कहना, सभी देवता, बाँसुरी सुनने के लिये ब ज भूमि के में पहुँच गये थे।

श्री कृष्ण जी और बलराम जी जखड्ड की म त्यु पर बहुत खुश हुए थे। श्री कृष्ण जी ने अपनी सफलता की प्रसन्नता को बाँसुरी के द्वारा व्यक्त किया और किसी प्रकार की शंका नहीं की। ऐसे प्रतीत हो रहा था जैसे श्री कृष्ण जी ने रणभूमि में राक्षसों को जीतने का डंका बजाया हो।

रूखन ते रस चूवन लाग
झरै झरना गिर ते सुखदाई।।
घास चुगै न म्रिगा बन के
खग रीझ रहे धुन जा सुन पाई।
देवगंधार बिलावल सारंग
की रिझ कै जिह तान बसाई।
देव सभै मिलि देखत कउतक
जउ मुरली नंद लाल बजाई।।६५०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३३६

बाँसुरी की सुरीली धुन जंगल में विचर रहे पशु-पक्षियों को भी अति प्रभावित करती। बाँसुरी की धुन सुनकर म ग मोहित हो जाते और पक्षी मोहित होकर अपने-अपने पंख पसार देते।

चील, तोते, हिरन और कामदेव भी श्री कृष्ण जी के स्वरूप को देखकर मतवाले होकर खड़े हो जाते। जंगल के पक्षी और म ग बाँसुरी की सुरीली ध्वनि सुनकर मोहित हो गये, सभी पत्थर की मूर्तियों का आकार धारण कर बैठे और श्री कृष्ण जी की बाँसुरी की धुन में सभी ध्यान मग्न हो गये।

श्री कृष्ण जी जब बाँसुरी बजाते थे, उसकी धुन सुनकर जंगल के पक्षी जंगल को सूना कर के श्री कृष्ण के पास चले आते। उसकी धुन सुनकर वन के पक्षी अपने शरीर की सुध-बुध भुला कर व क्षों पर अपने-अपने पंख पसारे रहते।

बाँसुरी की मधुर ध्वनि सुनकर बछड़े भी मोहित हो जाते। श्री कृष्ण जी जब भी बाँसुरी बजाते, उस पर सभी बलिहार जाते। श्री कृष्ण जी की बाँसुरी की मधुर धुन सुनकर नारद जी भी प्रसन्न होते थे।

सभी हर्षित हो रहे थे, सभी तारे मस्त हो रहे थे, वनों और बागों में बहार आ गई थी। जब भी श्री कृष्ण जी ने बाँसुरी बजाई, बाँसुरी की धुन सुनकर वन के पक्षी और हिरन मस्त होकर खड़े हो जाते और घास चरना तक भूल जाते।

बाँसुरी की अपनी तपस्या भी कोई कम नहीं थी। सबसे पहले इसके बाँस वंश में उत्पन्न होकर हरि का स्मरण किया। फिर धूप, जल और शीत काल को सहन किया। फिर टुकड़े होकर, जलकर धुआँ सहन किया। उसके उपरान्त अपने शरीर में छेद करवाए और फिर श्री भगवान कृष्ण जी के मधुर होठों का स्पर्श प्राप्त किया। बाँसुरी भी धन्य-धन्य हो गई क्योंकि वह श्री कृष्ण जी के अधरों का पान करती थी। ऐसे बाँसुरी की मधुर धुन ने व न्दावन की गलियों में विचर रहे प्राणी जीव, वन-उपवन, जीव-जन्तु, पशु-पक्षी, बाल-गोपाल, देवी-देवता, यक्ष, किन्नर, गंधर्व, अप्सरा, सुर-असुर, गोपियाँ और मुनि इत्यादि सबको मस्त किया और उन सभी ने अपने-अपने जीवन को सार्थक बनाया।

४

जेठ समै सखी तीर नदी
हम खेलत चित्त हुलास बढाई।
चंदन सो तन लीप सभै सु
गुलाबहि सो धरनी छिरकाई।
लाइ सुगंध भली कपरयो पर
ताकी प्रभा बरनी नही जाई।
तौन समै सुखदाइक थी
इह अउसर सयाम बिना दुख दाई।।८७०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६६

शब्दार्थ : तीर—नदी (यमुना) किनारे। लीप—चन्दन का लेप। गुलाबहि—गुलाब के इत्तत्र के साथ। छिरकाई—धरती पर छिड़क कर। कपरयो—वस्त्रों पर। प्रभा—शोभा, छवि, खूबसूरती और सजावट।

व्याख्या : गोपियों को वे दिन याद आते हैं, जब वे जेष्ठ मास में श्री कृष्ण जी के साथ यमुना नदी के किनारे आनन्द मग्न होकर खेलती थीं, उस समय श्री कृष्ण जी का साथ प्राप्त होने पर उन के हृदय कमल की भाँति खिले रहते थे, चित्त आनन्द से भरे रहते थे और अथाह ख़ुशियों के भण्डार उन्हें प्राप्त होते थे। उस समय गोपियों ने अपनी देह को चन्दन का लेप करके अति सुन्दर बनाया हुआ था। उन्होंने अपनी देह को तो सुन्दर बनाया ही हुआ था साथ-साथ उस सुगंधि से धरती भी दूर दूर तक सुगंधित हो रही थी। गोपियों ने जो वस्त्र पहने

हुए थे, उन पर भी बहुत बढ़िया सुगंधि लगाई हुई थी। इसी आधार पर समुचा वातावरण महक उठा था। गोपियों के शरीर से चन्दन की सुगंधि, धरती पर गुलाब का छिड़काव और वस्त्रों पर लगाई गई श्रेष्ठ सुंगधि का वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। वह सौंदर्य अवर्णनीय है। गोपियाँ उस का स्मरण करके विलाप करती हैं, उदासीन हो जाती हैं कि श्री कृष्ण जी के साथ आनंद से भरपूर व्यतीत किये हुए क्षण कितने मनमोहक थे और अब श्री कृष्ण के बिना सब कुछ दुःखदायक लग रहा है। मन को पीड़ित कर रहा है।

भाव : सारी गोपियाँ अपनी देह पर अनेक भाँति की सुगंधियों को लगा कर, चन्दन का लेप करके, धरती पर गुलाब जल का छिड़काव करके, नदी के तट पर क्रीड़ायें करके, प्रसन्नचित्त होकर सुख का अनुभव कर रही थीं।

ताकी प्रभा बरनी नही जाई

श्री कृष्ण जी और गोपियों के नाम पूर्णरूप से आपस में जुड़े हुये हैं। ये आपस में एक-दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। उनका परस्पर प्यार संपूर्ण था। भक्त परमानंद ने तो स्पष्ट शब्दों में यह कह दिया है कि यदि भारतीय संस्क ति में से गोपी प्रेम और श्रीमद् भागवत को निकाल दिया जाये तो इस की अध्यात्मिक सत्ता में बिल्कुल सूनापन आ जायेगा।

वास्तव में भारतीय अध्यात्मिक जीवन में जितनी व्यापकता श्री कृष्ण जी की है उतनी ही गोपियों की भी है, प्रेम साधना में तो गोपियों ने श्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया हुआ है। वे तो आदर्श प्रेम का एक अनूठा उदाहरण हैं, प्रेम के जितने भी रूपों की कल्पना की जा सकती है, उन सभी का आधार इन गोपियों का सच्चा प्रेम है। यह तो प्रेम भक्ति की साकार प्रतिमा हैं। पुराण साहित्य में भी गोपियों का वर्णन मिलता है। पुराणों में इनका वर्णन प्रतीकात्मक रूप में ही हुआ है।

पुराण साहित्य में गोपियों की सुन्दरता की व्याख्या करते हुए उन्हें दो भागों में बांटा गया है। नित्य-सिद्धा गोपियाँ और साधन-सिद्धा गोपियाँ। जो गोपियाँ अकाल पुरष की नित्त परमधाम में अभिन्न रूप से लीला में भाग लेती हैं वे नित्य सिद्धा गोपियाँ हैं और जिन्होंने श्री कृष्णावतार के समय ब ज में अवतार लेकर श्री कृष्ण जी की लीलाओं में हिस्सा लिया वे साधन सिद्धा हैं। साधन सिद्धा गोपियों का श्री कृष्ण जी के साथ विशेष प्रकार का सम्बन्ध माना गया हैं। इस सम्बन्ध से सम्बन्धित अनेक कथाएँ पुराणों में मिलती हैं, जिन में से कुछ को देवताओं की सुपुत्रियाँ, कुछ एक ऋषियों और मुनियों की, कुछ एक भक्त और कुछ एक को श्रुत्रियाँ कहा गया है। जो श्रुतियाँ गोपी रूप में ब ज में पैदा हुई, उनमें से उदगीता, सुगीता, कलगीता, कलकनिका और विपंची प्रमुख हैं। श्री कृष्णोपानिष्द में वर्णन आता है कि श्री रामचन्द्र जी के समय दंडकारणीय में रहने वाले ऋषि जब श्री रामचन्द्र जी की सुंदरता पर मुग्ध हो गये तो राम चन्द्र जी ने उन्हें गोपियों का रूप धारण करके जन्म लेने का वरदान दिया। पदम पुराण में ही उगर तथा सदयतमा, हरिधामा, सवर्ण आदि अनेक ऋषियों का वर्णन है जिन्होंने अपनी तपस्या के बल पर ब ज में गोपियों का स्वरूप धारण करके श्री कृष्ण जी की लीलाओं में भाग लिया। अन्य पुराणों की तुलना में श्रीमद् भागवत पुराण में गोपियों के सौंदर्य की अधिक विस्तार में व्याख्या की गई है। कथा को विस्तार देने में और गोपी प्रेम लीला को विस्त त रूप देने में श्रीमद् भागवत पुराण अद्वितीय है। इस पुराण में भी गोपियों को देवताओं का अवतार बताया गया है, जो श्री कृष्ण जी के मन–भावन कार्यों को पूरा करने के लिये जन्मी थीं। इस तथ्य का निर्णय श्री नारद जी के कंस को दिये हुए संकेत से पता चलता है। ''हे कंस ! ब ज में रहने वाले नंद, गोप, उनकी स्त्रियाँ, वासुदेव, देवकी, यादव वंश की स्त्रियाँ और उनके

संबन्धी जो भी इस समय तुम्हारी सेवा कर रहे हैं, वे भी सब देवता ही हैं।''

यद्यपि पुराणों में गोपियों के अलौकिक और प्रतीकात्मक स्वरूप की प्रमुखता है, फिर भी इनके लौकिक रूप का श्रीमद् भागवत पुराण मे अत्याधिक विस्तार से वर्णन किया गया है। वातसल्य भाव का भी पर्याप्त निरूपण किया गया है। जब राक्षसी पूतना ने श्री कृष्ण जी को मारने का प्रयास किया उस समय उनकी रक्षा करने के लिये सबसे पहले गोपियों ने ही श्री कृष्ण जी को वहाँ से उठाया था। उस समय श्री कृष्ण जी की आयु मात्र एक साल की थी।

श्री सुकदेव श्रीमद् भागवत पुराण में गोप-गोपियों आदि को देवताओं का ही स्वरूप बताते हुए राजा परीक्षित को कहते हैं, ''हे राजन ! जिस भाँति नट अपने नायक की प्रशंसा करते हैं, उसी भाँति देवता गण ग्वाल बालकों का स्वरूप धारण करके वहाँ आते हैं, उसी भाँति गोप जाति में जन्म लेकर छिपे हुए बलराम और श्री कृष्ण जी की प्रशंसा करते हैं।''

इन गोपियों के अतिरिक्त कुछ गोपियाँ ऐसी भी थीं जो अपने पूर्व जन्मों में देव कन्याएं, ऋषियों और भक्तों के रूप में थीं परन्तु उन्होंने श्री कृष्ण जी की लीलाओं का आनन्द प्राप्त करने के लिये उनके साथ ही जन्म लेने का वर ले लिया था। पदम पुराण में इस तरह की गोपियों का हवाला दिया गया है कि पंच दशाक्षर मंत्र का जाप करने वाले उगरतपा ऋषि सुनन्द नामक गोप की सुपुत्री सुकंदा के रूप में प्रकट हुए। दशाक्षर मंत्र का जाप करने वाले सत्यात्मा ऋषि सुभद्रा गोपी के रूप में रंग वेणी नाम के साथ उत्पन्न हुए। इसी भाँति जवाल ने चित्रगंधा और कुशध्वज आदि और भी अनेक ऋषियों तपस्वियों ने ब ज भूमि में जन्म धारण किया। पुराणों में गोपियों को श्रुति रूप माना गया है। उदगीता, सुगीता, कलगीता, कलसुरा, कलकनिका आदि गोपी रूपों में श्रुतियों का अर्विभूत हुआ। इसके अतिरिक्त

विपंची, कर्मपदा, बहुस्वरूपता, बहुकला, उप्रयोग, कलावती और क्रियावती आदि गोपियों का भी वर्णन है।

एक बार श्रुतियों ने हाथ जोड़कर विष्णु के चरणों में प्रार्थना की,''हे प्रभु ! आप सच्चिदानंद हैं, आप के नारायण रूप को तो हम ने देख लिया है परन्तु अभी तक निर्गुण रूप में दर्शन नहीं हुए जो मन, वाणी से अगम अगोचर है।'' उस समय उन्हे क पा करके विष्णु जी ने अपना वह स्वरूप व न्दावन में दिखाया। जब गोपियाँ विष्णु जी के इस स्वरूप को देखते देखते थक गईं, तो उस समय श्री विष्णु जी ने उनसे पूछा,''यदि तुम्हारी भी मेरे साथ चलने की इच्छा हो तो बताओ, मैं तुम्हे वर दे दूंगा।'' उस समय श्रुतियों ने यह वर मांगा कि वे गोपियों का रूप धारण करके उनके साथ क्रीड़ायें करना चाहती हैं। पूर्ण परमानन्द ने उनकी यह विनती तुरन्त स्वीकार कर ली। पुराणों में इन जैसी गोपियों की संख्या हज़ारों में बताई गई है। इन गोपियों में ललिता, धन्नया, विशाखा, पदमा, हरिप्रिय, जयमाला, चंदरावती, प्रिया, मधुमती आदि प्रधान गोपियाँ श्री कृष्ण जी की हर मन प्रिय कही जाती हैं। इन सभी में राधा का सर्वोत्तम स्थान है। वैष्णव आचार्यों ने इन गोपियों का विवेचन ब्रह्मा की शक्ति के रूप में किया है। उन्होंने ब्रह्मा की शक्ति के दो भेद स्वीकार किये हैं। बाह्य बहिरंग शक्ति और आन्तरिक शक्ति। माया ब्रह्मा की बाह्य शक्ति है। आंत्रिक शक्ति के तीन रूप हैं। अहलादिनी शक्ति जो सब से श्रेष्ठ है। राधा कृष्ण जी की अहलादिनी शक्ति है, जो अब से श्रेष्ठ है। शेष गोपियाँ राधा के ही अंग रूप हैं। सूरदास ने सारी गोपियों की गिनती सोलह हज़ार बताई है। वायुपुराण में गोपियों की गिनती भी सोलह हज़ार ही लिखी है।

गोपियाँ आत्माएँ हैं जिन पर माया का आवरण पड़ा हुआ है। जब तक आवरण का पर्दा उन पर पड़ा रहता है उतनी देर तक प्रभु से उनका मिलन नहीं हो सकता; जब प्रभु आत्मा पर क पा

करता है तब इस आवरण को नष्ट कर देता है और उसे मुक्ति का अधिकारी बना देता है। गोपी रूप आत्माओं का यह एक संपूर्ण शिखर है जहां आत्मा हर प्रकार से मुक्त होकर ब्रह्म लीलाओं के अलौकिक रस का आनन्द प्राप्त करती हैं। चीर हरण की लीला अध्यात्मिक पक्ष से आत्मा का नग्न होकर माया के सभी आवरणों, संस्कारों से अलग होकर, प्रभु से मिलना है। इसमें समर्पण की सम्पूर्णता है जिसमें अपना कुछ नहीं रहता, बल्कि सब कुछ अपने प्रभु के चरणों में समर्पित हो जाता है। गोपियों का श्री कृष्ण जी के साथ गहरा प्रेम था। इसी प्रेम की रक्षा के लिये वे बड़े से बड़ा त्याग करने के लिए सदैव तैयार रहती थीं।

गोपियों को दो भागों में बांटा जा सकता है। एक तो वे हैं जो अविवाहित हैं जिनका अब तक विवाह नहीं हुआ और वे श्री कृष्ण जी को अपने इष्ट के स्वरूप में स्वीकार करती हैं। और दूसरी वे हैं, जो विवाहित हैं, उन्हें भी धार्मिक, सामाजिक बन्धनों का कोई संकोच नहीं हैं, उन्हें अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के साथ अथाह प्रेम है। वे अपना घर-परिवार सब कुछ त्याग कर श्री कृष्ण जी के प्यार का आनन्द प्राप्त करने के लिये लालायित हो उठती हैं। श्री कृष्ण जी उनकी मनोकामनाएँ पूर्ण कर उन्हें त प्त और संतुष्ट करते थे।

राधा तो श्री कृष्ण जी की सबसे प्रिय और श्रेष्ठ गोपी है। वह व षभान की सुपुत्री श्री कृष्ण के बिना क्षणभर भी नहीं रह सकती। वह अपनी सभी सखियों सहित श्री कृष्ण जी के साथ रास-लीलाएँ करती है।

चंन्द्रमुखी गोपी, चंद्रभगा के साथ मिलकर, सुर में सुर मिलाकर मधुर गीत गाती है। जो भी उनके गीतों को सुनता, मंत्र-मुग्ध हो जाता।

।।सवैया।। भाग को भाल हरयो सुन गव्ारन
छीन लई मुख जोत ससी है।।

नैन मनो सर तीछन है
भिह्कुटी मनो जान कमान कसी है।
कोकिल बैन कपोत सो कंठ
कही हमरे मन जोऊ बसी है।।
एते पै चोर लयो हमरो चित
भामन दामन भांत लसी है।।६२७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३३६

इस भाँति श्री कृष्ण जी और गोपियों का परस्पर प्रेम प्यार रास लीलाओं, क्रीड़ाओं, आमोद-प्रमोद की प्रभा का वर्णन शब्दों से परे है।

सुन्दर श्याम

५

पउन प्रचंड चलै जिह अउसर
अउर बघूलन धूर उडाई।
धूप लगै जिह मास बुरी सु
लगै सुखदाइक सीतल जाई।
सयाम के संग सभै हम खेलत
सीतल पाटकका बि छटाई।
तउन समै सुखदाइक थी रित
अउसर याहि भई दुखदाई।।८७१।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६९

शब्दार्थ : पउन—हवा, तेज चलती है। बघूलन—चक्रवात, बवण्डर। मास—जिस महीने में। सीतल जाई—ठण्डे स्थान। पाटकका—फुव्हारा, चश्मा। बि—में। छटाई—छींटे।

व्याख्या : गोपियों को आषाढ़ के महीने का वह समय याद आता है, जब बड़ी तीव्र आंधी चलती थी। आंधी चलने के साथ सारे वातावरण में धुंधलापन छा जाता और चक्रवात धूल, मिट्टी उड़ती। जब सूर्य की किरणें खूब गर्म होती थीं, लू की तपन को सहन करना बड़ा मुश्किल होता था। ऐसे महीने में उस तपन और लू को दूर करने के लिये ठण्डी जगह अच्छी लगती थी। ठण्डक, तपन को खत्म कर देती। ऐसे मौसम में गोपियों को याद आता वो क्षण जब वे सब श्री कृष्ण जी के साथ मिलकर ठण्डी जगहों पर जाती थीं, जहाँ पानी के फुव्हारे और चश्में बहते थे, उनकी दूर-दूर तक जाती छींटो की ठण्डी

फुहार में गोपियों को श्री कृष्ण जी के साथ खेलना अति सुखदायक लगता। ठण्डे पानी की छींटे तपन को दूर करके शीतलता प्रदान करतीं, परन्तु सबसे अधिक शीतलता श्री कृष्ण जी का दर्शन प्रदान करता और अब जब श्री कृष्ण जी गोपियों को छोड़कर मथुरा चले गये हैं, ये सभी कुछ अत्यन्त दुखदाई बन गया है।

भाव : सारी गोपियाँ अपने आपको इस तीव्र तपन से बचाने के लिये, श्री कृष्ण जी के साथ ठण्डे चश्मों में से पानी की छींटे भरकर क्रीड़ायें करके सुख का अनुभव करती थीं।

पउन प्रचंड चलै जिह अउसर

जब जब मीरा को यातना, अत्याचार, कष्ट, पीड़ा का सामना करना पड़ा, उनके जीवन में तूफान और तेज़ हवा के झौंकों ने आकर खलबली मचाने की कोशिश की, उनके परिवार जनों ने उन्हें हर कदम पर तंग करने के प्रयत्न किये, उनकी सास ने जबरदस्ती उनसे देवपूजा और गौरी पूजा कराने का प्रयत्न किया, उनके देवर विक्रमजीत ने अम त के नाम पर विष का प्याला भेजा, पिटारी में नागिन भेजकर उनके जीवन का अन्त करना चाहा। ऐसे समय पर मीरा बाई अपने प्यारे प्रभु गिरधर गोपाल की ओट लेती, तो उनके दुःखदायक क्षण सुखदायक बन जाते और वह प्रचंड पवन के किसी भी झोंके की ओर ध्यान ना देते हुए अपने प्रभु प्रीतम गिरधर गोपाल की प्रशंसा में गीत गाकर उनकी याद में मस्त होकर अपने जीवन के क्षणों को सुखमय और सार्थक बना लेती।

मीरा बाई श्री कृष्ण जी के चरण कमलों से बहुत प्यार करती थीं। वह उन्हें सर्वदा अपने अंग-संग समझती और श्री कृष्ण जी ही मीरा बाई के जीवन आधार, पारब्रह्म परमेश्वर, प्रभु, कृपालु, दयालु परमात्मा सभी कुछ थे। इसीलिये मीरा बाई को श्री कृष्ण जी के भक्तों की अर्गणिय पंक्ति में खड़े होने का सौभाग्य प्राप्त

है। यह भक्त शिरोमणि, श्याम सुन्दर के गुणों की महिमा करती थी। इसीलिये इस प्रभु की महिमा को पढ़कर आज लाखों लोगों के हृदयों में प्रभु के साथ प्रेम उत्पन्न होता है। इनके रचे हुये भजनों, गीतों का गायन करके अनेक नर-नारियाँ आज भी प्रभु के नाम स्मरण में ध्यान मग्न होकर, इस भवसागर से पार उतरकर अपना जन्म सार्थक करते हैं। मीरा बाई के नाम ने सारे भारत की नारियों के मस्तिष्क को ऊंचा कर दिया है।

श्री कृष्ण जी को इष्ट मानने वाली मीरा बाई का जन्म मारवाड़ के कुड़की नामक गाँव में १५५८ के आस-पास हुआ। मीरा के पिता श्री रता सिंह जी राठौर थे। वह अपने माता-पिता की इकलौती लाड़ली संतान थी। इसलिये उनके माता-पिता ने उनका पालन-पोषण बड़े लाड़-प्यार और चाव से किया। मीरा को बचपन से ही प्रभु भक्ति की लगन थी। एक दिन एक ऋषि इनके घर पधारे। उनके पास भगवान श्री कृष्ण जी की एक बहुत अनूठी मूर्ति थी। मीरा उस मूर्ति को देखकर बहुत प्रभावित हुई। उनको प्रतीत हुआ कि जैसे उनको अपने प्रिय इष्ट का साक्षात्कार हो गया हो। मीरा ने महात्मा से उस मूर्ति के संदर्भ में पूछताछ की तो महात्मा जी ने बताया यह मूर्ति भगवान श्री कृष्ण जी की है और इनका नाम श्री गिरधर गोपाल है। मीरा के बहुत आग्रह करने पर महात्मा जी ने वह मूर्ति मीरा को दे दी और नित्यकर्म से उसकी पूजा करने के लिये कहा।

मीरा की आयु उस वक्त १० वर्ष की थी। वह हर रोज उस मूर्ति को स्नान करवाती, पुष्प चढ़ाती, भोग लगाती और आरती उतारती। उसने श्री कृष्ण जी की महिमा में लिखा हुआ सूरदास जी का एक पद कण्ठ कर लिया था। वह सारा दिन उसी का गायन करती रहती और गाती-गाती बेसुध हो जाती। अब वह स्वयं भी श्री कृष्ण जी की महिमा में पद लिखने लगी और उनको गाती रहती, जो कि मीरा के हृदय के भावों और उद्‌गारों से ओत प्रोत थे। युवा अवस्था में पैर रखते ही सवंत्

१५७३ में मीरा का विवाह चित्तौड़ के महाराणा सांगा जी के ज्येष्ठ पुत्र भोजराज से हुआ। उस समय एक आश्चर्यजनक घटना घटी। जो मंडप मीरा के विवाह के लिये बनाया गया था उसी मंडप में मीरा ने श्री कृष्ण जी की मूर्ति का श्रंगार करके रख दिया। जब उन्होंने भोजराज के साथ फेरे लिये, साथ ही श्री कृष्ण जी की मूर्ति के साथ भी फेरे लिये ले और मन में यह धारण कर लिया कि उनका विवाह श्याम सुन्दर श्री कृष्ण जी के साथ हुआ है।

माता-पिता ने विवाह में खूब दहेज दिया। घर में हर प्रकार का सुख होने के पश्चात् भी मीरा का मन सदैव उदास रहता। कारण पूछने पर मीरा ने अपनी माता को कहा :—

देहरी माई अब हमां को गिरधरलाल।
पिआरे चरन की आन करति हउ,
और ना दे मणि लाल।

उसको अपने प्रीतम के अतिरिक्त और किसी वस्तु की आवश्यकता ही कहां थी। मीरा की माता ने बड़े प्रेम सहित श्री गिरधर जी का सिंहासन पालकी में रखवा दिया। ससुराल में लोग सुन्दरी मीरा को देखकर अत्यंत प्रसंन हुए। नई दुल्हन मीरा से, सास ने देव पूजा करने के लिये कहा परन्तु मीरा के लिये तो केवल गिरधर गोपाल ही पूजने योग्य थे। उन्हें सास से देव पूजा ना करने पर अपशब्द सुनने पड़े। इसके बाद मीरा को गौरी पूजन के लिये विवश किया गया, इस पर भी मीरा ने इन्कार करते हुए कहा—उनके पूजने योग्य तो केवल गिरधर गोपाल ही है, दूसरा और कोई नहीं।

मीरा के पति भोजराज को पहले तो यह सब अच्छा ना लगा परन्तु फिर मीरा के हृदय की सच्चाई और सरलता देखकर उनके लिये एक सुन्दर मन्दिर बनवा दिया। भोजराज बड़े साहसी, वीर और साहित्य प्रेमी थे। मीरा की लिखी कविताएँ

सुनकर अति प्रसन्न होते और उन पर गर्व करते। मीरा सदैव अपना पति गिरधर जी को ही मानती परन्तु अपने सांसारिक पति को कभी रूष्ट ना होने देती। वह अपना समय भजन-कीर्तन करते हुए साधुओं की संगति में व्यतीत करती। कभी विरह की तीव्र अग्नि उन्हें रूला देती, कभी ध्यान मग्न होकर अत्यंत प्रसन्न होती। श्री कृष्ण जी के प्रेम में आनन्द विभोर होकर उन्हें खाने-पीने की भी सुध-बुध ना रहती जिसके कारण उनका शरीर दिन-प्रतिदिन शिथिल होने लगा उनकी इस अवस्था को देखकर घर वालों ने बहुत से वैद्य और हकीम बुलाये परन्तु मीरा ने कहा :—

हे री मैं तो प्रेम दीवानी मेरो दरद ना जाने कोइ।
सूली ऊपर सेज हमारी, किस बिध सोना हेये।

परन्तु ऐसे अलौकिक प्रेम दीवानों की दवा सांसारिक हकीमों के पास कहां। मीरा ने तो अपना सर्वस्व ही श्री कृष्ण जी के चरणों में अर्पित किया हुआ था। इसीलिये वह कहती,

गोविंद लीनो मोल, माई मैं, गोविंद लीनो मोल ।
कोई कहे सस्तो, कोई कहै महंगो, लीनहु तराजू तोल।
कोई कहै घर मैं, कोई कहै वन मैं,
राधा के संग कलोल
मीरा के प्रभु गिरधर आवत प्रेम के मोल।

मीरा का मन तो श्री कृष्ण जी के चरण-कमलों का भ्रमर बन चुका था। उसको अन्य वस्तु आकर्षित कैसे कर सकती थी। उसने तो श्री कृष्ण जी के प्रेम का रसास्वादन कर लिया था फिर भला सांसारिक रस उन्हें कैसे भाते।

संवत् १५८३ में भोजराज का देहांत हो गया और मीरा के देवर विक्रमजीत ने राज्य का कार्यभार संभाला। मीरा का साधु संतों से मेल मिलाप बढ़ने लगा। विक्रमजीत को मीरा का रहन-सहन, हर समय साधु संतों के संग भजन कीर्तन करना अच्छा ना लगता। उन्होंने मीरा को समझाने के बहुत प्रयत्न

किये कि वह साधु संतों का संग त्याग दें परन्तु सब निष्फल। मीरा का अपने गिरधर गोपाल के चरणों में द ढ़ विश्वास था। अन्त में राणा जी ने मीरा को चरणाम त के बहाने विष का प्याला भेजा। भगवान का चरणाम त समझ कर मीरा ने उस विष को एक ही घूँट में पी लिया। भगवान को अपने भक्त की लाज तो रखनी ही थी। विष अम त हो गया। मीरा का बाल भी बांका न हुआ।

इस घटना ने सबको चकित कर दिया। मीरा सारा दिन अपने गिरधर गोपाल की याद में नाचती गाती रहती। रात को मन्दिर के किवाड़ बंद करके मीरा श्री कृष्ण जी के आगे निःसंकोच भाव से नाचती। कई बार तो ऐसा प्रतीत होता कि भगवान श्री कृष्ण जी भी मीरा के साथ साक्षात् रूप में वार्तालाप कर रहे हों। मीरा को भी अपने गिरधर गोपाल के दर्शनों की लालसा हर समय बनी रहती।

दरस बिन दूखत लागे नैन,
जब ते तुम बिछुरे मेरे प्रभु जी,
कब्हुं ना पायो चैन!
शब्द सुनत मेरी छतिया कंपै, मीठे लागै बैन।
इक टकटकी पंथ निहारूं, भई छे मासी रैण।
बिरह बिथा का सूं कहूं सजनी, वह गई करवत नैण।
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे, दुख मेटन सुख देण।

कुछ लोगों ने जाकर राणा जी से शिकायत की कि मीरा रात भर किसी से बातें करती रहती है, अवश्य ही उसे मिलने के लिये रात को कोई वहाँ आता है। उसी समय राणा जी क्रोधित होकर हाथ में तलवार लिये मीरा के महल में आ धमके। उन्हें भी भीतर से बातों की आवाज़ सुनाई दी। किवाड़ खुलवाये गये। मीरा से पूछा गया भीतर कौन था? उत्तर में मीरा ने कहा उनके गिरधर गोपाल के अतिरिक्त और दूसरा कौन हो सकता है। सारे संसार में उस छैल छबीले गिरधर के सिवाय

और कोई वहाँ आ ही नहीं सकता। मीरा ने अपने प्रियतम की महिमा का गायन किया।

बसो मेरे नैनन में नन्द–लाल।।
मोहनी मूरत सांवरी सुरति, नैना बने विशाल।।
अधर सुधा रस मुरली राजत, उर वैजंती माल।।
छूदर घंटिका कटि–तट सोभित, नूपूर शब्द रसाल।।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई, भगत वछल गोपाल।।

राणा जी अति लज्जित हुये और लौट गये। एक दिन एक पाखंडी साधु ने मीरा को आकर कहा,''मुझे गिरधर गोपाल ने आपके पास अंग-संग करने के लिये भेजा है।'' मीरा ने उनकी सेवा में एक सुन्दर शय्या लगा दी और कहा,''आओ महाराज ! अंग संग करो।'' इस पर वह पाखंडी साधु बोला–स्त्री पुरूष का संग सबके सामने कैसे संभव है। मीरा ने उत्तर दिया–महाराज ऐसा कौन सा स्थान है जहाँ मेरे गिरधर गोपाल नहीं विराजते। मैं तो जिधर भी देखती हूँ वहीं वह द ष्टिगोचर होते हैं। फिर इस शरीर में तो अनेक देवताओं का निवास है। चाँद, सूरज, तारागण हमारे कर्मों के साक्षी हैं। यमराज के दूत चित्रगुप्त तो सदैव ही हमारे अंग संग रहते हैं। जब इतने लोग देख रहे हैं तो फिर साधु मण्डली से कैसी लाज ? मीरा के चरणों पर गिरकर पाखंडी साधु ने क्षमा याचना की।

राम रस पीजै मनुआ, राम राम रस पीजै।
तज कुसंग सतसंग बैठ नित, हरि चरचा सुण लीजै।
काम करोध मद लोभ मोह कूं, बहा चित से दीजै।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, ताहिके रंग मैं भीजै।

राणा जी मीरा की किसी भी बात से प्रसंन नहीं थे। इसलिये उन्हें मारने के लिये एक विषैली नागिन पिटारी में डालकर मीरा जी को भेजी और कहा कि मीरा को सालगराम की एक मूर्ति भेंट की है। मीरा ने बड़ी प्रसन्नता से उस पिटारी को खोला तो काली नागिन के स्थान पर श्री सालगराम जी की सुन्दर मूर्ति

और एक फूलों का सुन्दर हार था। अपने प्रभु के दर्शन करके मीरा नाच उठी। अन्त में मीरा ने राजमहल त्यागकर व ंदावन जाने का निर्णय कर लिया।

श्री कृष्ण जी के प्रेम में मग्न हुई मीरा हर समय विरह के गीत गाती रहती और गिरधर गोपाल भी उसकी भक्ति पर प्रसन्न होकर दर्शन देते रहते। मीरा अपने प्यारे गिरधर गोपाल की सुन्दरता का वर्णन करती हैं।

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई।।
जाके सिर मोर मुकट मेरो पति सोई।।
तात, मात, भगत, बंधू अपनो ना कोई।
छाड़ दई कुल की काण का करि हैं कोई।
संतन ढिग बैठि बैठि लोक लाज खोई।

कुछ समय व ंदावन में रहकर मीरा द्वारका चले गये, वहाँ भी हर समय भजन कीर्तन करती रहती। १६०२ में मीरा जी ने अपने गिरधर के गीतों का गायन करते-करते शरीर त्याग दिया।

मीरा को निज लीन किया, नागर नंद किशोर।।
जग प्रतीत हित–नाथ–सुख रहयो चुनरी छोर।।

६

।।सवैया।। जोर घटा घन आए जहां सखी
बूंदन मेघ भली छबि पाई।
बोलत चात्रिक दादर अउ घन
मोरन पै घनघोर लगाई।
ताही समै हम कान्हर के संग
खेलत थी अति प्रेम बढ़ाई।
तउन समै सुखदाइक थी रित
अउसर याहि भई दुखदाई।।८७२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७०

शब्दार्थ : जोर—बहुत, अधिक। घटा घन—घने बादल। चात्रिक—पपीहा। दादर—मेंढ़क। घनघोर—मेघ जैसी गर्जना।

व्याख्या : गोपियों को श्रावन मास में उस समय की याद तड़पाती है जब आकाश बड़े-बड़े, काले-काले बादलों की घटाओं की चुनरी ओड़ लेता था, उन घटाओं में से रिमझिम-रिमझिम करती पानी की बूंदे आकाश से टपकती थीं, वे अति सुन्दर और मनमोहक लगती थी। ऐसे समय एक ओर तो चात्रिक अपने प्रियतम के दर्शनों की चाह में विलाप करता था और दूसरी और मेंढ़क अपनी ध्वनि में शोर मचाते थे, इसके साथ घने काले बादलों की गर्जना और मोरों ने भी अपनी कुहू-कुहू की रट लगाई होती थी। ऐसे रमणीक वातावरण में सब गोपियाँ अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के साथ अपने हृदयों में प्रेम को संजो कर रस भरी क्रीड़ाएँ करती थीं। कितने प्रेम से खेल खेलती थी, उनके हृदयों में प्रसन्नता का समुद्र उछाले मारता था,

कितना सुखदायक था वह क्षण, कितना सुहावना था वह मौसम और अब उससे विपरीत जब गोपियों को श्री कृष्ण जी का संग प्राप्त नहीं, उनका साथ छूट गया है, अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के बिना अब गोपियों को गहरे दुःख का अनुभव हो रहा है, सुख नहीं मिलता, शांति प्राप्त नहीं होती और श्री कृष्ण जी के बिना सब कुछ शून्य लगता है।

भाव : बादलों की उमड़ती हुई घटाओं को देखकर, चात्रिक, मेंढ़क, मोर इत्यादि अपनी-अपनी ध्वनियों के द्वारा प्रसन्नता का प्रदर्शन कर रहे थे। ऐसे प्राक तिक सुन्दरता से भरपूर वातावरण में गोपियाँ भी श्री कृष्ण जी के साथ प्रेम क्रीड़ाएँ करके आनंद विभोर होती थीं।

कानह्र के संग खेलत थी

व ंदावन में रहते व षभान की सुपुत्री का नाम राधिका था। उसका श्री कृष्ण जी के चरणों से गहरा प्रेम था। यदि यह कह दिया जाये कि वह श्री कृष्ण जी के शरीर का एक अटूट अंग थीं तो कोई अकथनीय नहीं। श्री कृष्ण जी उसके जीवन, प्राण आधार, सखा, मीत, बंधु, साजन सभी कुछ थे। वह श्री कृष्ण जी के साथ अनेक प्रकार की रास लीलाएँ करतीं और कई प्रकार के खेल खेलकर पुलकित और हर्षित होतीं।

जब भी राधा को श्री कृष्ण जी की रास लीला का पता चलता, वह भाग कर श्री कृष्ण जी के पास आ जाती। राधा अत्यंत सुन्दर थी। उसका चेहरा पूर्णिमा के चांद के समान था और उनके शरीर की चमक-दमक सोने के समान थी। अनेक कवियों ने राधा की सुन्दरता का वर्णन करने के प्रयास किये परंतु उसकी सुन्दरता अवर्णनीय है। राधा भरी युवा अवस्था में थी। सुन्दरता में कोई उनका सानी नहीं था। वह रंभा, उर्वशी, इत्यादि अप्सराओं से भी सुन्दर थी, शची और मंदोदरी भी उनके सामने सुन्दर नहीं थी ऐसी सुन्दरी तो पूरे संसार में कहीं नहीं थी।

सारी गोपियों में से राधिका अति सुन्दर थी, सारी गोपियाँ यदि काली घटायें हो तो राधा उन सब में दामिनी रूप होकर प्रकाशित होती थी। राधा को देखकर ब्रह्मा जी प्रसन्न होते और शिवजी की समाधि भंग हो जाती। उसको देखकर रती मोहित हो जाती और रति के पति कामदेव के मन में से अपने सुन्दर होने का अहंकार टूट जाता। सुन्दरता भी राधा की सुन्दरता को देखकर लज्जित होकर सर झुका लेती। आँखों की तुलना कमल से की जाती है परन्तु राधा की तो आँखें ही कमल थीं। उसकी प्रभा के सामने चांद की चांदनी भी लज्जित होती। वह तो सारी स्त्रियों में राजा स्त्री मानी गई है। राधा की सुन्दरता के समान घ्रिताची अप्सरा भी नहीं है। काम की स्त्री रति भी राधा के सामने सुन्दर नहीं थी। इंद्र की पत्नी शची भी राधा की समानता नहीं कर सकती थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे ब्रह्मा ने चांद का सारा भाग लेकर उसकी सारी सुन्दरता राधा में भर दी हो और श्री कृष्ण जी के लिये एक बहुत ही विचित्र चित्रकारी वाली मूर्ति बना दी हो।

एक तो राधा अति अनूप और सुन्दर थी और ऊपर से वह बहुत ही सुन्दर ढंग से सुसज्जित होती थी। राधा श्वेत साड़ी पहनकर और भी सुन्दर प्रतीत होती। म ग जैसे नयनों में काजल लगा लिया और सुन्दर आभूषणों से अपना श ंगार कर लिया। कोयल के स्वरों को राधा ने चुरा लिया। राधा की शान निराली थी, और ऐसे हार श ंगार कर के, सुसज्जित होकर, सुन्दर स्वरूप वाली राधा अपने प्रिय कान्हा के संग रास लीला करती थी। राधा और गोपियों से मिलकर कृष्ण जी के साथ तरह-तरह के खेलें खेलती क्योंकि श्री कृष्ण जी के लिये ही गोपियों ने लोगों के हास-परिहास सहन किये थे। दूसरी ओर श्री कृष्ण जी के सुन्दर मुख मण्डल पर राधा अत्यंत मोहित थी।

सोवत थी जनु लाज की नीद मै
लाज की नीद तजी अब जागी।।

जा को मुनी नहि अंत लहै इह
ताही सो खेल करै बडभागी।।५५३।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३२६

राधा अत्यंत भाग्यशाली थी, जिसे श्री कृष्ण जो के साथ खेलने का अवसर प्राप्त हुआ। श्री कृष्ण जी ने हंसते हुए कहा।

खेलहु गावहु प्रेम सो सुन सम कंचन गात।।५५४।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३२६

एक तरफ तो राधा अपने श्याम सुन्दर के साथ खेलें करती और दूसरी तरफ खेलों के साथ अपनी सुन्दर मधुर धुनों के द्वारा गीत गाकर वातावरण और भी सुहावना बना देती। चांद की चांदनी में जब श्री कृष्ण जी ने रास रचाई तो उस समय राधा का सुन्दर मुख मण्डल देखकर उनका मन उसी में रम गया। राधा ने कृष्ण जी के मन को जैसे चुरा लिया था। राधा सुन्दर श ंगार करके श्री कृष्ण जी के साथ ऐसे खेल रही थी जिस तरह माला में मणि सुशोभित हो रही हो, उसी तरह ही स्त्रियाँ और राजा रूप राधिका सुशोभित हो रही है। महा सुन्दर श्री कृष्ण जी के मुख मण्डल को देखकर राधा अत्यंत प्रसन्न होती, श्री कृष्ण जी यमुना नदी के किनारे बैठे हुए थे, पास ही फूलों वाला वन सुशोभित हो रहा था।

।।सवैया।। ब्रिखभान सुता संग खेलन की
हसि कै हरि सुंदर बात कहै।।
सुन ए जिह के मन आनंद बाढत
जा सुन कै सभ सोक दहै।।
तिह कउतक कौ मन गोपिन को
कबि सयाम कहै दिखबो ई चहै।।
नभि मै पिखि कै सुर गंधर्ब जाइ
चलयो नही जाइ सु रीझ रहै।।५८२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३३०

राधा अपनी सखियों का समूह साथ लेकर और मन में अति

प्रसन्न होकर श्री कृष्ण जी के साथ मिलकर नाचती खेलती एवं गाती थी। राधा रास खेल में व्याकुल होकर श्री कृष्ण जी के साथ आमोद-प्रमोद करती। खेलने के लिये श्री कृष्ण जी ने महा सुन्दर मूर्ति की तरह ही गोपियों की सभा बनाई जिसमें और भी सारी गोपियाँ तारों के समान थी और राधा उन सबमें चन्द्रमा के समान थी। श्री कृष्ण जी की आज्ञानुसार राधा खेलने लगी। सुन्दर स्त्रियों को आपस में हाथ पकड़कर गोल चक्र में होकर जाते देखकर श्री कृष्ण ने अपने मन में बहुत आनन्द प्राप्त किया। सारी गोपियों के समूह में राधा श्री कृष्ण जी को प्रसन्न करने के लिये गाती। घने बादलों में दामिनी के चमकने की तरह प्रेम रंग में रंगी राधिका नाचते हुए इस तरह प्रतीत होती जैसे चैत्र की ऋतु में कोयल अपने मन में आनन्द प्राप्त करके वन में कूक रही हो। जो भी बात श्री कृष्ण जी सोचते, राधा उसे स्वयं जान लेती।

श्री कृष्ण जी ने कुंज गलियों में छूने-छुहाने का खेल प्रारंभ किया।

।।सवैया।। कानह् छुहयो चहै गव्ारनि कौ
सोऊ भाग चलै नही देत छुहाई।।
जिऊ म्रिगनी अपने पति को
रति केल समे नही देत मिलाई।।
कुंजन भीतर तीर नदी
ब्रिखभान सुता सु फिरै तह धाई।।
ठउर तहा कबि सयाम कहै
इह भांत सो सयाम जू खेल मचाई।।६५८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३४०

राधा कुंज गलियों में नदी के तट पर भागती फिर रही थी, कृष्ण जी ने इस तरह की रास रचाई हुई थी कि राधा को नयनों के वाणों से घायल कर लिया था मानों भौहों की कमान चढ़ाकर शिकार मारा हो। राधा धरती पर झूमते हुए इस प्रकार

गिर पडी जैसे शिकारी ने हिरनी को वाण मारकर गिरा दिया हो। श्री कृष्ण जी की लीला में खेलते-खेलते राधा जी ने कृष्ण जी के आगे भागना शुरू कर दिया। महा रसिये श्री कृष्ण जी राधा के पीछे भागे। ऐसे प्रतीत होता था जैसे श्री कृष्ण जी राधा को दूर तक भगा-भगाकर पराजित करना चाहते हों।

सुन्दर मन वाली राधिका श्री कृष्ण जी के प्रेम में मस्त हो रही थी और बावरी होकर श्री कृष्ण जी को ढूंढ रही थी। श्री कृष्ण जी निःसंकोच भाव से राधा के साथ अठखेलियाँ और क्रीड़ाएँ उस स्थान पर करते जहाँ चांद की चांदनी फैल रही थी; जहाँ चमेली के फूल पत्तों का बिछौना बिछा हुआ था; जहाँ सफेद फूल सुशोभित हो रहे थे; जहाँ पास ही यमुना नदी हंस जैसी चाल में बह रही थी। राधा ने जब श्री कृष्ण जी को चंद्रप्रभा के साथ नाचते हुये देखा तो उनके मन में यह विश्वास हो गया कि अब श्री कृष्ण जी राधा को प्यार नहीं करते। यह सोचते ही राधा की सारी प्रसन्नता शोक में बदल गई। उसे लगा कि सारी गोपियाँ उससे अधिक सुन्दर हैं।

कहि कै इह भांत सोऊ तब ही
अपने मन मै इह बात बिचारी।।
प्रीत करी हरि आनहि सो
तजि खेल सभै उठि धाम सिधारी।।
ऐस करी गनती मन मै
उपमा तिह की कबि सयाम उचारी।।
त्रीयन बीच चलैगी कथा
ब्रिखभान सुता ब्रिज नाथ बिसारी।।६७६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३४२

इस तरह श्री कृष्ण जी और राधा आपस में प्रेम से खेल क्रीड़ाएँ, रास लीलाएँ करते। आपस में रूठने और मनाने का यह सिलसिला कुंज गलियों में चलता रहा।

७

मेघ परै कबहूं उघरै सखी
छाइ लगै द्रमु की सुखदाई।
सयाम के संग फिरै सजनी
रंग फूलन के हम बसत्र बनाई।
खेलत क्रीड़ करै रस की
इस अउसर कउ बरनयो नही जाई।
सयाम समै सुखदाइक थी रित
सयाम बिना अति भी दुखदाई।।८७३।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७०

शब्दार्थ : मेघ—बादल। उघरै—धूप खिल जाती है। द्रमु—व क्षों की। क्रीड़—खेल। समै—कृष्ण जी के साथ होते हुये।

व्याख्या : गोपियों को उन दिनों की याद तड़पाती है जब भादों के महीने में कभी बादल छट जाते थे और आकाश बिल्कुल स्वच्छ हो जाता था। उस समय व क्षों की छाया बहुत ही सुखदायक लगती थी। उस समय सारी गोपियाँ श्री कृष्ण जी के साथ-साथ घूमती फिरती थीं और उन्होंने फूलों के रंगों के वस्त्र बनाये होते थे। जब गोपियाँ श्री कृष्ण जी के साथ खेलती हुई प्रेम रस की क्रीड़ाएँ करती थीं, उस समय का वर्णन किया ही नहीं जा सकता अर्थात् संयोग के समय में वियोग की बात करनी अच्छी नहीं लगती थीं। उस समय श्री कृष्ण जी का साथ होने के कारण हर वस्तु बहुत सुन्दर और सुखदायक लगती थी। उस समय के खिले हुये फूल, फूलों के रंगों के

अनुसार पहने हुये वस्त्र और श्री कृष्ण जी के साथ की हुई रास क्रीड़ाएँ करके वह समय बड़ा ही सुखदायक लगता था और अब श्री कृष्ण जी के बिना गोपियों को सब कुछ दुखदायक और असहनीय लग रहा है।

भाव : गोपियाँ अपने तन पर फूलों के रंगों के वस्त्र पहनकर वर्षा में श्री कृष्ण जी के साथ प्रेम रस की क्रीड़ाएँ करती थीं। वह क्षण गोपियों के लिये अत्यंत सुखदायक था।

इस अउसर कऊ बरनयो नही जाई

श्री कृष्ण जी के बाल रूप का वर्णन अनेक कवियों ने करने का प्रयास किया है परन्तु जिस प्रकार से उनकी बाल लीलाओं, बाल क्रीड़ाओं का वर्णन सूरदास ने किया है वह साहित्यक जगत में अद्वितीय है। पुराणों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि श्री कृष्ण जी के बचपन का वर्णन उनमें बहुत विस्तार में किया गया है परन्तु उस में अलौकिकता का इतना गहरा प्रभाव है कि बाल रूप की स्वभाविकता और मार्मिकता स्पष्ट रूप से सामने नहीं आ सकी। सूरदास जी ने जिस प्रकार से, जिस अनूठी शैली में श्री कृष्ण जी की बाल लीलाओं का वर्णन किया है उसमें अलौकिकता है। श्री कृष्ण जी के अवतार के बारे में जिन परिस्थितियों का वर्णन किया है वह सब उनकी अलौकिकता को प्रक्ट करती हैं। अवतार धारण करने से पहले श्री कृष्ण जी ने देवकी को अपने अलौकिक स्वरूप के दर्शन करवाए। दोनों हाथों में गदा और त्रिशूल धारण किया हुआ था, तीसरे और चौथे हाथ में शंख और खड्ग, पांचवें में कमल, छठे में धनुष, सातवें में वाण और आठवें से धैर्य देने का संकेत कर रहे थे। ऐसे प्रेम परिपूर्ण स्वरूप वाले ने तन पर पीले वस्त्र धारण किये हुए थे। जिस समय देवकी सो रही थी उस समय उसके कारागृह में इस प्रकार के अलौकिक स्वरूप वाले बालक ने अवतार धारण किया, उस दृश्य को देखकर देवकी भयभीत

होकर जाग पड़ी। देवकी उसे अपना पुत्र मानकर नहीं अपितु हरि स्वरूप जानकर, प्रणाम करके उनके चरणों पर गिर पड़ी। श्री कृष्ण जी ने उस समय माया का पर्दा डाल दिया क्योंकि देवकी ने उन्हें हरि स्वरूप करके जाना, पुत्र करके नहीं।

श्री कृष्ण जी आनन्द विभोर हो गये, गंधर्व पुलकित होकर गाने लगे आकाश में से फूलों की वर्षा होने लगी। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी दशम् ग्रंथ में लिखते हैं :–

।।दोहरा।। आनंद सौ सभ देवतन सुमन दीन बरखाइ।।
सोक हरन दुसटन दलन प्रगटे जग मो आइ।।६०।।
जै जै कार भयो जबै सुनी देवकी कान।।
त्रसत हुइ मन मै कहयो सोर करै को आन।।६१।।

–दशम ग्रंथ प ष्ठ २६१

ब्रह्मा, विष्णु, महेश की प्रसन्नता की कोई सीमा ना रही। देवकी और वासुदेव के मन में शंका उत्पन्न हो गई कि कहीं कंस इस बालक की भी हत्या न करवा दे, क्यों न इसको नंद बाबा के घर पहुँचा दिया जाये। इस निर्णय के अनुसार जब वासुदेव वहाँ से चलने लगे तो श्री कृष्ण जी ने माया का आवर्ण चारों ओर डाल दिया और उनकी क पा से हाथों की जंजीरें स्वयं खुल गईं, पहरे पर बैठे हुये सभी दैत्य सो गये, वासुदेव बालक कृष्ण को टोकरी में डालकर, सर पर रखकर ब ज की ओर चल पड़े। जैसे ही वासुदेव ने यमुना जल में पांव रखा तो कृष्ण जी के साथ अपनी प्रीत को स्मरण करके उनके चरणों को स्पर्श करने के लिये यमुना का जल ऊँचा हो गया।

दूसरी ओर यशोदा के घर में एक बालिका ने जन्म लिया। वासुदेव जी ने सो रही यशोदा के साथ बाल श्री कृष्ण जी को लिटा दिया और उसकी बालिका को लेकर मथुरा लौट आए। सूरदास जी ने यह बात स्पष्ट कर दी कि श्री कृष्ण जी कोई साधारण बालक नहीं बल्कि परम अवतार थे जो देवताओं की रक्षा के लिये और असुरों का संहार करने के लिये अवतरित

हुये थे। धरती पर सब स्त्री पुरूष प्रसन्न हुये, घर-घर में खुशियाँ हो रही थीं क्योंकि अवतारों के अवतार श्री कृष्ण जी ने अवतार धारण किया था।

देव सभै हरखे सुन भूमहि
अउर मनै हरखै नर नारी।।
मंगल होहि घरा घर मै
उतर्‌यो अवतारन को अवतारी।।७६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २६२

यशोदा अपने बालक के सुन्दर मुख मण्डल को देखकर अति प्रसन्न हुई और दुलारने लगी। पंड़ितों, गवैयों, भण्डों इत्यादि को बहुत सारा दान दिया गया। नंद के घर पुत्र के जन्म की बात सुनकर ब ज की सारी स्त्रियाँ सिर पर लाल दुपट्टे लेकर नंद के घर बधाई देने के लिये चल पड़ीं।

श्री कृष्ण जी के लिये रत्नों और मणियों से जड़ा हुआ पालना बनवाया गया। उसको चारों ओर से तरह-तरह के खिलौनो और लड़ियों से सजा दिया गया। माता ने स्नान करके बालक को पालने में डाल दिया। श्री कृष्ण जी अभी मात्र सात दिनों के थे, उनके अधर, चरण और हाथों का रंग लाल था। उनकी अपार सुन्दरता देखकर ब ज की सारी स्त्रियाँ अति प्रसन्न होतीं। यशोदा अपने पुत्र से हर प्रकार का लाड़ प्यार करती। यशोदा को वह सुख प्राप्त हो रहा था जिस सुख के लिये देवता और मुनि तरसते रहते हैं। जब यशोदा पालने में श्री कृष्ण को झुलाती, गंधर्व, मुनि और तेत्तीस करोड़ देवता इस द श्य का आनन्द लेने के लिये आकाश में छाये रहते।

सूरदास जी के अनुसार श्री कृष्ण जी अपने भक्तों को प्रसन्न करने के लिये अनेक प्रकार का रूप धारण करते। गोपियाँ श्री कृष्ण जी को अपनी अंचल में लेने के लिये व्याकुल रहती हैं। श्री कृष्ण जी के चरण कमल के समान अत्यंत कोमल हैं, अधर और नाक बहुत सुन्दर हैं, ब जवासियों का यह सौभाग्य है

कि उनको ऐसा सुन्दर मुख देखने का अवसर प्राप्त हुआ। अपने हाथ में अपने ही पैर का अगूंठा पकड़कर अपने ही मुख में डालकर सबको प्रसन्न करते हैं। सूरदास जी बड़े सुन्दर ढंग से लिखते हैं कि वह चरण जिस को लक्ष्मी अपना आभूषण बनाकर रखती हैं, अपने हृदय से एक क्षण के लिये भी दूर नहीं करती, श्री कृष्ण जी देखना चाहते हैं कि उसमें क्या रस है?

ब ज में आनन्द का समुद्र उमड़ पड़ा। सूरदास जी लिखते हैं :—

जो सुख ब्रज मैं इक घरी
सो सुख तीन लोक मैं नाहीं
धनि यह घोष–पुरी।
अषटसिधि नवनिधि कर जोरे,
दवारे रहत खरी।
सिव सनकादिक–सनादि–अगोचर
ते अवतरे खरी।
धंनय धंनय वडभागन जसुमति
निहरनि नही परी।
ऐसैं सूरदास के प्रभू कै,
लीनहो अंक भरी।

माता यशोदा अपने बालक के सुन्दर मुख-मण्डल की शोभा देखकर बलिहार जाती है। जिस प्रकार निर्धन को धन से प्यार होने के कारण रात-दिन आनन्द प्राप्त होता रहता है, ब ज की स्त्रियाँ श्री कृष्ण जी की बाल लीलाओं को देखकर धन्य हो रहीं थीं। त्रिलोकीनाथ प्रभु अपनी माता का मुख देखकर ताली बजाकर किलकारी मारते हैं। श्री नन्द जी और सारे ब जवासी स्वयं को भाग्यशाली समझते थे। सूरदास जी के अनुसार इस धरती को पवित्र करने वाला प्रभु का अवतार भी धन्य है।

गोपियाँ श्री कृष्ण जी की स्तुति करती हुई ऊबती नहीं, थकान अनुभव नहीं करती। एक गोपी को अच्छा लगता है, इस सुन्दर लल्ला को अपनी गोद में लेना और उसे एक टक

निहारना। वह अपनी पलकों को कोसती है क्योंकि वह बार-बार उसकी आँखों के आगे आकर उसे देखने से रोकती है और उसे अपने प्रिय मोहन को देखने में एक पल की देरी हो जाती है। सूरदास जी बड़ी अनुपम शैली में श्री कृष्ण जी के बालपन की अनूठी सुन्दरता का वर्णन करते हैं :—

खेलन नंद–आंगन गोबिंद।
निरखि निरखि जसुमति सुख पावत,
बदन मनोहर इंद।
कटि किंकनी चंद्रिका मानिक,
लटकन लटकत भाल।
परम सुदेस कंठ केहरि नख,
बिच बिच बजर प्रवाल।
कर पहुंची पाइन मैं नुपूर,
तब राजन पट पीत।
घुटरनि चलत अजिर महि बिहरत,
मुख पंडित नवनीत।
सूर बिचित्र चरित्र श्याम कै
रसना कहत ना आवैं
बाल दसा अवलोकि सकल पुनि,
जोग बिपरति बिसरावै।

श्री कृष्ण जी जब दूध ना पीते तो माता उन्हें समझाती है, कि अगर वह दूध नहीं पीयेंगे तो बड़े किस तरह होंगे। श्री कृष्ण जी बड़े सुन्दर शब्दों में अपनी माता से पूछते हैं—माँ मेरी चोटी कब बढ़ेगी। मुझे दूध पीते हुये कितनी देर हो गई है, परन्तु यह तो अभी बहुत छोटी है। माँ मुझे जल्दी से बड़ा कर दे और खाने के लिये दूध, दहीं, घी, माखन इत्यादि जो मैं मागूँ, वही मुझे दिया कर। फिर श्री कृष्ण जी कभी हठ करते हैं कि उन्हें चाँद का खिलौना चाहिए वरना वह ज़मीन पर लेट जायेंगे और यशोदा की गोद में नहीं आयेंगे। वह अपने नन्द बाबा का पुत्र

कहलायेंगे और यशोदा का पुत्र नहीं बनेंगे। एक बार माता यशोदा के साथ कृष्ण जी खेल रहे थे, श्री कृष्ण जी ने जब जँभाई ली तो माता यशोदा तीनों लोक श्री कृष्ण जी के मुख में देखकर आश्चर्यचकित रह गईं परन्तु श्री कृष्ण जी ने उसी क्षण माता की बुद्धि पर माया का आवरण डाल दिया।

श्री कृष्ण जी अपने बाल गोपालों के साथ यमुना नदी के किनारे खेलते। सारी यमुना नदी को तैरकर पार करते और रेतीले स्थान पर जाकर लेटते, फिर पानी में भाँति-भाँति के खेल खेलते। श्री कृष्ण जी को घर के अन्दर रहना बिल्कुल पसन्द नहीं था। बाहर जाकर बाल गोपालों के साथ क्रीड़ाएँ करना अच्छा लगता था। खेलने के बहाने श्री कृष्ण जी ग्वालों के घरों में घुसकर माखन खाते और आँखों के संकेत से साथियों को भी बुला लेते। बाकी बचे हुये माखन को वह अपने हाथों से बंदरों को खिला देते। जब श्री कृष्ण जी माखन खाकर चले गये, तो सारी गोपियों ने यशोदा से शिकायत की कि उसके कृष्ण ने आकर सब दूध की गागरें गिरा दी हैं। वह श्री कृष्ण जी से ड़रकर माखन को ऊँचे स्थान पर रखती हैं परन्तु श्री कृष्ण जी ओखली पर चढ़कर माखन खा जाते हैं। अगर कोई गुस्सा करता है तो सारे बाल गोपाल मिलकर उसे मारते हैं। अगर माखन चुराते हुए ऊपर कोई स्त्री आ जाये तो उसके बाल नोच देते हैं। यशोदा को सारी गोपियाँ उलाहना देती हैं कि श्री कृष्ण जी उपद्रव मचाने के सिवा कोई काम नहीं करते। गोपियों की बात सुनकर यशोदा को क्रोध आ जाता परन्तु श्री कृष्ण जी का सुन्दर मुख देखकर वह एकदम शाँत हो जाती।

श्री कृष्ण जी माता को बताते हैं कि यह सारी गोपियाँ व्यर्थ में उन्हें गुस्सा दिलाती हैं। पहले तो एक गोपी ने उनके सिर से टोपी उतार दी, फिर उनकी नाक में अंगुली डाली, फिर उनके सिर पर जोर से हाथ मारा। यह सब कुछ करने के उपरांत फिर उनसे ज़मीन पर नाक रगड़वाया और अपने घर

के संबंधियों को हँसाया और फिर उनको टोपी लौटाई। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी इस द श्य का वर्णन बड़े सुन्दर शब्दों में करते हैं :—

मात कहयो अपने सुत कौ
कहु किउ करि तोहि खिझावत गोपी।।
मात सों बात कही सुत यौ
करि सो गहि भागत है मुहि टोपी।।
डारकै नास बिखै अंगुरी
सिर मारत हैं मुझ कौ वह थोपी।।
नाक घसाइ हसाइ उनै
फिर लेत तबै वह देत है टोपी।।१२७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २६८

यह सब सुनकर माता यशोदा गोपियों पर क्रोधित हुई और कहा कि यशोदा के घर में किसी भी वस्तु की कमी नहीं फिर भला कृष्ण क्यों उनके घर में जाकर चोरी करेगा। यशोदा ने गोपियों को ताड़ना करते हुए कहा कि अगर कान्हा उनका एक सेर दही बिगाड़ेगा तो वह उन्हें उसके बदले में एक मन दहीं देने को तैयार हैं।

बाबा नन्द जी के घर प्रतिदिन नौ लाख गायों का दूध दुहा जाता था, फिर भला कान्हा को माखन चुराने की क्या आवश्यकता? बालक कान्हा अपने मुख पर लगे हुये माखन के बारे में अपनी माता को स्पष्टीकर्ण देते हैं :

मैया मैं नहीं माखन खाइओ।
खिआल परैं ये सखा सबै मिलि,
मेरे मुख लपटायो।
देखि तुही सींके पर भाजन,
उचे धरि लटकायो।
हऊं जो कहत नानहे कर अपणैं
मैं कैसे करि पायो।

मुख दधि पूंछ बुधि इक कीनी
दोना पीठि दुरायो।
डारि साटि मुसकाए यशोदा,
सयामहि कंठ लगायो।
बाल विनोद–मोह मन मोहयो,
भगती प्रताप दिखाइओ।
सूरदास जसुमति को जह सुख
सिव बिरंचि नहीं पाइओ।

जब गोपियाँ उलाहना देकर वापिस चली गईं तब श्री कृष्ण जी ने एक और खेल रचाया और वह मिट्टी खाने लगे। जब माता यशोदा को इस बात का पता चला तो उसने श्री कृष्ण जी को छड़ी से धमकाया और मुँह खोलने को कहा। जब श्री कृष्ण जी ने मुँह खोला तो अपने मुख में खण्ड ब्रह्माण्ड अपनी माता को दिखा दिये। यशोदा ने समुद्र, पहाड़, धरती, आकाश, पाताल, नाग लोक कान्हा के मुख में देख लिये और कान्हा को प्रभु, स्वरूप मानकर उनके चरण स्पर्श किये। कितनी भाग्यशाली थी माता यशोदा जिसने, अंडज, जेरज, सेतज, उत्भुज से पैदा हाने वाले जीव जंतु सबको एक ही स्थान पर देख लिया था। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी इस द श्य का वर्णन बड़े सुन्दर शब्दों में करते हैं :–

मात गहयो रिस कै सुत कौ
तब लै छिटीआ तन ताहि प्रहार्यो।।
तउ मन मद्धि डरयो हरि जी
जसुधा जसुधा करकै जु पुकारयो।।
देखहु आइ सभै मुहिको मुख
मात कहयो तब तात पसारयो।।
सयाम कहै तिन आनन मै
सभही धर मूरत बिसव् दिखारियो।।१३२।।

–दशम ग्रंथ प ष्ठ २६६

।।दोहरा।। जेरज सवे्तज उतभुजा देखे तिन तिह जाइ।।
पुत्र भाव कौ दूर करि पाइन लागी धाइ।।१३४।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २६६

श्री कृष्ण जी अपने बाल स्वरूप का परिचय देते हैं। सारे बाल ग्वाल सखा उन्हें तंग करते हैं, श्री कृष्ण जी को गुस्सा आ जाता है और वह खेलने नहीं जाते, वह आकर यशोदा माता को कहते हैं —

मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायो।
मोसे कहों इह रिम रिम से मारे,
खेलन हउं नहीं जात।
पुनि पुनि कहत कउन है माता,
को है तेरो तात।।
गोरे नंद जसोदा गोरी
तू कत सयामल गात।
चुटकी दै दै गवाल नचावत,
हंसत सबै मुसकात।
तूं मोही कउ मारन सीखी,
दाऊ कबहूं न खीझै।
मोहन मुख रिस की यो बातें, जसमुति सुनि सुनि रीझै।

श्री कृष्ण जी अपनी माता यशोदा से यह शिकायत लगाते हैं कि बलराम उन्हें यह कहकर बहुत तंग करते हैं कि वह यशोदा के पुत्र नहीं। जब भी वह खेलने के लिये जाते हैं, बलराम उन्हें बार-बार आकर पूछते हैं कि उनके माता-पिता कौन हैं? श्री कृष्ण जी, नंद और यशोदा के पुत्र हो ही नहीं सकते क्योंकि वे तो गोरे है और कृष्ण जी काले हैं। भला गोरे माता-पिता का काला बालक भी कभी हो सकता है? यह सुनकर सारे बालक चुटकी बजाकर हंसते हैं, उन्हें सताते हैं, और उनकी खिल्ली उड़ाते हैं। यशोदा तो केवल श्री कृष्ण जी को मारना ही सीखी है, बलराम को तो कभी कुछ नहीं कहती। श्री कृष्ण जी की

क्रोध भरी बातें सुनकर माता यशोदा अत्यंत प्रसन्न होती।

अगर यह कह दिया जाये कि सूरदास जी बाल मनोविज्ञान के पूर्ण पंडित हैं तो यह अकथनीय नहीं। बाल चरित्र वर्णन करते समय सूरदास जी ने श्री कृष्ण जी के चरित्र का चित्रण करने में कोई कमी बाकी नहीं छोड़ी। आदि कवि वाल्मीकि के बाद सूरदास जी ही एक ऐसे कवि हुए हैं जिन्होंने अपने इष्ट के परम ब्रह्मत्व की प्रभुता बनाये रखने के साथ-साथ उनके बालरूप का बहुपक्षीय, स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी के शब्दों में ऐसे अवसरों का वर्णन शब्दों के द्वारा करना अति कठिन है।

खेलत क्रीड़ करै रस की इह
अउसर कउ बरनयो नही जाई।

सारी क्रीड़ाओं का वर्णन शब्दों के द्वारा करना अति कठिन है। असंभव है।

भाद्रपद

८

मास असू हम कानह्र के संग
खेलत चित्त हुलास बढ़ाई।
कान्ह तहां पुन गावत थो
अति सुंदर रागन तान बसाई।
गावत थी हमहूं संग ताही के
ता छबि बरनयो नही जाई।।
ता संग मै सुखदाइक थी रित
सयाम बिना अब भी दुखदाई।।८७४।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७०

शब्दार्थ : कानह्र—श्री कृष्ण जी। हुलास—खुशी, प्रसन्नता। पुन—फिर, दोबरा। ता—श्रीकृष्ण जी के साथ होते हुये।

व्याख्या : सारी गोपियों को आश्विन मास की याद तड़पाती है जब वे सब मिलकर, मन से उत्साहित होकर श्री कृष्ण जी के साथ खेलतीं थीं। खेलने के साथ-साथ सारा वातावरण और भी सुहावना हो जाता। जब श्री कृष्ण जी वहाँ अपने मधुर कण्ठ के द्वारा गाया करते थे तो उनके सुरीले कण्ठ में से निकली हुई सुन्दर रागों की ताने कानों में मीठा रस धोल देतीं। सारी गोपियाँ यह सब सुनकर झूम उठती थीं। केवल इतना ही नहीं, जब श्री कृष्ण जी गाते थे, तो गोपियाँ भी उनकी सुर के अनुसार उनके साथ मिलकर गाती थीं। उस सुन्दर रमणीय द श्य की छवि का वर्णन शब्दों के द्वारा तो हो ही नहीं सकता; उनका तो केवल अनुभव ही हो सकता है। श्री कृष्ण जी के

साथ की हुई क्रीड़ाएँ, उनके सुन्दर गले में से गाये हुए सुरीले गीत, सुरीली तानें और गोपियों का उनके साथ मिलकर गायन करना कितना सुख भरा था। वह क्षण कितना सुहावना और रमणीय था, जब श्री कृष्ण जी का संग प्राप्त था। अब उनके बिना गोपियों को सब कुछ अत्यंत दुखद लग रहा था।

भाव : गोपियाँ श्री कृष्ण जी को तो असीम प्रेम करती ही थीं परन्तु उनके मधुर कण्ठ के द्वारा गाये हुए गीत, रागों की सुन्दर तानों पर भी अत्यंत मोहित होती थीं। वे सब श्री कृष्ण जी के साथ मिलकर गीत गाकर स्वयं को भाग्यशाली समझतीं।

ता छबि को बरनयो नही जाई

भारतीय साहित्य का विवेचन करने से यह स्पष्ट होता है कि श्री कृष्ण जी के स्वरूप का वर्णन प्राचीन काल से होता आ रहा है। महाभारत में श्री कृष्ण जी के पूर्ण अवतार स्वरूप का वर्णन मिलता है। गोपाल रूप में श्री कृष्ण जी की उपासना पुराण काल की ही देन है। हरिवंश पुराण में श्री कृष्ण जी के स्वरूप का अत्याधिक विस्तार में वर्णन मिलता है। विष्णु पुराण के १२वें अध्याय में श्री कृष्ण जी की जीवन गाथा का वर्णन किया गया है, जिसमें श्री कृष्ण जी के अनगिनत पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है जैसे पूतना वध, शकट वध, यमुलारजन, माखन चोरी करना, धेनुक वध, प्रलंब वध, गोवर्धन धारन इत्यादि। श्री कृष्ण जी की लीलाओं का वर्णन करते हुए पुराणकार ने प्रक ति की सुन्दरता का बड़े मनमोहक शब्दों में वर्णन किया है। इसके पश्चात् पदम-पुराण, वायु-पुराण, वामन-पुराण, सूर्य-पुराण और विष्णु-पुराण में भी श्री कृष्ण जी से संबंधित अनेक गाथाओं का वर्णन किया गया है। पदम-पुराण के ६६ से लेकर ७२वें अध्याय में श्री कृष्ण जी के महातम का वर्णन किया गया है और अध्याय ७२ से लेकर ८३ तक व ंदावन इत्यादि के महत्व और श्री कृष्ण जी की लीलाओं का विवेचन किया गया है। इसी पुराण में

गोपियों के अध्यात्मिक पक्ष और उनकी उत्पत्ति के विषय पर विस्तार में वर्णन किया गया है। द्वारका, गोकुल, मथुरा, व ंदावन इत्यादि का भी सुन्दर वर्णन किया गया है। इस अध्याय के श्लोक ८८ से १०२ तक श्री कृष्ण जी की सुन्दरता का अत्यंत मनोरम चित्रण मिलता है। श्री कृष्ण भक्ति साहित्य पर इस पुराण का गहरा प्रभाव पड़ा है। पुष्टी मार्ग जैसे का तैसे ही ले लिया गया है। वायु पुराण में श्री कृष्ण जी के जन्म का वर्णन मिलता है। इसके उपरान्त श्री कृष्ण जी की सोलह हज़ार रानियों और उनके पुत्रों-इत्यादि का वर्णन है। वामन-पुराण में श्री कृष्ण जी की कथा का वर्णन है। पुराण के १४४वें अध्याय में श्री कृष्ण जी की लीलाओं का विस्तार में वर्णन किया गया है। विष्णु-पुराण के पंद्रहवें अध्याय में श्री कृष्ण जी के जन्म का वर्णन है। पांचवें अंश में श्री कृष्ण जी के चरित्र का भी वर्णन किया गया है। श्री कृष्ण जी के चरित्र के संबंध में श्रीमद् भागवत पुराण सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। श्री कृष्ण जी के भक्तों ने इसमें दर्शाये गये मार्ग को अपना आधार माना है। महाभारत से लेकर पुराण काल तक जितना भी श्री कृष्ण जी का विवेचन हुआ है, वह सारा इस पुराण में संकलित है। यद्यपि इस पुराण में श्री कृष्ण जी के सारे रूप आ गये हैं परन्तु प्रमुखता श्री कृष्ण जी को दी गई है।

श्रीमद् भागवत के वह स्थान प्रसंग प्रधान हैं जो ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन करते हैं। जिस तरह गोस्वामी तुलसीदास जी मर्यादा पुरषोत्तम रामचन्द्र जी के चरित्र का चित्रण करते हुए भक्ति भाव नहीं त्यागते और अनजाने में श्री रामचन्द्र जी के चरित्र में अलौकिकता का समावेश कर देते हैं, इसी तरह भागवतकार ने श्री कृष्ण जी के घटनात्मक स्थानों पर भी भगवान श्री कृष्ण जी के मंगल स्वरूप की कई बार स्तुति की है, जिस तरह भामासुर युद्ध के समय, बाणासुर संग्राम के समय और वेद स्तुति इत्यादि में इन सारी घटनाओं में अलौकिक

सम्मिश्रण है, स्वर्ग से कल्पव क्ष लेकर आना, देवकी के म त पुत्रों को स्वर्ग से वापिस लेकर आना भी भागवतकार का उद्देश्य भक्ति भाव को द ढ़ करता है। श्रीमद् भावगत में श्री कृष्ण जी के एक ज्ञानी के रूप में दर्शन होते हैं। एक तो वह साधारण उपदेश हैं जो श्री कृष्ण जी ने साधु, महात्माओं, मित्रों इत्यादि को दिये हैं। इन उपदेशों का भाव अपना कर्म करते हुये भक्ति करना है। कुछ श्री कृष्ण जी के वह उपदेश हैं, जो किसी विशेष पुरूष को विशेष रूप में दिये गये हैं। जिस तरह श्री कृष्ण जी के उद्धव के प्रति उपदेश, ध्रुव को नारद जी का उपदेश, परमतत्व और ज्ञान-भक्ति करने पर प्रकाश डालते हैं। श्री कृष्ण जी ने प्रभु स्तुति पर भरपूर उपदेश भी दिये हैं और उन्होंने गीतात्मक उपदेश भी दिये हैं।

श्री कृष्ण जी के दो रूप हैं, एक निराकार और दूसरा साकार। श्री कृष्ण जी की सुन्दरता अद्वितीय है। श्री कृष्ण जी और गोपियों का परस्पर प्रेम अमिट है और गहरा संबंध है। श्री कृष्ण जी भाँति-भाँति की लीलाएँ करते हैं। कवियों ने श्री कृष्ण जी के निराकार और साकार दोनों स्वरूपों का वर्णन किया। साकार स्वरूप में श्री कृष्ण जी की अनेक लीलाएँ आनंदित करती हैं। श्री कृष्ण जी की बाल लीला, रास लीला, राग लीला, कुंज लीला उनके भक्तों को मंत्र-मुग्ध करती है। श्री कृष्ण जी का निराकार रूप भी कोई कम नहीं। कवि गण उनके साकार स्वरूप का वर्णन करते-करते अलौकिक स्वरूप का भी वर्णन करते हैं। श्री कृष्ण जी की अलौकिकता का तो कहना ही क्या! वह श्री कृष्ण जिनका जाप देवता करते हैं; ब्रह्मा जिनका ध्यान करके अपने धर्म में बढ़ावा करते हैं; जिनके लिये देवता, किंनर, धरती पर रहने वाली स्त्रियाँ अपने प्राण तक न्यौछावर करने के लिये तत्पर रहती हैं, ऐसे श्री कृष्ण जी को अहीरों की पुत्रीयाँ थोड़ी सी छाछ के लिये नाच नचाती हैं :—

सेस गनेस दिनेस सुरेसह जाहि निरंतर गावै।

जाहि अनादि अनंद अखंड अछेद सु वेद बतावै।
नारद सो सुक वियास रटै पचि हारे तउ पुनि पार ना पावै।
ताहि अहीर की छोहरीया छछीया भरि छाछ पर नाच नचावै।

गंधर्व, शारदा और शेषनाग जिसकी प्रशंसा करते हैं। गणेश जिसके अनंत नामों का स्मरण करते हैं; ब्रह्मा और शिवजी जिसके स्वरूप को जान नहीं सके; जिसको प्राप्त करने के लिये योगी, तपस्वी और सिद्ध निरंतर समाधि लगा कर रखते हैं, फिर भी उनका भेद नहीं जान सकते, ऐसे श्री कृष्ण जी को अहीरों की पुत्रीयाँ थोड़ी सी छाछ के लिये नाच नचाती हैं। शिवजी जिनका ध्यान धरके अराधना करते हैं; सारा संसार जिसकी पूजा करता है, वही श्री कृष्ण जी साकार रूप धारण करके अवतरित हुए हैं, जो स्वयं विराट पुरूष हैं वह अपनी लीला दिखाने के लिये माटी खाते हैं।

श्री कृष्ण जी को प्राप्त करने के लिए सारी स ष्टि प्रयत्नशील है। श्री कृष्ण जी की अराधना ब्रह्मा दिन-रात करते हैं। श्री कृष्ण जी आनन्द के भंडार हैं; प्राणों के प्राण हैं; जिनके दर्शनों के लिए लाखों लोग भटकते रहते हैं; श्री कृष्ण जी धरती पर विचरने वाले लाखों लोगों के अहंकार, घमण्ड को चूर करते हैं; उनकी सुन्दरता का वर्णन नहीं किया जा सकता। जो अति मनमोहक और रमणीय हैं, वह माता यशोदा से खुरचनी लेने के लिये मचलकर खड़े हैं।

रसखान जी बड़े सुन्दर शब्दों में श्री कृष्ण जी की छवि का वर्णन करते हैं :—

वोही ब्रह्मा जाहि सोवत है रात दिन
सदा शिव सता ही धरत धिआन गाड़े है।
वेही विशनू जाके काज मानी, मूड़ा राजा रंक
जोगी जती ह्वै के सीत सहयो अंग ठाढे है।
वेही ब्रिजनंद रसखानि प्राण प्रानण के
जाके अभिलाख लाख लाख भांती बाड़ै है।

यशोधा के आगे वसुधा के मान मोचन ये।
तामरस लोचन खरोचन के ठाढे है।

सूरदास की तरह रसखान भी श्री कृष्ण जी की छवि पर बलिहार जाते हैं। उनका श्री कृष्ण जी के चरणों से असीम प्रेम है। इस लिये उनके हृदय के अन्दर यह तीव्र इच्छा है कि अगर उन्हें दूसरे किसी जन्म में मनुष्य का रूप मिले तो वह ब ज भूमि में ही पैदा हो ताकि उनको गोपियों की और ग्वालों की संगति प्राप्त हो, अगर उन्हें पशुओं का जन्म मिले तो भी उनका जन्म ब ज में हो, ताकि वह बाबा नन्द की गायों के साथ विचर सकें, अगर वह पत्थर बनें तो भी उसी पर्वत के बने जिसे इन्द्र का अभिमान खंडन करने के लिये श्री कृष्ण जी ने अपनी अंगुली पर धारण किया था और यदि वह पक्षी बने तो सदा ही यमुना नदी के किनारे लगे व क्षों पर बैठकर चहचहायें। वह अपने शरीर के प्रत्येक अंग को श्री कृष्ण जी की सेवा में अर्पण करना चाहते हैं।

श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी भी कृष्ण जी की छवि का वर्णन कर रहे हैं :—

।।कबितु।। कमल सो आनन कुरंग ताके बाके नैन
कट सम केहरि म्रिनाल बाहै ऐन है।।
कोकल सो कंठ कीर नासका धनुखु भउहै
बानी सुर सर जाहि लागै नहि चैन है।।
त्रीअनि को मोहति फिरति ग्राम आस पास
बिरहन के दाहबे को जैसे पति रैन है।।
पुन मंदि मति लोक कछु जानत न भेद याको
एते पर कहै चरवारो सयाम धेन है।।१६०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २७६

इस तरह श्री कृष्ण जी की छवि का वर्णन शब्दों में करना अति कठिन है।

६

कातक की सखी रास बिखै
रुत खेलत थी हरि सो चितलाई।
सेतहु गव्ारन के पट छाजत
सेत नदी तह धार बहाई।
भूखन सेतह गोपन के अरु
मोतनहार भली छबि पाई।
तउन समै सुखदाइक थी रित
अउसर याहि भई दुखदाई।।८७५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७०

शब्दार्थ : रुत—प्रेम मग्न होकर। सेतहु—श्वेत, उज्जवल। पट—वस्त्र। बहाई—श्वेत निर्मल जल की धारा वहाँ बहती थी। मोतनहार—श्वेत मोतियों के हार पहने हुए थे। भली—सारे ही साज़ श ंगार श्वेत होने के कारण बहुत ही सुन्दर द श्य बन जाता था।

व्याख्या : गोपियों को श्री कृष्ण जी के साथ कार्तिक महीने में व्यतीत हुए क्षणों की याद तड़पाती है। इस मास में गोपियाँ श्री कृष्ण जी के साथ रासलीला रचाती थीं और मन लगाकर अपने प्रिय हरी के साथ रासलीला खेलती थीं। उस समय की उज्जवलता का एक आश्चर्यजनक द श्य था। ग्वालिनों के सुन्दर तन पर श्वेत कपड़े अत्यंत सुन्दर लगते थे और बहती हुई नदी की धारा का रंग भी श्वेत था। गोपियों के तनों पर आभूषण पहने हुये थे, वह भी श्वेत थे और गले में श्वेत मोतियों के पहने हुए हार भी अति सुन्दर लग रहे थे। जिस ओर भी,

जहाँ तक भी द ष्टि जाती, सब कुछ श्वेत उज्जवल दिखाई देता। ग्वालों के तन पर श्वेत मोतियों के हार भी अति सुन्दर प्रतीत होते। गोपियों और गोप-ग्वालों का श्री कृष्ण जी के साथ बिताये हुए समय कितने सुखद थे और अब श्री कृष्ण जी के बिना वह अत्यंत दुखद हो गये हैं।

भाव : गोपियाँ अपने तन पर श्वेत वस्त्र धारण करके, गले में श्वेत मोतियों का हार पहनकर, श्वेत रंग की नदी की धारा के पास श्री कृष्ण जी के साथ रासलीला करके आनंद मग्न होतीं।

हरि सो चित लाई

मछली बंदर में एक भाग्यशाली राजा द्रुपद रहता था। शूरवीर योद्धा हर समय ही उसके साथ रहते। राजा ने एक यज्ञ करने की सोचकर सारे ब्राह्मणों को अमंत्रित किया। उनका खूब मान-सम्मान किया और सबकी जी भर कर सेवा की। उस यज्ञ की अग्नि में से एक कन्या निकली। ब्राह्मणों ने बहुत सोच-विचार के बाद उसका नाम द्रोपदी रखा।

युवा अवस्था होने पर निर्णय किया गया कि इस प्रकार का स्वयंवर रचा जाये कि उसे एक शूरवीर पति प्राप्त हो सके। एक नकली मछली को घूमते हुए चक्र पर लगा दिया गया और नीचे तेल का बड़ा बर्तन रख दिया गया। जो भी व्यक्ति तेल में परछाई देखकर, घूमती मछली की दाहिनी आँख में वाण मारे, वह ही द्रोपदी से विवाह कर सकता था। बड़ी दूर-दूर से बड़े-बड़े राजा वहाँ पहुँचे परन्तु कोई भी मछली की आँख में वाण मारने में सफल न हो सका। इस तरह शर्मिंदा होकर सब अपने राज्यों में लौट गये।

वीर अर्जुन भी द्रोपदी की सभा में उपस्थित हुए। उन्होंने बड़े ध्यानपूर्वक मछली की दाहिनी आँख को देखा और तीर ठीक निशाने पर जा लगा। सारे देवता अर्जुन की सफलता पर प्रसन्न हुए, परन्तु वहाँ बैठे शूरवीरों को यह सब अच्छा नहीं

लगा। इसी बात पर बहुत युद्ध हुआ। युद्ध में एक तीर अर्जुन को भी लगा। वह स्वयं को संभाल न सके और मूर्छित होकर गिर पड़े। द्रोपदी अत्यंत बहादुर थी। उसने तीर कमान संभाल लिया और एक क्षण में ही कई योद्धाओं को मार गिराया। एक वाण कर्ण को मारा और दुर्योधन को अग्नि वाण मारा। भीष्म, द्रोण आदि को धायल कर दिया। अश्वथामा, क पाचार्य और दुःशासन इत्यादि के घोड़ों को मार गिराया। द्रोपदी ने अनेक प्रकार के युद्ध करके उनको एक पहर तक रोके रखा और अन्त में कौरवों की सारी सेना भाग खड़ी हुई। अर्जुन द्रोपदी के युद्ध को देखकर अत्यंत प्रसन्न हुए और कहने लगे,''हे द्रोपदी ! मैं तो आज धरती पर धन्य हो गया हूँ। मैं तो बिना मोल के ही बिक गया हूँ। तुम जो कहोगी, मैं वही कार्य करूंगा और अपने प्राण न्यौछावर करने से तनिक भी संकोच नहीं करूंगा''। द्रोपदी को जीतकर प्रसन्नतापूर्वक अर्जुन ने अपने ग ह की ओर प्रस्थान किया।

द्रोपदी अत्यंत सुंदर थी। अगर यह कह दिया जाये कि सुन्दरता में सारी प थ्वी पर उसका कोई सानी नहीं था तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं। कहा जाता है कि द्रोपदी के सुन्दर तन में से खिले हुए फूलों जैसी सुगन्धि निकलती थी जिसकी महक एक कोस तक फैल जाती थी। जिस समय द्रौपदी का जन्म हुआ तो एक आकाशवाणी हुई,''क्षत्रियों का मंगल करने के लिए, इस सुन्दर स्त्री का जन्म हुआ है।'' पूर्वजन्म में शिव जी के दिये वरदान के कारण इसको पांच पाण्डवों की सुपत्नी बनने का अधिकार प्राप्त हुआ, स्वयंवर में यद्यपि इसे अर्जुन ने ही जीता था।

द्रोपदी उच्च कोटि की पतिव्रता स्त्री और उस प्रभु की प्रिय थी। इसका श्री कृष्ण जी के चरणों से असीम प्रेम था। यह श्री कृष्ण जी को अपना रक्षक, हितैषी, सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान मानती थी। जब कौरवों ने द्रोपदी को द्यूत क्रीड़ा में जीत लिया था और दुष्ट दुःशासन उसको केशों से खींचते-खींचते सभा में ले आया था; वह अत्यंत करूण स्वर से विलाप कर रही थी। कर्ण ने उन्हें अनेक

पतियों की पत्नी और वैश्या कहकर अपमानित किया। पाण्डव मस्तक नीचे किये बैठे थे। द्रोपदी की पुकार और धिक्कार सुनने में उनके कान असमर्थ से थे। धर्मराज ने पहले अपने आप को दाव पर रखा था या मुझे ? पहले स्वयं को दाव पर हार जाने के पश्चात् मुझे दाव पर लगाने का उन्हें क्या अधिकार रह गया था ? बड़े करूण स्वरों में द्रोपदी ने सबसे प्रार्थना की। भीष्म, द्रोण, क पाचार्य आदि सब ने मस्तक झुका लिया था, उस समय उस संकट के क्षणों में द्रोपदी ने अपने प्रिय इष्ट श्री कृष्ण जी के चरणों का ध्यान अपने मन में धारण करके पुकार की। इसका वर्णन भाई गुरदास जी इन शब्दों में करते हैं :—

अंदरि सभा दुससाणे मथे वाल द्रोपदी आंदी।
दूता नों फुरमाया, नंगी करहु पंचाली बांदी।
पंजे पांडो वेखदे, अउघटि रूधी नारि जिना दी।
अखी मीट धिआनु धरि,
हाहा क्रिसन करै बिललांदी।
कपड़ कोटु उसारिऊन, थके दूत न पारि वसांदी।
हथ मरोड़नि सिरू धुणनि,
पछोतानि करनि जाहि जांदी।
घरि आई ठाकुर मिले, पैज रही बोले शरमांदी।
पछोतनि करनि जाहि जांदी।
नाथ अनाथां, बाणि धुरां दी।

—वार १०, पऊड़ी ८

सच्चे हृदय से निकली हुई पुकार की सुनवाई बहुत जल्द होती है। श्री कृष्ण जी उस समय द्वारका नगरी में थे। इधर द्रोपदी द्वारिकाधीश कहकर पुकार रही थी, उधर उसकी पुकार श्री कृष्ण जी तक पहुँच रही थी। क्षण भर में श्री कृष्ण जी सभा में विलाप करती हुई द्रोपदी के सहायक बने। एक ओर दस सहस्त्र हाथियों के बल वाला दुःशासन द्रोपदी की साड़ी को खींच-खींच कर उसे नग्न करने का प्रयास करता, उधर श्री

कृष्ण जी की क पा से द्रोपदी की साड़ी के अम्बार लग गये। उस दस हाथ की साड़ी का कोई और छोर नहीं था। सब एक टक इस चमत्कारी द श्य को देख रहे थे। दुःशासन शर्मिन्दा होकर, थक हार के रह गया। अपनी प्रिय भक्त द्रोपदी की प्रभु ने स्वयं रक्षा की।

द्यूत क्रीड़ा की एक शर्त थी कि जो हार जाय, वह भाइयों तथा स्त्री के साथ बारह वर्ष वन में रहे। बनवास का अन्तिम वर्ष गुप्त रूप से बिताना होगा। यदि उनका भेद खुल जाय तो पुनः बारह वर्ष वन में रहना होगा। एक बार तो ध तराष्ट्र ने हारे हुये पाण्डवों को द्रोपदी के साथ दासत्व से मुक्त करके हारा हुआ राज्य तथा धन लौटा दिया। दुर्योधन ने पिता की उदारता से दुःखी होकर किसी प्रकार केवल एक बाजी और खेलने की आज्ञा प्राप्त की। युधिष्ठिर इस नियम पर पुनः द्यूत में हार गये। माता कुन्ती को विदुर के घर छोड़कर वे द्रोपदी के साथ वन में चले गये।

एक दिन दुर्योधन महर्षि दुर्वासा और उनके दस हज़ार शिष्यों को साथ लेकर उस जंगल में पहुँचे जहाँ पाण्डव द्रोपदी के साथ रहते थे। दुर्योधन ने जान बूझकर दुर्वासा को उस समय पाण्डवों की ओर भेजा जब वह सारे भोजन कर चुके थे। महाराज युधिष्ठिर ने सूर्य से एक चमत्कारी पात्र प्राप्त किया हुआ था। उस पात्र से विविध प्रकार के पकवान निकलते थे। परन्तु उस पात्र में एक शर्त थी कि जब तक द्रोपदी भोजन न ग्रहण कर लेती तब तक उस पात्र में से अन्न की समाप्ती न होती। युधिष्ठिर ने महर्षि दुर्वासा को उनके शिष्यों सहित भोजन करने के लिये बुलाया। परन्तु महर्षि दुर्वासा अपने नित्य-क्रमानुसार गंगा तट पर स्नान करने चले गये। धर्मराज ने उन सब को भोजन का निमन्त्रण तो दे दिया, महर्षि ने निमन्त्रण स्वीकार भी कर लिया, परन्तु किसी ने यह न सोचा कि द्रोपदी भोजन कर चुकी है। इस लिए सूर्य देवता के वरदान अनुसार उस पात्र मे से उन सबके भोजन की व्यवस्था नहीं हो

सकती थी। द्रोपदी चिंतित हो गई। उन्होंने सोचा कि अगर महर्षि भोजन किये बिना चले गये तो वह अवश्य ही द्रोपदी को श्राप दे देंगे। महर्षि दुर्वासा के क्रोधित स्वभाव से सभी परिचित थे। उसी समय द्रोपदी ने अपने प्रिय इष्ट श्री कृष्ण जी के चरणों में इस संकट से बचाने के लिये विनती की।

कृष्ण जी सर्वव्यापक थे। उन्होंने उसकी पुकार सुन ली। ''कृष्णे ! मैं बहुत दूर से आया हूँ; थक गया हूँ; बड़ी भूख लगी है; अपना ग ह प्रबन्ध पीछे करना पहले मुझे कुछ खाने को दो''। सहसा श्याम सुन्दर ने प्रवेश करके कहा। पाण्डवों ने आश्चर्य से देखा कि अकस्मात् दारूक के रथ रोकते ही श्री कृष्ण कूदकर पर्णकुटी में चले गये। उन्होंने धर्मराज को अभिनन्दन तक नहीं किया। द्रोपदी ने बताया कि उसके भोजन करने के पश्चात् भोजन वाला पात्र रिक्त हो जाता है अब क्या हो ? नकली रोष से लीलापन ने कहा,''मैं तो भूख से व्याकुल हो रहा हूँ और तुम्हे हंसी सूझ रही है। मैं कुछ नहीं जानता। लाओ, कुछ खाने को दो''। यह सुनते ही द्रोपदी ने श्री कृष्ण से धर्मराज के द्वारा महर्षि दुर्वासा को निमन्त्रण देने वाली बात कह सुनाई और बोली इसी संकट में पड़कर मन ही मन आप का स्मरण करते हुए मैं रो रही थी। आप ने मुझ दुखिया की पुकार सुन ली। अब अपने पाण्डवों की रक्षा करो। द्रोपदी का भय दूर हो गया था। यह सब पचड़ा पीछे; पहले लाओ अपना वह पात्र दो। श्री कृष्ण झुंझलाये। लो ! तुम्ही देख लो। द्रोपदी ने पात्र लाकर दे दिया। भगवान की लीला, भली प्रकार सावधानी से स्वच्छ किये उस पात्र में भी शाक का एक पत्ता चिपका निकल आया। यज्ञ भोक्ता सर्वात्मा इससे त प्त हों ! माधव ने वह पत्ता उठाकर मुख में डाल लिया। अब यह पुनः भोजनक्रम प्रारम्भ हो गया। अतः पात्र भर गया। उसे तो अब द्रोपदी के भोजन करने तक अन्न देते रहना था।

जाओ ! ऋषियों को बुला लाओ। श्री कृष्ण ने सहदेव को

बाहर आकर आज्ञा दी। वहाँ जल में खड़े ऋषियों का उदर विश्वात्मा श्री कृष्ण के मुख में शाक का पत्ता डालते ही भर गया था। खट्टी डकारें आ रही थीं। दुर्वासा जी ने सोचा कि युधिष्ठिर ने अन्न प्रस्तुत किया होगा; अब हम भोजन तो कर नहीं सकते। कहीं अन्न व्यर्थ नष्ट होता देख धर्मराज रूष्ट हो गये तो लेने के देने पड़ जायेंगे क्योंकि धर्मराज भगवान के सच्चे भक्त हैं। महर्षि को अभी तक अम्बरीष पर रुष्ट होकर कष्ट पाने की घटना भूली नहीं थी। उन्होंने भागने में ही कल्याण समझा। सहदेव ने लौटकर बताया कि वहाँ कोई नहीं है। इस प्रकार मधुसूदन ने द्रोपदी की इस संकट में रक्षा की।

बनवास के समय द्रोपदी को अनेक प्रकार की कठिनाईयों का सामना करना पड़ा यहाँ तक कि सिंधु नरेश जयद्रथ ने द्रोपदी को वन में देखकर उस पर अपनी क्रूर द ष्टि डाली और उसे धमकाया। जिससे क्रोधित होकर पाण्डवों ने उसे बहनोई हाने के कारण जान से तो नहीं मारा परन्तु उसके सिर के केश मूंडकर पाँच चोटियां रखकर तथा दासत्व स्वीकार करवा के उसे बांधकर ले आये, परन्तु द्रोपदी ने दया करके उस दास को छोड़ने के लिये कह दिया।

अज्ञातवास के समय महारानी द्रोपदी सैरंध्री बन कर विराट की महारानी सुदेष्णा के बाल संवारती रही। यही कार्य करते हुये विराट के सेनापति कीचक ने भी उस की सुन्दरता को देखते हुये उसे अपशब्द कहे और भरी सभा में उसे केशों से पकड़कर पटक दिया। विराट के महाराजा भी उससे दबते थे। जब द्रोपदी ने रात्रि के समय भोजनालय में भीमसेन से अपने अपमान की बात की तो भीमसेन ने द्रोपदी को आश्वासन दिया। भीमसेन ने अपने बल से रात्रि को कीचक को मार डाला। विराट के लोगों ने इस बात का विरोध किया और इसकी दोषी सैरंध्री को ठहराते हुए कीचक के साथ ही उसे जलाने लगे परन्तु भीमसेन ने सबको मारकर द्रोपदी को बंधन मुक्त कर दिया।

अज्ञातवास समाप्त होने पर एक दिन अपने काले-काले केशों को हाथ में लेकर श्री कृष्ण जी को दिखाते हुये रोकर पांचाली ने कहा,''आज बारह वर्ष से यह केश बांधे नहीं गये हैं। जिसने इनको भरी सभा में खींचा है, उस दुष्ट दुःशासन की उसी भुजा के रक्त से धोकर मैं इन्हें बांधूगी। यह मेरी प्रतिज्ञा है। मधुसूदन ! क्या ये आजीवन खुले ही रहेंगे ? यदि पाण्डव कायर हो गये हैं, तो मैं अपने पांचों पुत्रों को आदेश दूंगी। बेटा अभिमन्यु उनका नेत त्व करेगा। मेरे पिता और भाई भी यदि मेरी उपेक्षा कर दें तो मैं आप के चरण पकडूंगी। क्या आप का चक्र शान्त ही रहेगा ? मैं कौरवों की लाशों को धूल में तड़पते देखना चाहती हूँ।''

श्री कृष्ण जी ने गंभीरता से कहा,''कृष्णे ! आंसुओं को रोको इस नाटक को हो जाने दो। मैंने प्रतिज्ञा की है और प्रक ति के सारे नियमों के पलट जाने पर भी वह मिथ्या नहीं होगी। जिन पर तुम्हारा क्रोध है, उनकी विधवाओं को तुम शीघ्र ही रोते देखोगी। यही धर्मराज युद्ध का आदेश देंगे और तुम्हारे शत्रु युद्धभूमि में मारे जायेंगे।''

महाभारत का युद्ध समाप्त होते ही युधिष्ठिर ने बन्धु वध की भावना करके विरक्त होकर वन में जाने का विचार प्रकट किया। महारानी द्रोपदी ने कहा महाराज ! आपने द्वैत वन में बार-बार कहा है कि शत्रुओं को जीतकर आप हम सबको सुखी करेंगे, अब अपनी बात को मिथ्या कर रहे हैं। मैं पुत्रों के मरने पर भी केवल आपकी ओर देखकर ही जीवित हूँ। आपके लिये उदासीनता उचित नहीं। शासन कीजिये, यज्ञ कीजिये और ब्राह्मणों को दान दीजिये।''

धर्मराज का शोक तो भीष्म पितामह के उपदेशों से दूर हुआ। उन्होंने दीर्घकाल तक शासन किया। द्रोपदी के साथ तीन अश्वमेघ किये। द्वारका से लौटकर अर्जुन ने जब रघुवंश के संक्षय का समाचार दिया तो परीक्षित का राज्याभिषेक करके धर्मराज ने अपने राजोचित वस्त्रों का त्याग कर दिया। मौन व्रत

लेकर वे निकल पड़े। भाइयों ने भी उन्हीं का अनुकरण किया। द्रोपदी ने भी वल्कल पहना और पतियों के पीछे चल पड़ी। धर्मराज सीधे उत्तर चलते गये। बदरिकाश्रम से ऊपर वे हिम प्रदेश में जा रहे थे। द्रोपदी सबके पीछे चल रही थी। सब मौन थे। कोई किसी की ओर देखता नहीं था। द्रोपदी ने अपना चित्त सब ओर से एकाग्र करके भगवान श्री कृष्ण में लगा लिया था। उन्हें शरीर का पता नहीं था। हिम पर फिसल कर वे गिर पड़ीं। शरीर उसी श्वेत हिमराशि में विलीन हो गया। महारानी द्रोपदी तो परम तत्व से एक हो चुकी थी।

जब भी द्रोपदी ने अपने प्रिय हरि जी के चरणों में चित्त लगाया, उन्होंने उसी क्षण द्रोपदी की सहायता करके उसकी लाज रखी। वह तो ऊंचे पतिव्रत आदर्शों की मल्लिका थी। उसने काम, क्रोध, अहंकार को पूर्ण रूप से जीता हुआ था। वह ईर्ष्या और क्रोध को अपने से बहुत दूर रखती थी। वह सेवा त्याग की मूर्ति थी, सदैव मीठा बोलती थी। जब वह बोलती थी तो उसके मुख से फूल गिरते थे, कटु वचन तो वह कभी बोलती ही नहीं थी। निम्न बातों की तरफ वह कभी ध्यान ही नहीं देती थी, बुरे स्थान पर कभी वह बैठती न थी, बुरे आचरण वालों से स्वयं को दूर रखती थी, उसने अपने मन को पूरी तरह से जीता हुआ था, इसीलिये देवता, मनुष्य, गंधर्व, युवक, धनी अथवा रूपवान किसी भी तरह के पुरूष हो उसे पाण्डवों के अतिरिक्त कोई नहीं दिखाई देता था। अपने पतियों को भोजन कराने के पश्चात् वह भोजन करती। वह नम्रता, सदाचार, क्षमा, त्याग की साकार प्रतिमा थी। इन सारी बातों से हटकर उसका श्री कृष्ण जी के चरणों से असीम प्रेम था और वह श्री कृष्ण जी की असीम क पा की विशेष पात्र थी।

सुन्दर श्याम

१०

।।सवैया।। मघ्र समै सभ सयाम के संग हुइ
खेलत थी मन आनंद पाई।
सीत लगै तब दूर करै हम
सयाम के अंग सो अंग मिलाई।
फूल चंबेली के फूल रहे
जिहनीर घटयो जमुना जिअ आई।
तउन समै सुखदाइक थी रित
अउसर याहि भई दुखदाई।।८७६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७०

शब्दार्थ : सीत—सर्दी। अंग—गले मिलाकर। जमुना—यमुना नदी।

व्याख्या : मार्गशीर्ष मास में सारी गोपियाँ मिलकर खेलती थीं और अपने हृदय में असीम सुख प्राप्त करती थी। जब उन्हें सर्दी लगती और जब वह ठण्ड का अनुभव करती थीं, उस समय वे श्री कृष्ण जी के गले लगकर शीत को दूर कर लेती थीं। गोपियाँ श्री कृष्ण जी के साथ वहाँ अठखेलियाँ करती जहाँ चमेली के फूल खिले हुए थे। वहाँ यमुना का पानी कम हो गया था और यमुना जी में लहरें उठती थीं, उसका वेग साधारण हो गया था। उस समय श्री कृष्ण जी का संग प्राप्त होने के कारण समय अति सुखदायक बन गया था। श्री कृष्ण जी के बिना गोपियों को समय बिताना ही मुश्किल हो गया है।

भाव : अत्यंत सर्दी के मौसम में गोपियाँ अपने प्रिय श्री कृष्ण जी का संग प्राप्त करके शीत को दूर कर लेती थीं। वह उनके ह्रदय में समा जाती थी।

मन आनंद पाई

जब भी नारायण जी ने सगुण स्वरूप धारण करके इस धरती पर अवतार लिया, तब ही उनके साथ लक्ष्मी जी ने भी अवतार धारण किया। त्रेता युग में श्री रामचन्द्र जी ने अवतार धारण किया तो लक्ष्मी ने सीता जी का स्वरूप धारण करके अपने प्रिय रामचन्द्र जी की सुपत्नी होने का सौभाग्य प्राप्त किया। इसी तरह ही द्वापर युग में कृष्ण मुरारी ने प थ्वी का भार उतारने के लिये और जालिमों, अत्याचारियों का विनाश करने के लिये अवतार धारण किया, तो लक्ष्मी ने रूकमणी के रूप में अपने पति परमेश्वर श्री कृष्ण जी का साथ निभाने के लिये इस धरती पर कुन्दन पुर नगर के राजा भीष्मक के घर में जन्म लिया। राजा ने उसी समय ज्योतिष्यों को बुला भेजा और उन्होंने कन्या का नाम रूकमणी रखकर भविष्यवाणी की,''यह कन्या अति सुशील, सुन्दर होगी और आदि पुरूष परमेश्वर से इसका विवाह होगा।'' माता-पिता अति प्रसन्न हुए और उनकी छत्रछाया में रूकमणी अपनी सखियों के साथ अठखेलियां करती हुई युवा अवस्था को पहुँच गई। एक दिन वह म गनयनी, पिक बैनी, अति सुन्दरी अपनी सखियो के साथ छुपा-छुपी खेलने लगी तो सखियो ने कहा,''रूकमणी ! तुम हमारे साथ खेलने आई हो, परन्तु तुम हमारे साथ अंधेरे में छुपती हो, तो तुम्हारे अनूप मुख मण्डल की आभा और प्रकाश इतना ज्यादा है कि चारों ओर प्रकाश हो जाता है, और हम छुप नहीं सकतीं।''

इसी तरह उसकी छवि दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी, एक दिन नारद कंचन पुर गये और रूकमणी की सुन्दरता को देखकर

अति प्रसन्न हुए। नारद जी ने द्वारका पुरी में जाकर श्री कृष्ण जी के आगे रूकमणी की सुन्दरता का वर्णन किया और कहा कि रूप और गुणों की खान रूकमणी तो केवल कृष्ण जी के योग्य ही है। इधर रूकमणी ने भी श्री कृष्ण जी के बारे में खूब प्रशंसा सुन रखी थी। अपने प्रिय का यश और नाम सुन कर उसी दिन से वह आठों पहर और चौंसठ घड़ियाँ सोते-जागते, उठते-बैठते, खाते-पीते उन्हीं के ध्यान में मग्न रहती।

सुपुत्री के स्वरूप को देखकर भीष्मक के मन में उसका विवाह करने की चिन्ता उत्पन्न हुई। जैसे ही महाराज ने पुत्री के स्वयंवर की चर्चा अन्तःपुर में की, रूकमणी ने सखी के द्वारा माता को अपना निश्चय सूचित किया। महारानी ने अपने पति को कन्या के भाव एकांत में बताये।

महाराज भीष्मक ने राज्य सभा से दूत द्वारका भेजकर मधुसूदन से प्रार्थना करने का प्रस्ताव किया कि वे आकर उनकी सुशील कन्या को स्वीकार करें। राज पुरोहित, मंत्रीगण तथा सभा के सदस्यों ने महाराज का समर्थन किया। महाराज के छोटे पुत्र रूकमरथ, रूकमबाहु, रूक्मकेश और रूकमण ने भी पिता के साथ अपनी हार्दिक सम्मति प्रकट की। परन्तु युवराज रूकमि, जो कि पूर्णरूप से श्री कृष्ण जी के विरूद्ध था क्योंकि उसकी दुर्योधन से मित्रता थी, उसने पिता के प्रस्ताव का विरोध किया और कहा,''जिसके कुल का पता नहीं, जिसने मगधराज को युद्ध में पराजित किया, जो महर्षि वित्त पुण्य देशों को छोड़कर दस्युओं की भाँति समुद्र में जा बसा है, उस चंचल चित्त श्री कृष्ण से अपनी बहिन का विवाह कभी सहन नहीं कर सकता। मेरी बहिन महापराक्रमी, अजेय, यशस्वी महाराज शिशुपाल की भार्या बनेगी।'' विवश होकर महाराज भीष्मक ने बड़े पुत्र की बात स्वीकार की और निमन्त्रण पत्रिका लेकर दूत ने चंदेर देश के लिए प्रस्थान किया।

जब इस बात का रूकमणी को पता चला तो उसने अपनी

सखियों से कहा :—

।।सवैया।। संग सहेलन बोलत भी
सजनी प्रन एक अबै करि हउ।
कितो जोगन भेस करो तज देस
नही बिरहागन सों जरि हउ।
मोर पिता हठ जिउ करिहै
तु बिसेख कहयो बिख खा मरि हउ।
दुहिता न्रिप की कहयो ना तिह कउ
बरिहो तु सयाम ही को बरि हउ।।१६७२।।

—दशम ग्रंथ पष्ठ ५०४

रूकमणी ने प्रण किया कि वह अपना शरीर का त्याग कर देगी और अगर विवाह करेगी तो केवल श्री कृष्ण जी के साथ ही करेगी। रूकमणी ने अपनी सखियों के साथ परामर्श किया कि एक ब्राह्मण के हाथ पत्र लिखकर श्री कृष्ण जी को सारे हाल के बारे में जानकारी दी जाये। रूकमणी ने ब्राह्मण के हाथ यह पत्र भेजा।

।।सवैया।। लोचन चार बिचार करो
जिन बाचत ही पतीआ उठ धावहु।
आवत है ससपाल इतै
मुहि बयाहन कउ प्रभ ढील न लावहु।
मार इनै मुहि जीत प्रभू
चलो द्वारवती जग मै जसु पावहु।
मोरी दसा सुनिकै सभ यौ
कबि सयाम कहै करि पंखन आवहु।।१६७५।।

—दशम ग्रंथ पष्ठ ५०४

पत्र में रूकमणी ने श्री कृष्ण जी के चरणों में विनती की कि वह शीघ्र ही पंख लगाकर, उड़कर वहाँ पहुँच जाए। विवाह में केवल तीन दिन बचे थे। इसलिये रूकमणी ने विनती की कि

वह पत्र पढ़कर उस ब्राह्मण के साथ ही बिना देर किये रूकमणी के पास पहुँच जायें। रूकमणी ने पण्डित को यह समझाया कि वह श्याम सुन्दर जी को जाकर कहें कि रूकमणी को उनके दर्शनों के बिना रात बड़ी भयानक लगती है। उनकी प्रतीक्षा में मन व्याकुल होकर शरीर त्यागकर चला जायेगा। पूर्णिमा का चांद आकर रूकमणी को बहुत जला रहा है, ऐसे लगता है कि कामदेव ही मुख को लाल करके, श्याम सुन्दर जी के बिना उसे डरा रहा है। रूकमणी ने ब्राह्मण को बहुत सारा धन दे कर श्री कृष्ण जी के पास भेजा। वह ब्राह्मण बड़ी स्फूर्ति से श्री कृष्ण जी के पास द्वारका पहुँचा। इस सुन्दर शहर में हीरे, लाल जवाहर जड़े हुए थे, जिनकी मणियों की चमक ऐसी थी जैसे ज्योति जगमगा रही हो। शेषनाग, चांद, वर्ण देवता और इन्द्र देवता की पुरी भी उसके सामने तुच्छ लगती थी। ब्राह्मण ने पत्रिका लेकर श्री कृष्ण जी के सम्मुख रख दी। पत्र को पढ़ कर श्री कृष्ण जी अत्यन्त प्रसन्न हुए। धनुष आदि दिव्य अस्त्रों से सुसज्जित रथ प्रस्तुत हो गया। ब्राह्मण को रथ में बैठाकर मधुसूदन ने भी प्रस्थान किया। श्री कृष्ण जी के विदर्भ जाने का समाचार बलराम जी तक पहुँचा। श्री कृष्ण जी अकेले गये हैं और कन्या-हरण करने पर युद्ध तो होगा ही। बलराम जी ने संकेत करके शड़ख बजाया, विद्युत-गति से नारायणी प्रस्तुत हुई। स्वयं भी हलधर ने सबका नेत त्व करते हुए विदर्भ की ओर कूच किया।

द्वारका से श्री कृष्ण जी रथ पर सवार होकर चल पड़े। उधर शिशुपाल भी जरासंघ, पौण्ड्रक, शाल्वादि को लेकर विदर्भ पहुँच गया। उन्होंने विवाह में बाधा पड़ने पर युद्ध का निश्चय कर लिया था। महाराज भीष्मक ने सबका स्वागत किया विर्दभ नगरी पूर्णतः सुसज्जित थी। विवाह की सभी तैयारियां हो चुकी थीं। पुरोहित देवी पूजन के लिए चले गये। रूकमि बड़ा प्रसन्न हो रहा था कि सभी कार्य निर्विध्न हो रहे थे।

रूकमणी भी देवी पूजन के लिए मन्दिर गई। वहाँ जाकर वह अत्यंत दुखी हुई और कहने लगी,''मैं बड़ी अभागिनी हूँ। भला, वे त्रिभुवन सुन्दर श्री निवास मुझ तुच्छा को क्यों स्वीकार करने लगे। अवश्य ही उन्होंने मुझ में कोई दोष सुना होगा। तीन ही रातें विवाह में बाकी हैं और अभी तक श्याम-सुन्दर नहीं आये। मेरा संदेश लेकर जाने वाला ब्राह्मण भी अभी तक नहीं लौटा। वह पहुँचा भी है या नहीं। वह पहुँचा तो अवश्य होगा। हाँ मुझमें कौन सा ऐसा गुण धरा है। मधुसूदन ने तो पत्र को फाड़कर फेंक दिया होगा।'' रूकमणी उदासीन हो गई। पूरी-पूरी रात्रि द्वारकाधीश का चिन्तन करते जागती रहती। एकान्त में उनके नेत्रों से आंसुओं की झड़ी लग गयी। वे हिचकियां ले रही थीं। सहसा ही नेत्र, भुजा आदि मंगल अंग फड़कने लगे।

''कल्याणी, प्रसन्न हो ! वह भी तुझे मन से चाहता है। वह अपनी नारायणी सेना लेकर आया है।'' रूकमणी ने जैसे ही मुख उठाया उसे सामने वही ब्राह्मण आता दिखाई पड़ा जो संदेशा लेकर गया था। उसे देखकर रूकमणी का मन शांत हो गया। उसने भाव-विभोर होकर ब्राह्मण के पगों पर अपना मस्तक रख दिया।

दुर्गा माँ के मन्दिर में जब रूकमणी रोते हुए देवी के सामने स्वयं को समाप्त करने वाली थी तो उसकी द ढ़ भक्ति देखकर देवी साक्षात् प्रक्ट हुई और कहा,''तुम कृष्ण जी की ही पत्नी हो, शिशुपाल के हृदय की बात कभी भी पूर्ण नहीं हो सकती।'' यह सब सुनकर और देवी से वरदान प्राप्त करके रूकमणी बहुत प्रसन्न हुई जब रूकमणी मन्दिर में देवी पूजन के लिये गई हुई थी तो बाहर विदर्भ सेना के योद्धा चारों ओर से खुले शस्त्र लेकर उसकी रक्षा के लिये खड़े थे। किसी के मन में विघ्न की आशंका नहीं थी। पूजा समाप्त होने पर मौन का परित्याग करके एक सखी का हाथ पकड़े वे मन्दिर से बाहर निकली। विदर्भराज ने राजकुमारी के लौटने के लिये रथ भेज दिया। रथ

मन्दिर के समीप खड़ा था। रूकमणी ने तनिक घूंघट उठाकर राजाओं की ओर देखा। सबके नेत्र पहले से ही उधर लगे हुए थे। उस अलौकिक सौन्दर्य पर द ष्टि पड़ते ही राजाओं के हाथों से अस्त्र शस्त्र छूट गये। उधर रूकमणी के नयनों ने अपने लक्ष्य को ढूंढ लिया उसको दूर गरूड़ ध्वज फहराता हुआ दिखाई पड़ा। एक ही झांकी के बाद रूकमणी ने नयन झुका लिये। वे अपने रथ की ओर बढ़ने लगी।

पलक झपकते ही द्वारकाधीश का रथ उसके रथ के समीप आ पहुँचा। अभी रूकमणी ने अपने रथ पर चढ़ने के लिए पाँव उठाया ही था कि क्षण भर में केशव ने उसे अपनी विशाल भुजाओं से उठाकर अपने पास रथ में बैठा लिया। राजाओं की सेना के भीतर में से दारूक रथ को उड़ाये जा रहा था। श्री कृष्ण जी ने ऊंचे स्वर में कहा,''ओ शूरवीरों ! मैं इसे लेकर जा रहा हूँ। जिसमें ताकत है वह युद्ध करके मुझसे छुड़ा के ले जाये। जो भी कोई मेरे सामने आयेगा, मैं उसे जान से मार दूंगा और कभी भी पीछे नहीं हटूंगा।'' युद्ध शुरू हो गया। श्री कृष्ण जी ने अपने हाथ में धनुष लेकर क्षण भर में ही सबको यमराज के पास पहुँचा दिया। अपनी सेना की यह हालत देखकर रूकमि स्वयं ही क्रोधित होकर युद्ध करने के लिये आ पहुँचा। श्री कृष्ण जी ने तीर चलाकर उसका क्रोध समाप्त कर दिया, रथ तोड़ दिया, रथवान का सर काट दिया और चारों घोड़ों के सर काट दिये। शिशुपाल भी मूर्छित होकर धरती पर गिर पड़ा। श्री कृष्ण जी ने रूकमणी के भाई को केशों से पकड़ लिया और उस के बाल काट दिये और उसकी अच्छी तरह से हंसी उड़ाई। विदर्भ के किसी नर-नारी ने कोई ऐसी चेष्टा नहीं की जिसमें श्री कृष्ण का कोई पीछा कर सके।

अपने भाई की दुर्दशा देखकर रूकमणी ने श्री कृष्ण जी के चरण पकड़ लिये और अनेक प्रकार की प्रार्थनाएँ करके अपने स्वामी के क्रोध को शांत किया। श्री कृष्ण जी रूकमणी को

साथ लेकर द्वारका नगरी चले गये। श्री कृष्ण जी के आने के बारे में सुनकर सब नर-नारी बहुत प्रसन्न हुए। उनके विवाह में सम्मिलित होने के लिये द्वारका नगरी की सारी स्त्रियाँ मिलकर आईं। उन्होंने गीत गा-गाकर अपनी खुशी को प्रक्ट किया। वह मिलकर नाचती गातीं और तालियाँ बजातीं और तो कहना ही क्या देवताओं की स्त्रियाँ भी मिलकर यह सब कुछ देखने के लिये द्वारका पहुँच गईं।

।।सवैया।। एक बजावत बेन सखी
इक हाथ लिए सखी ताल बजावै।
नाचत एक भली बिध सुंदर
सुंदर एक भली बिध गावै।
झांझर एक म्रिदंग के बाजत
आइ भले इक हाव दिखावै।
भाइ करै इक आइ तबै
चित केरन वारन मोद बढ़ावै।।२०११।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ५०६

वेदों की विधिनुसार विवाह संपन्न हुआ। श्री कृष्ण जी की माता ने प्रसन्नचित्त होकर पुत्र और पुत्र वधु को आर्शीवाद दिया। बहुत से ब्राह्मणों को दान दिया। श्री कृष्ण जी और रूकमणी भी आनन्दपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करने लगे।

११

बीच सरद रूत के सजनी
हम खेलत सयाम सो प्रीत लगाई।
आनंद कै अति ही मन मै
तजकै सभही जिय की दुचिताई।
नरि सभै ब्रिज कीन बिखै
मन की तजि कै सभ संक कनह्ाई।
ता संग सो सुखदाइक थी रित
सयाम बिना अब भी दुखदाई।।८७७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७०

शब्दार्थ : सरद—ठंडी ऋतु, पोष का महीना। दुचिताई—दुविधा। संक—शर्म, हया। कनह्ाई—कृष्ण जी।

व्याख्या : सब गोपियों को वह दिन याद आते हैं, जब वह सब पौष के महीने में श्री कृष्ण जी के साथ प्रीत लगा कर खेलती थीं। इस मास में अत्यंत सर्दी तन को काटती है परन्तु उस समय गोपियों का श्री कृष्ण जी के साथ प्रेम और मेल-मिलाप वातावरण को सुहावना बना देता था। गोपियाँ मन में अत्यंत आनन्द प्राप्त करती थीं उल्लास और प्रसन्नता से ओत्-प्रोत् थीं, और उस समय मन की सारी दुविधा दूर कर दी थी, लोक-लाज का उन्हें कोई भय नहीं था और वह निःसंकोच श्री कृष्ण जी से प्रीत करके पुलकित होती थीं अब तो उनके पास कुछ बचा ही नहीं था क्योंकि जब श्री कृष्ण जी ही उनके पास नहीं है, उनसे दूर चले गये, तो फिर प्रेम किसके साथ ? खेल,

रास, मल्हार कैसे और किसके साथ ? यह सब याद करके गोपियों को पौष का मास अति दुखद प्रतीत हो रहा है जब गोपियाँ श्री कृष्ण जी के साथ थीं तो उस समय सब कुछ सुहावना था।

भाव : गोपियाँ सर्दी ऋ तु में अपने मन के भय को त्याग कर, श्री कृष्ण जी के साथ अत्यंत प्रसन्नचित्त होकर आमोद-प्रमोद करती थी।

सयाम सो प्रीत लगाई

जिन जीव आत्माओं का मन उस प्रभु के चरणों में जुड़ जाता है उसकी प्यारी मन-मोहिनी मूर्ति का वास उनके हृदय में हो जाता है, वह हमेशा के लिये उसके साथ जुड़ी रहती हैं और एक क्षण के लिये भी उससे दूर नहीं रह सकती, एक क्षण का बिछुड़ना भी उन्हें तड़पा देता है। संसार की वस्तुएँ उन्हें तुच्छ लगती हैं, संसार के रंग तमाशों में उनका मन नहीं लगता, यह सब कुछ उन्हें निरर्थक लगने लग जाते है, संसार का सारा पसारा झूठ हो जाता है, अगर कुछ सत्य है तो वह है उनका प्यारा, सांवरा, सुन्दर कन्हैया। संसार के पदार्थ यदि उनके प्रिय ईष्ट की पूजा सामग्री बन के रहें, तो वह जरूर रहें, उनके इसी तरह रहने से ही परम सुख है क्योंकि वह अपने प्रियतम के प्रेम में कोई बाधा नहीं ड़ालते, उनके साथ तो उनके प्रिय के चरण कमलों की पूजा होती है परन्तु जो पदार्थ उनके प्रियतम के मेल-मिलाप में बाधा डालते हैं, उनका त्याग करने में ही वह अपना भला समझते हैं। अपने प्रिय ईष्ट से जब प्रेम हो जाता है तो फिर अपना कुछ रह ही नहीं जाता, सब अपने प्रिय के चरण कमलों में अर्पित हो जाता है, सारा कुछ उसी का ही हो जाता है, प्रेमी से प्रिय का और प्रिय से प्रेमी का, एक अटूट रिश्ता बन जाता है, जिसे कोई भी दूर नहीं कर सकता। जो वस्तु अपने प्रिय की बनकर नहीं रहती, जिसके कारण अपने

प्रियतम के चरणों मे आत्म सर्मपण करने मे बाधाएँ आयें, उसका त्याग करना ही उचित होता है। इसी तरह करमैती बाई ने अपने माता, पिता, घर सब कुछ अपने प्रिय इष्ट की खातिर त्याग दिया और व ंदावन की गलियों की ओर अपने मन को अपने प्रियतम के चरणों में लगाने के लिय चल पड़ी।

करमैती बाई के पिता पण्डित परशुराम जी खंडेला राज्य के कुल पुरोहित थे। करमैती तो सद्‌गुणों की असीम भंडार थी। अपने पूर्व जन्म के कर्मों के फलस्वरूप करमैती का मन सदैव अपने प्रिय श्याम सुन्दर के चरणों में लगा रहता। वह सदैव अपने प्रिय इष्ट का स्मरण करती रहती। एकांत स्थान ढूंढकर करमैती वहाँ बैठी हाय नाथ ! हाय नाथ ! पुकारती रहती। अपने प्रिय की स्म ति में उसके प्रेम अधीन होकर वह कभी हंसती, कभी रोती और कभी ऊँची सुरीली आवाज़ में अपने प्रिय श्याम सुन्दर जी को स्मरण करके कीर्तन करने लगती। छोटी सी बच्ची को कीर्तन करते देखकर घर और बाहर के लोग अत्यंत प्रसन्न होते।

अब करमैती तरूण अवस्था को प्राप्त कर चुकी थी और विवाह के योग्य हो गई थी। माता-पिता ने उसके लिये सुयोग्य वर ढूंढना शुरू कर दिया परन्तु करमैती को यह सब तनिक भी पसन्द ना था। वह लोक-लाज के कारण किसी को भी अपने मुख से कुछ न कहती परन्तु यह सब कुछ उसे विष के समान लगता। उसके पिता ने उसकी इच्छा विरूद्ध उसका विवाह कर दिया परन्तु मन ही मन में करमैती स्वयं को श्री कृष्ण जी के चरणों में अर्पित कर चुकी थी। श्याम सुन्दर जी की वस्तु पर किसी और का अधिकार वह कतई सहन नहीं कर सकती थी। उसका विवाह तो अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के साथ हो चुका था। इसी कारण वह उन्हीं के ध्यान में मग्न रहती। कुछ दिन तो इसी प्रकार निकल गये, परन्तु एक दिन ससुराल वाले करमैती को लेने के लिये आ गये, उसे पता चला कि उसके

ससुराल वाले नास्तिक थे और भगवान के प्रति उनकी तनिक भी श्रद्धा नहीं थी। वह साधुओं संतों के विरोधी थे। वहाँ वह अपने प्रिय श्याम सुन्दर जी को स्मरण नहीं कर सकेगी। यह सब कुछ सोचकर वह व्याकुल हो उठी और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। उसने अपने प्रिय इष्ट को याद करते हुए विनती की,"हे मेरे प्रिय नाथ ! मेरी इस संकट से रक्षा करो, क्या यह आपके चरणों की दासी किसी और की दासी बनेगी ? क्या आप कुछ ऐसा उपाय नहीं कर सकोगे जिस से आपकी यह दासी आपके चरणों का ही ध्यान कर सके ? क्या कुछ ऐसी क पा नहीं हो सकती जिससे वह ब ज भूमि में पहुँचकर वहाँ की पवित्र पावन धूल को अपने मस्तिष्क पर लगा सके ?"

करमैती के माता-पिता उसको ससुराल में भेजने की तैयारियों में लगे हुए थे, उधर करमैती बाई अपने प्रिय की धुन में मस्त थी। सारा परिवार सारे दिन की थकान के उपरान्त सो गया परन्तु करमैती अपने प्रिय प्रभु के चरणों में ध्यान लगाए हुए समाधि में लीन थी। सहसा ही उसके मन में एक विचार आया कि दुनियावी जंजालों झमेलों में फँसकर, अपने प्रिय प्रभु का स्मरण नहीं किया जा सकता, यह सब तो उससे बेमुख करते हैं।

इस तरह सोचकर आधी रात के समय करमैती अन्धेरों को चीरती हुई घर से बाहर निकल पड़ी। करमैती कभी भी घर से बाहर अकेली नहीं निकली थी परन्तु अपने ध्यान को अपने श्याम सुन्दर के चरणों में लगाकर निड़र और हिम्मत कर घर को छोड़ कर चल पड़ी। उस समय उसका प्रिय इष्ट उसके अंग-संग था, फिर भला उसे किसी का क्या भय था। उस समय उसे यह पता ही नहीं था कि वह किस ओर जा रही है, उसकी मंज़िल कौन सी है; उसका ठिकाना कहाँ है ?

दिसि अरू बदिस पंथ नहीं सूझा।
को मैं कहां नहीं बूझा।

करमैती बाई तो तीव्र कदमों से आगे बढ़ती ही जा रही थी। प्रातःकाल हो गया। परिवार के लोग जब नींद से जागे तो माता को अपनी सुपुत्री घर में दिखाई नहीं दी। माता-पिता दोनों चिन्तातुर हो उठे, एक तो उन्हें अपनी प्रिय पुत्री नहीं दिखाई दे रही थी और दूसरी लोक-लाज सता रही थी। उन्हें तो अपनी प्रिय सुपुत्री पर पूर्ण भरोसा था परन्तु गाँव के लोग तो जरूर उसे कलंकित समझेंगे। परशुराम अत्यंत दुखी होकर अपने यजमान राजा के पास गया। राजा ने उसकी सहायता करने के लिये चारों ओर अपने सैनिक भिजवाये। दो घुड़सवार उसी रास्ते की ओर चल पड़े जिस तरफ करमैती बाई जा रही थी। जब करमैती ने घोड़ों की टापों की आवाज सुनी तो उसे होश आई कि यह घुड़सवार तो उसका पीछा करते हुए उसके पास आ पहुँचे हैं। वहाँ छुपने के लिये आस-पास न तो कोई पहाड़ की गुफा थी और न ही किसी व क्ष का नामों निशान। वहाँ तो दूर-दूर तक फैला हुआ रेगिस्तान ही दिखाई दे रहा था। करमैती ने चारों ओर नज़र दौड़ाई। उसे वहाँ एक मरा हुआ ऊँट दिखाई दिया। गिद्धों ने ऊँट के पेट में से सारा मास खाकर उसे खोखला कर दिया था। करमैती दौड़कर उस दुर्गन्ध भरे ऊँट के खोखले पेट मे जा छुपी। मरे हुए ऊँट की दुर्गन्ध दूर-दूर तक फैली हुई थी। वहाँ घड़ी भर ठहरना भी मुश्किल था। घुड़सवार दुर्गन्ध के कारण वहाँ से लौट गये।

करमैती बाई अपने प्रिय श्री कृष्ण जी की भक्ति में लीन होकर ऊँट के खोखले पेट के अन्दर तीन दिन निरंतर छुपी रही। उसके प्रिय ने भी अपार क पा की और उस दुर्गन्ध को सुगंध में बदल दिया। चौथे दिन वह बाहर निकलकर अपनी मंज़िल की ओर चल पड़ी। उसने हरिद्वार पहुँच कर गंगा स्नान किया। वहाँ से चल कर वह अपने सांवरे की लीला भूमि व ंदावन में पहुँची। वहाँ तो सच्चे साधु-संतों, वैरागियों के समूह रहते थे। चारों ओर श्री कृष्ण जी की अपार महिमा का वर्णन

होता रहता। सारा दिन करमैती बाई अपने प्रिय को याद करके आनन्द मग्न रहती। उसके पिता उसको ढूंढते-ढूंढते वंदावन आ पहुँचे परन्तु करमैती को ढूंढना कोई आसान नहीं था। उन्होंने खूब खोज की। एक दिन एक वक्ष पर चढ़कर उन्होंने देखा कि दूर एक स्त्री साधुओं के वस्त्र पहनकर बैठी थी। पास जाकर देखा तो वह तपस्विनी उनकी अपनी प्यारी सुपुत्री थी। उसके नेत्र अपने प्रिय ईष्ट की मधुर याद में भीगे हुए थे और ध्यान चरणों में लीन। पिता अपनी प्रिय भक्त सुपुत्री को देखकर धन्य हो गये। परशुराम कई घंटे अपनी पुत्री के पास बैठे रहे परन्तु उसने अपने नेत्र नहीं खोले क्योंकि वह तो समाधि में अपने प्रिय श्याम सुन्दर जी के ध्यान में मग्न हुई थी। आखिर पिता अपनी पुत्री को हिला-हिला कर होश में लाये और घर जाकर भजन करने के लिये कहाँ पुत्री पर कोई असर न हुआ। उत्तर में उसने कहा,''पिता जी यहाँ आकर कौन वापिस जाता है। फिर मैं तो अपने प्रेमी के प्यार के समुद्र में डूबकर स्वयं को गंवा बैठी हूँ, जीते जी मर चुकी हूँ। अब मेरी माता को साथ लेकर श्री कृष्ण जी का भजन किया करो। इसके अतिरिक्त और कहीं सुख नहीं मिलता।'' अपने सांवरे का गुणगान करती-करती करमैती बाई फिर बेसुध हो गई। पिता अपनी सुपुत्री की गहरी प्रीति को देखकर धन्य-धन्य हो गये। ऐसी सुपुत्री पाकर वह स्वयं को भाग्यशाली समझ रहे थे।

राजा ने परशुराम से करमैती बाई की कथा सुनी। वह स्वयं उसके दर्शन करने के लिये वहाँ पहुँचा। राजा का सर करमैती के सामने सम्मान सहित झुक गया। राजा ने करमैती के लिये एक कुटिया बनवा दी। करमैती वहीं बैठकर भजन करती। उसका मन अपने प्रिय श्याम सुन्दर के बिना एक क्षण भर के लिये भी न रह पाता, उसकी आँखों में सदैव ही श्रावन ऋतु बनी रहती। वह तो एक बड़ी महान तपस्विनी बन चुकी थी।

१२

।।सवैया।। माघ बिखै मिल कै हरि सो
हम सो रस रास की खेल मचाई।
कानह् बजावत थो मुरली
तिह अउसर को बरनयो नहीं जाई।
फूल रहे तिह फूल भले
पिखियै जिह रीझ रहे सुर राई।
तउन समै सुखदाइक थी रित
सयाम बिना अब भी दुखदाई।।८७८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७०

शब्दार्थ : रस—प्यार, प्रेम। रास—खुशी का खेल। पिखियै—देखकर। सुर राई—देवताओं का राजा इंद्र।

व्याख्या : माघ महीने की याद को गोपियाँ किस तरह भूल सकती है। इस मास में श्री कृष्ण जी ने अपनी प्रिय गोपियों के साथ मिलकर रस भरी रास-लीला रचाई थी। रास-लीला करते समय, तरह-तरह की क्रीड़ाएँ की जातीं, एक दूसरे से हास्य-विनोद करके वातावरण में आनन्द-उल्लास और प्रसन्नता के फुहारे फूट पड़ते जिस की शीतलता गोपियों के तन-मन को एक अद्भुत प्रेम का अनुभव कराती। वातावरण और भी सुहावना और रमणीय हो जाता जब श्री कृष्ण जी बाँसुरी बजाकर अपनी मीठी धुनों के द्वारा प्रक ति के कण-कण में अम त और महक का छिड़काव कर देते। जब श्री कृष्ण जी अपने मधुर कण्ठ के द्वारा मुरली पर तरह-तरह के राग अलापते, तो उस समय का वर्णन शब्दों के द्वारा करना अति कठिन हो जाता। उसकी अपार

महिमा का गुणगान करना अत्यंत कठिन था। एक ओर रासलीला, दूसरी ओर बाँसुरी की सुरीली धुन और खिले हुए फूल, उस शोभा चार चाँद लगा देते। हर क्यारी में विभिन्न रंगों के फूल खिले हुए थे, उन फूलों की सुन्दरता और उनकी सुगंधि से तो इन्द्र देवता भी रीझ रहा था। वह समय कितना सुहावना था जब गोपियों को श्री कृष्ण जी का सुखदायक संग प्राप्त था, आनन्द दायक दर्शनों की दात उपलब्ध थी और अब श्री कृष्ण जी के बिना वह समय कितना दुखदायक हो गया था। श्री कृष्ण जी गोपियों को विरह की जलती हुई आग में झोंक गये थे, दिन-रात गोपियाँ तड़प-तड़प कर सिसकियाँ लेती और उनकी मीठी याद में व्यतीत किया हुआ हर पल, हर क्षण गोपियों को याद आता है, और वह अति दुःख, वेदना, और व्यथा के गहरे सागर में अपने प्रिय इष्ट के बिना डूबती जा रही हैं।

भाव : रासलीला करते समय, मुरली की मनोहर ध्वनि सुनकर गोपियों के हृदय को जो आनन्द मिलता, उसका वर्णन शब्दों के द्वारा नहीं किया जा सकता।

रस रास की खेल मचाई

श्री कृष्ण भगवान जी ने गोपियों के चीरहरण के उपरांत गोपियों से वादा किया कि उनके साथ कार्तिक के महीने में रासलीला करेंगे। उसी समय से ही सारी गोपियाँ दिन-रात कार्तिक के मास की प्रतीक्षा करने लगीं। प्रतीक्षा समाप्त हो गयी, ग्रीष्म ऋतु और वर्षा ऋतु का अन्त हो गया, हल्की-हल्की सर्द ऋ तु सुहावनी और सुखदायक लगने लगी, सरोवरों का जल निर्मल हो गया, मोर चकोर, कपोत, हंस इत्यादि पक्षी आनन्द से रहने लगे। ऐसे रमणीय, सुहावने समय में श्री कृष्ण जी कार्तिक मास की चाँदनी रात में भवन से बाहर निकल के वन की ओर चल पड़े। निर्मल आकाश में तारे झिलमिला रहे थे, चाँद की चाँदनी हर कण को प्रकाशित कर रही थी, मन्द-मन्द शीतल समीर बह रही थी। ऐसे

समय में श्री कृष्ण जी को गोपियों के साथ किया हुआ रास रचाने का अपना वादा याद आ गया।

श्री कृष्ण जी ने हंसकर गोपियों को कहा कि जिस प्रकार चाँद श्वेत है, गोपियों के सुन्दर मुखड़े भी श्वेत हैं और श्वेत ही हार गलों में पहने हुए हैं। ब ज भूमि में सभी प्रेम से एक दूसरे के गले में बाहें डालकर रसभरी क्रीड़ाएँ करने के लिये लालायित हो रहे थे। श्री कृष्ण जी ने गोपियों को सांत्वना दी कि विरह के कारण जो दर्द, कसक, गोपियों के हृदय में उत्पन्न हो गई थी उसे खेल, क्रीड़ाएँ करके समाप्त करेंगे। गोपियाँ तो अनेक हैं, यह सोचकर श्री कृष्ण जी ने योग माया रची। जितनी गोपियाँ थी उतने ही रूप धारण कर लिये और रास मण्डल के चबुतरे पर गोपियों को साथ लेकर रास विलास प्रारम्भ किया।

श्री कृष्ण जी ने गोपियों को कहा कि वह एक-दूसरे का हाथ थाम कर एक चक्र बना लें। श्री कृष्ण जी और बलराम जी दोनों भाई मिल कर गोपियों के साथ न त्य करेंगे। गोपियों ने श्री कृष्ण जी के वचन सुनकर सांत्वना प्राप्त की और उनके मन में जितने भी कोप थे वह सारे ही 'रस' की आग में सूखे पत्तों की तरह जल गये। सबने मिलजुल कर रासलीला आरंभ की। ब ज भूमि पर हो रही रासलीला को देखकर धरती पर रहने वाले लोग प्रसन्न हो रहे थे और आकाश में तारा मण्डल आदि भी खुशी प्रकट कर रहे थे। ब ज की स्त्रियाँ बड़े प्रेम से गाती और तालियाँ बजाती। श्री कृष्ण जी भी उनके सुर में सुर मिलाकर मधुर ध्वनि में गाते थे। उस स्वर को सुनकर सब गोपियाँ प्रसन्नता से बावरी हो रहीं थी।

रास में सब गोपियाँ बड़े रस से अपने मन भावन को रिझाने में लगी हुई थी। एक गोपी नाचती है, एक गीत गाती है और एक ताली बजाती हुई गीत के भावों को प्रकट करती है। श्रावन ऋतु की सुन्दर चाँदनी रात में गोपियाँ घरों को छोड़कर मिलकर सुहावनें सुन्दर स्थान पर रास लीला करती थीं। उस

मनमोहक द श्य को देखकर पक्षी भी प्रसन्न हो रहे थे। श्री कृष्ण जी ग्वालों के साथ मिलकर गाते थे और दूसरी ओर सब गोपियाँ मिलकर गाती थीं। ऐसे लगता जैसे आमों के पेड़ों पर कोयलें कूक रहीं हों। यमुना नदी का तट इस खेल क्रीड़ा का सुहावना स्थान था। देवता इस कौतुक को देखकर प्रसन्न हो रहे थे और देवताओं की स्त्रियाँ भी मिलकर सारा द श्य देखने के लिये उस रमणीय स्थान पर पहुँचीं। श्री कृष्ण जी ने बहुत ही विचित्र मण्डल रचा हुआ था।

मंडल रास बचित्र महा सम
जे हरि की भगवान रचयो है।।
ताही के बीच कहै कबि इउ रस
कंचन की सम तुलि मचयो है।।
ता सी बनाइबे को ब्रहमा न बनी
करि कै जुग कोटि पचयो है।।
कंचन कै तन गोपनि के तिह
मद्धि मनी मन तुलि गचयो है।।५२६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३२२

जिस तरह जल में मत्स्य खेल करती है उसी तरह सब गोपियाँ श्री कृष्ण जी के साथ विचर रही थीं, रस का अनुभव करती थीं। सब गोपियाँ श्री कृष्ण जी के चरणों में विनती करती हैं।

।।सवैया।। **अैहो लला नंद लाल कहै**
सभ गव्ारनीया अति मैन भरी।।
हमरे संग आवहु खेल करो
न कछू मन भीतरि संक करी।।
नैन नचाइ कछू मुसकाइ कै
भउह दोऊ करि टेढ धरी।।
मन यौ उपजी उपमा रस की
मनो कान्ह के कंठहि फांस डरी।।५२६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३२२

ब ज भूमि में यमुना नदी के तट पर बहुत ही सुन्दर द श्य बना हुआ था। उस समय के गायन को देखकर गंर्धवों के झुंड ईर्ष्या कर रहे थे और अप्सराएँ सुन्दर न त्य देखकर लज्जित हो रही थीं। रस लेने के लिये ही श्री कृष्ण जी ने रास मण्डल बनाया और वहाँ रास रचाई। गोपियों की खेल क्रीड़ाएँ देखकर देवताओं ने अप्सराओं को पहाड़ों की गुफाओं में छुपा दिया कि कहीं वे भी श्री कृष्ण जी के पास न चली जाए। सब गोपियाँ श्री कृष्ण जी के साथ ही घूमती फिरती थी। एक गाती थी, एक नाचती थी, और एक रास रंग में मस्त होकर चुप चाप आनंद ले रही थी।

कुछ तो कह रहीं थी कि श्री कृष्ण जी तो प्रत्यक्ष हरि का स्वरूप हैं और कुछ हरि का नाम लेते ही धरती पर गिर पड़तीं थीं। ऐसे प्रतीत हो रहा था जैसे श्री कृष्ण जी चुम्बक हों और गोपियों के रूप में सुईयाँ उनके साथ चिपक गयी हों। श्री कृष्ण जी गायों को पुकारने के बहाने से गोपियों को आकर्षित करने के लिये बाँसुरी बजाते थे। बाँसुरी की सुरीली धुन को सुनकर राधा, जिसका मुख-मण्डल पूर्णिमा के चाँद की भाँति था, जिसके तन की चमक सोने की भाँति थी, हिरनी की तरह चौकड़ी मारती चली आई। राधा तो रम्भा, उर्वशी, मंदोदरी इत्यादि से भी सुन्दर थी। पूर्ण रूप से हार श¨गार करके राधा श्री कृष्ण जी के संग रासलीला के लिये पहुँची। राधा चाँद की चाँदनी थी और उनके समक्ष सब गोपियाँ दीपकों के समान थी। यदि सब गोपियाँ काले बादलों की घटाएं थीं तो राधा दामिनी रूप होकर चमक रही थी। राधा की सुन्दरता को देखकर शिवजी की समाधि भंग हो गई, रति के पति कामदेव के मन से अपने सुन्दर होने का अहंकार टूट गया। राधा को सारी स्त्रियों में से राजा स्त्री माना गया है।

हार श¨गार से सुसज्जित होकर राधा श्री कृष्ण जी के साथ रासलीला करती। राधा चंद्रप्रभा, चंद्रभगा और अन्य गोपियों से भी हास-परिहास करती थी। राधा ने कहा,

याही के हेत सुनो सजनी
हम लोकन को उपहास सहयो है।।
स्त्रउनन मै सुनि रास कथा
तब ही मन मै हम धयान गहयो है।।
सयाम कहै अखीआ पिखकै
हमरे मन को तन मोहि रहयो है।।५४६।।

—दशम ग्रंथ पष्ठ ३२४

राधा भी श्री कृष्ण जी के चरण स्पर्श करने के लिये उस स्थान पर पहुँचती है जहाँ भगवान श्री कृष्ण जी ने रास मण्डल की बड़ी अदभुत रचना की हुई थी। नीचे यमुना सुशोभित हो रही थी और ऊपर चाँद अपनी भरपूर चाँदनी बिखेर रहा था। श्वेत वस्त्रों में गोपियाँ इस तरह सुशोभित हो रही थी मानो रास मण्डल रूपी उपवन में यह फूलों की फुलवाड़ी खिली हो। राधा श्री कृष्ण जी के दर्शनों की अभिलाषी होकर उनके चरणों से लिपट गई, शर्म और लाज की निंद्रा को त्याग दिया, स्वयं को भाग्यशाली समझकर श्री कृष्ण जी से क्रीड़ाएँ करने लगी।

।।दोहरा।। क्रिसन राधका संग कहयो अति ही बिहसि कै बात।
खेलहु गावहु प्रेम सो सुन सम कंचन गात।।५५४।।

—दशम ग्रंथ पष्ठ ३२६

श्री कृष्ण जी अत्यन्त प्रसन्न हुए और राधा को कहा कि वह प्रेम मग्न हो क्रीड़ाएँ करे और रास में गीत गाए। राधा अपने ह्रदय में अति प्रसन्न हुई और फिर गोपियों के संग मिलकर रास में गीत गाने लगी। रस के साथ उसका मन भीग गया। राधा ने एक ठगनी की भाँति श्री कृष्ण जी की आँखों को रस के छलावे से छल लिया।

रास लीला करते समय बहुत ही सुन्दर ढंग से गीत गाये जाते थे। राधा प्रसन्नचित होकर तालियाँ बजाती। जो सखियाँ रास में सुशोभित हो रही थीं उनके मुख की आभा चाँद की

चमक-दमक के समान थी और उनकी आँखें कमल के फूलों के समान थी। वह सब गोपियाँ लोगों के दिलों को चुरा लेती थी। चंद्रप्रभा का रूप शची के समान था। ब ज छटा के दांत अनार के दानों की तरह थे। वह सब श्री कृष्ण जी के स्वरूप को देखकर अति प्रसन्न होती, स्वर्णप्रभा और चंद्रप्रभा की सुन्दरता के समक्ष सबकी सुंदरता तुच्छ थी। श्री कृष्ण जी के सुन्दर स्वरूप को देखते ही गोपियाँ उनको अपने से अधिक सुन्दर जानकर रस के वश में हो गई। साब गोपियों ने मन की सारी लज्जा को त्याग दिया और श्री कृष्ण जी के संग खेलने के लिये उत्साहित हुई। अति सुन्दर स्त्रियाँ श्री कृष्ण जी के अति सुन्दर स्वरूप पर मोहित हो गई, ऐसे प्रतीत हो रहा था जैसे श्री कृष्ण जी के सुन्दर स्वरूप को देखकर सब गोपियाँ स्वयं ही श्री कृष्ण जी का रूप हो गई हो।

सब गोपियों को प्रभु ने बडी रुचि से बनाया हुआ था। ब्रह्मा जी की भी उन पर विशेष क पा थी, इसी कारण उनकी कमर पतली और सुन्दर बनाई थी। उन सब गोपियों की श्री कृष्ण जी के साथ गहरी और सच्ची प्रीति थी।

श्री कृष्ण जी की आज्ञा प्राप्त करके सब गोपियाँ बड़े सुन्दर ढंग से रास करती थीं, जिस प्रकार इन्द्र की सभा में रंभा न त्य करती है और जिस प्रकार अनेक खेलों के लिये वह नाटक करती है। यह किन्नरों की पुत्री है या यक्षों की ? या यह तच्छक की पुत्री है। रास में इस प्रकार न त्य करती है जिस प्रकार जल में रहकर मछली न त्य करती है। सब गोपियाँ श्री कृष्ण जी के संग मिलकर रासलीला करती थीं। उस समय न तो उन्हें अपने तन की सुध थीं और न ही उन्हें अपने वस्त्रों की चिंता।

श्री कृष्ण जी की आज्ञानुसार गोपियाँ सुन्दर रसीले गीत गाती और नाचती। उनके सुन्दर न त्य को देखने के लिये देवता आकाश को त्याग कर ब ज भूमि में आ पहुँचे। आकाश में जाते हुए देवता और गंधर्व श्री कृष्ण जी और गोपियों की रास क्रीड़ाओं को देखकर

चलने में असमर्थ हो गये, वह वहीं खड़े होकर प्रसन्न हो रहे थे। सुन्दर स्त्रियाँ आपस में एक-दूसरे का हाथ पकड़कर और व ताकार होकर नाचने लगीं और किसी का तो कहना ही क्या, इस रासलीला का आनंद प्राप्त करने के लिये सारी इन्द्र सभा अपने इन्द्र लोक को छोड़कर ब ज भूमि में आ गई।

श्री कृष्ण जी का आदेश मानकर रास में चंद्रभगा, चंद्रमुखी और राधा मिलकर बड़े ही रस रंग में विलीन होकर खेलती थीं। वह तालियाँ बजा बजा कर श्री कृष्ण जी के साथ गीत और जिस समय श्री कृष्ण जी उन्हें प्यार भरी द ष्टि से देखते वह धरती पर बेसुध होकर गिर पड़ती। गोपियाँ बड़ी महीन और सुरीली ध्वनि में गाती थी, उनके पैरों में नुपुरों की ध्वनि ऐसे लगती जिस प्रकार ढोलक के साथ तम्बूरा बजता है या नगाड़ों के साथ नरम-नरम म दंग की ध्वनि उठती है अथवा गोपियों के पैरों की ध्वनि ढोलक जैसी और नुपुरों की ध्वनि तानपुरे की तरह प्रतीत होती। रासलीला का सिलसिला दिन-रात निरंतर चलता रहता।

जो भी स्त्री रास में खेलने के लिये आई, उसने अपने तन पर सुन्दर पोशाक सजाई हुई थी। किसी ने पीले, किसी ने केसर रंग के और किसी ने लाल और हरे रंग के वस्त्र पहने हुए थे। इस तरह प्रतीत होता था जैसे धरती रूपी गोपी नाचते-नाचते गिर पड़ी हो और श्री कृष्ण जी के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त कर रही हो, क्योंकि दर्शनों से तो नयनों की त प्ति नही हो रही थी। धरती भी गोपी है जो थक हार कर गिर पड़ी हो, जैसे रंग-रंग की वनस्पति के फूल ही उसके रंग-बिरंगे वस्त्र हों और सूरज चाँद रूपी नयनों से धरती रूप गोपी हरि को निहार रही हो। श्री कृष्ण जी का गोपियों से असीम प्रेम दिन प्रतिदिन बढ़ने लगा।

यमुना नदी के किनारे रासलीला के उपरांत श्री कृष्ण जी ने गोपियों के साथ कुंज गलियों में रास रचाने की योजना बनाई। श्री कृष्ण जी की आज्ञा का पालन करके गोपियों ने कुंज

गलियों में अपनी रासलीला प्रारंभ कर दी। सुरीले गीत जो श्री कृष्ण जी को पसन्द थे वही गाने आरम्भ कर दिये। सब गोपियाँ खेल के रस में मतवाली होकर श्री कृष्ण जी के इर्द-गिर्द मंड़राती थी। श्री कृष्ण जी उन्हें छू लेना चाहते थे, परन्तु वह पकड़ में नहीं आ रही थी। श्री कृष्ण जी ने उस रात्रि की अवधि छः महीनों की कर दी। रात्रि के अंधेरे में श्री कृष्ण जी ने गोपियों को घेर लिया। उन की पलकों के संकेत से ही वह धरती पर अचेत हो गिर पड़ीं। श्री कृष्ण जी रस में महारसीये थे। श्री कृष्ण जी ने जब चंद्रभगा की स्तुति की तो राधा यह सहन न कर पाई और मन में सोच लिया कि श्री कृष्ण जी को छोड़ के जाने में ही भलाई है।

श्री कृष्ण जी ने राधा की खोज करनी आरंभ कर दी परन्तु राधा कहीं न मिली। फिर बिजछटा को राधा को लाने के लिये भेजा गया परन्तु व्यर्थ। बिजछटा ने बार-बार राधा को मुरली की महिमा के बारे में बताया,

।।सवैया।। मुरली जदुबीर बजावत है
कबि सयाम कहै अति सुंदर ठउरैं।।
ताही ते तोरे हउ पास पठी सु
कहयो तिह लियाव सु जाइकै दउरैं।।
नाचत है जह चंद्रभगा अरु
गाइकै गवारनि लेत है भउरैं।।
ताही ते बेग चलो सजनी
तुमरे बिन ही रस लूटत अउरैं।।६८५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३४३

राधा श्री कृष्ण जी के पास जाने के लिए तैयार न हुई। फिर मेनप्रभा ने राधा को लाने का वादा किया परन्तु उसका भी कोई लाभ न हुआ। फिर चंद्रमुखी ने भी राधा को मनाने का प्रयत्न किया।

जिह घोर घटा घन आए घनै

चहू ओरन मै जह मोर पुकारै।।
नाचत है जह गव्ारनीया
तिह पेखि घनो बिरही तन वारै।।
तउन समै जदुराइ सुनो
मुरली को बजाइ कै तोहि चितारै।।
ताही ते बेग चलो सजनी
तिह कउतक को हम जाइ निहारै।।६६८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३२४

चंद्रमुखी के प्रयत्न निष्फल गये। उसने राधा को बहुत समझाया।

।।सवैया।। **कुंजन मै सखी रास समै**
हरि केल करे तुम सो बन मै।।
जितनो उनको हित है तुहि सो
हित ते नही आधिक है उन मै।।
मुरझाइ गए बिन तवै् हरि जू
नहि खेलत है फुन गव्ारनि मै।।
तिह ते सुन बेग निसंक चलो
करकै सुध पै बन की मन मै।।७१८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३४८

लाख प्रयत्न के पश्चात भी जब राधा श्री कृष्ण जी के पास ना गई तब श्री कृष्ण जी स्वयं राधा को लेने के लिये गये। वहाँ पहुँच कर उन्होंने राधा को बताया कि वह उनकी सबसे प्रिय, अत्यंत प्रिय सखी है। वह तो उसके बिना एक क्षण भी नहीं रह सकते।

।।सवैया।। **मेरो धनो हितु है तुम सों**
सखी अउर किसी नहि गव्ारनि माही।।
तेरे खरे तुहि देखत हों
बिन तवै् तुहि मूरत की परछाही।।
यों कहि कानह् गही बहीयां
चलीयै हमसों बन मै सुख पाही।।

हहा चलु मेरी सौ मेरी सौ मेरी
सौ तेरी सौ तेरी सौ नाही जू नाही।।७३३।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३५०

अपने विषय में स्तुति सुनकर राधा निहाल हो गई, अति प्रसन्नचित्त हो गई, जब श्री कृष्ण जी से पानी में कूदने वाली बात सुनी तो राधा उत्तेजित होकर नदी में जा कूदी। श्री कृष्ण जी भी अनुगमन करते हुए पानी में कूद पड़े और राधा को थाम लिया। उनको रासलीला करते देखकर यमुना नदी भी रीझ गई और फिर,

जल ते कढि कै फिर गव्ारन सो
कबि सयाम कहै फिर रास मचायो।।
गावत भी ब्रिखभान सुता
अति ही मन भीतर आनंद पायो।।
ब्रिज नारिन सो मिल कै ब्रिजनाथ
जू सारंग मै इक तान बसायो।।
सौ सुनकै म्रिग आवत धावत
गव्ारनिया सुनकै सुखु पायो।।७५४।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३५३

श्री कृष्ण जी ने राधा को पानी में से निकालकर रास रचाया। राधा अत्यंत प्रसन्न हुई। रास में फिर गाने लग पड़ी। श्री कृष्ण जी ने गोपियों के साथ मिलकर जब राग सारंग में एक तान छेड़ी तो सब गोपियाँ सुनकर बहुत आनन्दित हुईं। उसको सुनकर वन की हिरनियाँ भी आकर्षित हो वहाँ पहुँच गईं।

इस तरह, श्री कृष्ण जी की गोपियों के साथ रचाई हुई रासलीला से यमुना तट और ब ज की कुंज गलियां उल्लास और आनन्द से गूंज उठीं और यह प्रक्रिया तब तक चलती रही जब तक श्री कृष्ण जी ब ज की गलियां त्याग कर मथुरा न चले गये।

१३

।।सवैया।। सयाम चितार सभै तह गव्ारन
सयाम कहै जु हुती बडभागी।
तयाग दई सुघ अउर सभै
हरि बातन के रस भीतर पागी।
एक गिरी धर ह्वै बिसुधी
इक पै करुना ही बिखै अनुरागी।
कै सुध सयाम के खेलन की
मिलकै सभ गव्ारनि रोवन लागी।।८७६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७१

शब्दार्थ : चितार—स्मरण करके। बातन—श्री कृष्ण जी की बातों के रस। पागी—भीग गई। बिसुधी—बे-सुरति, बेहोश होकर। पै—परन्तु, लेकिन। करूना—गोपियों की हालत पर तरस करने में ही। अनुरागी—प्रेम सहित, मस्त हो गई। सुध—श्री कृष्ण जी की क्रीड़ाएँ करके।

व्याख्या : श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी उच्चारण करते हैं जो गोपियाँ भाग्यशाली हैं, वह सब की सब ही श्री कृष्ण जी को याद करती हैं। केवल भाग्यशाली गोपियों को ही श्री कृष्ण जी को स्मरण करने का सौभाग्य प्राप्त है। यह भी प्रभु की अपार क पा के कारण ही है। उन गोपियों को किसी और वस्तु की सुध बुध न रही, किसी भी और काम में उनका ध्यान न लगता, वह तो केवल अपने प्रिय की स्म ति में ही मस्त और बेसुध थीं। उनका मन तो केवल अपने प्रिय की रस भरी बातों के रस में भीगा हुआ था और किसी वस्तु या किसी बात का रस तो उन्हें आ ही नहीं सकता था। एक गोपी तो अपने प्रिय कृष्ण भगवान

जी की याद में बेसुध होकर गिर पड़ी, उसे अपने तन-मन की कोई होश न रही, एक प्रेम मग्न होकर विलाप करने लगी। उन्हें तो श्री कृष्ण जी के साथ मिलकर खेलने के द श्य भूलते ही नहीं। लाखों प्रयत्नों के पश्चात भी उनका मन उन प्रेम भरी क्रीड़ाओं से मुक्त नहीं होता। बार-बार उनकी याद आकर उन्हें सताती है, तड़पाती है और श्री कृष्ण जी के साथ बीते हुए क्षणों को याद करके सारी गोपियाँ ज़ोर-ज़ोर से विलाप करती हैं क्योंकि श्री कृष्ण जी के बिना यह समय, यह क्षण, यह घड़ियाँ अति दुःखदायक है।

भाव : गोपियाँ हर समय अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के रस में भीगी रहती। उन्हें और किसी बात की सुध ही कहां थी ? वह अपने प्रिय इष्ट की याद में अचेत और बेसुध थीं।

तयाग दई सुध और सभै

श्रीमद् भागवत पुराण के प ष्ठों पर विदुर का नाम एक अपना ही विशेष अस्तित्व रखता है, पुराण का हर पात्र विदुर से परिचित है। उसकी नीती विश्व विख्यात है और उससे ध तराष्ट्र सदैव परामर्श लेते थे। विदुर जी विद्वान और बुद्धिमान थे और चतुराई की साकार प्रतिमा थे। वह श्री कृष्ण जी के असीम प्रेम और गहरी प्रीति के पात्र भी थे। श्री कृष्ण जी उन्हें उनके सद्गुणों के कारण बहुत प्रेम करते थे। दूसरी ओर विदुर की पत्नी, लक्ष्मीकांता देवीदासी श्री कृष्ण जी से अत्यंत प्रेम करती थी उसके अंतःकरण में श्री कृष्ण जी की मोहिनी मूर्ति का निवास था। उस मोहिनी मूर्ति के दर्शन करने की अभिलाषा सदैव ही उसके अंतःकरण में बनी रहती।

श्री कृष्ण जी पाण्डवों के शांति दूत बनकर हस्तिनापुर पहुँचे। उनके आगमन की खबर सुनकर दुर्योधन ने श्री कृष्ण जी के स्वागत के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार की सामग्री जुटाई और हर प्रकार के पकवानों के लिये दूर-दूर से रसोइये बुला भेजे। वह कई दिन स्वादिष्ट मिठाईयां और अनेक प्रकार के

पकवान बनाने में लगे रहे। दुर्योधन ने श्री कृष्ण जी के चरणों में भोजन करने के लिये विनती की परन्तु वह स्वीकार न हुई क्योंकि श्री कृष्ण जी तो प्रेम के भूखे थे और उस प्रेम के सम्मुख यह पदार्थ तुच्छ थे। उसे यह नहीं पता कि श्याम सुन्दर जी के हृदय में किसी के प्रेम का समुद्र उमड़ रहा था, कोई बावरा उतावला होकर अपने प्रियतम के दर्शनों को लोच रहा था। वह दर्शन अभिलाषी थी विदुर की पत्नी। जब से विदुर की पत्नी ने श्री कृष्ण जी का हस्तिनापुर में आगमन का समाचार सुना, तो उसका तन-मन, प्राण, हृदय श्री कृष्ण जी के नाम का स्मरण करने लगी और वह उस मोर मुकुट वाले स्वामी के दर्शनों की अभिलाषा करने लगी। उसकी आँखें एक टक प्रतीक्षा में लगी हुई थी कि कब वह सुन्दर मूरत उसे दर्शन देकर निहाल करेगी। फिर उसका मन कई तरह की उधेड़ बुन में लग जाता कि राज सदन को त्याग कर, वह उसकी कुटिया में क्यों आएंगे ? बड़े-बड़े महारथी उन्हें आने ही नहीं देंगे। यह सब कुछ सोचकर वह ठण्डी आंहें, लेकर रह जाती और सारी रात जागकर आँखों में ही काट लेती।

आखिर वह भाग्यशाली दिन आ ही गया जब उसके द्वार पर किसी के पाँव की आहट सुनाई दी, द्वार पर किसी के कोमल हाथों की खट-खट सुनाई दी। यह श्री कृष्ण जी थे। वे अपना रथ और सारथी विदुर के घर से थोड़ी दूर खड़ा करके आये थे।

विदुरानी को जब श्री कृष्ण जी की मीठी-मीठी आवाज, 'द्वार खोलो,' सुनाई दी और उसे इस तरह लग रहा था जैसे किसी अद श्य शक्ति ने उनके भीतर प्रवेश कर उसको वश में कर लिया हो। उसे अपनी कोई सुध-बुध ही न रही। वह उस समय स्नान कर रही थी। घर में कोई और था ही नहीं जो द्वार खोलने जाता। विदुर जी भी उस समय घर नहीं थे। उसके तन पर कोई वस्त्र भी नहीं था। उसी तरह ही भागती हुई वह द्वार खोलती है, सामने श्री कृष्ण जी के साक्षात दर्शन करके विदुरानी उनके चरणों पर गिर पड़ी। श्री कृष्ण जी ने उसी

समय अपने पीताम्बर से उसका तन ढांप दिया। उसे तो कोई सुध ही नहीं थी। वह दर्शनों में गुम हो गई थी। उसकी आँखें श्री कृष्ण जी के दर्शन करके त प्त हो रही थी।

श्री कृष्ण जी उसके ग ह को पावन करने के लिये अन्दर गये और पीछे-पीछे विदुरानी जा रही थी। श्री कृष्ण जी ने विदुरानी से कुछ खाने के लिये मांगा तो वह भागकर भीतर गई और केलों का गुच्छा उठा लाई।

''बहुत ही स्वादिष्ट फल हैं, बहुत ही मीठे हैं, इन फलों का तो बहुत ही स्वाद आ रहा है, बड़े दिनों के बाद यह फल खाने को मिले हैं।'' श्री कृष्ण जी विदुरानी द्वारा प्रेम से भेंट किये हुए फलों की प्रशंसा कर रहे थे और विदुरानी आनन्द विभोर हो कर केले छील छील कर उनके छिलके अपने प्रिय श्री श्याम सुन्दर जी को खिला रही थी और उनके भीतर का गुद्दा फेंकती जा रही थी। उसे तो सुध-बुद्ध ही नहीं थी कि वह क्या कर रही थी, और दूसरी ओर मुरली मनोहर भी प्रीति मग्न होकर छिलके ही खाते जा रहे थे। उस मोर मुकुट वाले को तो कुछ भी नहीं चाहिये, बस भक्तों का प्रेम ही उसके लिये सब कुछ है। वह प्यारा तो प्यार में ही बिक जाता है। उसके लिये तो प्रेम ही सर्वश्रेष्ठ है, गुरू गोबिन्द सिंह जी दशम ग्रंथ में लिखते हैं,

साच कहौ सुन लेहु सभै
जिन प्रेम किओ तिन ही प्रभु पाइओ।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ १४

विदुर जी बाद में घर आये तो जब उन्होंने यह सारा द श्य देखा तो अपनी पत्नी से कहा, ''ओ बावरी ! तुम तो छिलके ही खिलाती जा रही हो,'' उसने कहा, ''भूल गई हूँ महाराज।''

फिर विदुर जी लगे श्री कृष्ण जी को केले खिलाने। श्री कृष्ण जी ने कहा,''विदुर जी ! केले तो मीठे हैं, परन्तु इनमें वह रस नहीं आया।''

द्वितीय भाग

जब प्रियतम अपनी प्रियतमा के समीप होता है, उस समय प्रियतमा को सब कुछ मनोरम लगता है, मन प्रीयतम का सानिध्य होने के कारण खिला रहता है, पुलकित होता है, सभी जगह खुशी ही खुशी दिखाई देती है वातावरण सुहावना प्रतीत होता है, प्रक ति शोभनीय हो जाती है।

कण कण हर्ष प्रकट करता है परन्तु जब प्रिय प्रेयसी से दूर चला जाता है, संयोग वियोग बन जाता है और सब कुछ विपरीत हो जाता है। प्रियतमा अपने प्रेमी की अनुपस्थिति में उदासीन हो जाती है, ग़मगीन हो जाती है, प्रसन्नता, उल्लास, हर्ष के स्थान पर उदासीनता छा जाती है। प्रियतमा को अपना चारें तरफ का वातावरण बिल्कुल नहीं भाता, वियोग की पीड़ा में वह जलती है, सुलगती है, तड़पती है, ठंडी आहें लेती है, अपने प्रिय स्वामी के बिना कुछ भी शोभनीय नहीं लगता।

श्री क ष्ण जी गोपियों को ब ज में रोते–बिलखते छोड़ कर मथुरा को चले गए थे। एक दिन गोपियों को सांत्वता देने के लिए श्री क ष्ण जी ने उद्धव को ब ज में भेजा। उद्धव ने अपने तर्क–वितर्क द्वारा गोपियों को बहुत समझाने का प्रयत्न किया। अपने ज्ञान की चर्चा करते हुए उद्धव ने गोपियों से कहा कि वह सभी अपने घर द्वार के कार्यों से निव त हो कर उसके ज्ञान के रंग में रंग जाएँ। परन्तु उद्धव का ज्ञान गोपियों के गहरे स्नेह के समक्ष कैसे टिक सकता था? ज्ञान को असीम स्नेह के समक्ष घुटने टेकने पड़े क्योंकि गोपियाँ श्री क ष्ण के वियोग में क्षण–क्षण, पल–पल, सुलग–सुलग कर जल रही थीं। राधा अपने प्यार की व्याकुलता एवं विह्वलता उद्धव को प्रकट कर रही हैं। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी दशम ग्रंथ में संकलित वाणी क ष्णावतार में गोपियों की श्री क ष्ण जी के विरह, वियोग की कसक, पीड़ा का वर्णन अत्यंत सुंदर शैली द्वारा 'ब्रिह नाटक बारहमाह' में करते हैं।

१४

ब्रिह नाटक बारहमाह का प्रारंभ

।।राधे बाच ऊधव सो।।

।।सवैया।। प्रेम छकी आपने मुख ते
इह भात कहयो ब्रिखभान की जाई।
सयाम गए मथरा तजि कै ब्रिज
हो अब धो हमरी गति काई।
देखत ही पुरकी त्रिय को सु
छके तिन के रस मै जिय आई।
कानह् लयो कुबजा बसि कै
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६११।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७५

शब्दार्थ : प्रेम—प्रेम के रंग में रंगी हुई, प्रेम से सजी हुई (राधिका)। ब्रिखभान की—व षभान गोप की पुत्री राधिका ने। हो—दु:ख के साथ आह भर कर कहा, उहो। धो—हाए ईश्वर। गति—अब हमारा क्या हाल। टसकयो—टस—टस नहीं किया, ह्रदय की चुभन नहीं मानी। हीयो—ह्रदय, दिल। कसकयो—पीड़ा को सह लिया, आह तक नहीं की (कराहट)। कसाई—बेदर्द, पापी।

व्याख्या : राधा जो व षभान की सुपुत्री थी, जिसका ह्रदय प्रत्येक समय श्री कृष्ण जी के अथाह प्रेम से भरा रहता था, श्री कृष्ण के मथुरा चले जाने पर वह बहुत व्याकुल हो उठी। उसने

अपने सुंदर मुख से यह उच्चारण किया,''श्री कृष्ण जी हम सब को रोते बिलखते छोड़ कर, हमारी कोई चिंता न करते हुए मथुरा चले गए हैं। मेरे हृदय में यह विचार बार-बार आता है कि श्री कृष्ण जी के वियोग में हम क्या करेंगी ? उनके बिना किस प्रकार जीवित रहेंगी ? हमारी क्या हालत होगी ? श्री कृष्ण जी तो मथुरा की स्त्रियों को देखते ही उनके प्रेम रस में भीग गए होंगे। श्री कृष्ण जी को कुबजा ने अवश्य अपने वश में कर लिया होगा, यह बात सुन कर मेरा हृदय फटा नहीं और न ही मैं पागल हुई हूँ। यह सब मेरे पापी हृदय की कुटिलता का ही परिणाम है।''

भाव : गोपियों ने परिवेदना प्रक्ट की कि श्री कृष्ण जी मथुरा में जाकर वहाँ के ही हो गए हैं एवं ब जवासियों के स्नेह को पूर्ण रूप से त्याग दिया है।

सयाम गए मथरा तजिकै

श्री कृष्ण जी को ले जाने के लिए कंस ने अक्रूर जी को ब ज भूमि में भेजा। अक्रूर जी मन ही मन सोचते हैं कि उन्होने अवश्य कोई जप, तप, दान, पुण्य, तीर्थ, व्रत किया हुआ है जिसके फलस्वरूप कंस ने उनको श्री कृष्ण जी को लाने के लिए भेजा है। अक्रूर जी अपने मन की उलझनों में फंसे हुए सोचते हैं कि कहीं श्री कृष्ण जी उनको कंस का दूत न समझें बैठें, तत्पश्चात अपने ही मन में सोचते हैं कि जिनका नाम अंतर्यामी है, वह तो मन की प्रीत समझते हैं। सभी मित्रों, शत्रुओं को पहचानते हैं। फिर वह अपने मन को भरोसा दिलाते हैं कि वह अपनी क पा द ष्टि अक्रूर जी पर करेंगे और कोमल हाथ उनके सिर पर रखेंगे। यह सोचते-सोचते अक्रूर जी व ंदावन के समीप पहुँचे तो उनको वहीं श्री कृष्ण जी के दर्शन हो गए। अत्यंत स्नेह के साथ अक्रूर जी श्री कृष्ण जी के चरणों पर गिर कर धन्य हुए। श्री

कृष्ण जी उनको अत्यंत प्रेम के साथ, हाथ पकड़ कर घर ले गए। घर पहुँच कर खूब आदर सत्कार किया। अक्रूर जी ने श्री कृष्ण जी को बताया कि मथुरा की प्रजा दिन-रात कंस के अत्याचारों के कारण अत्यंत पीड़ित है।

सुनि कै बतिया तिह की हरि जू
पित धाम गए इह बात सुनाई।।
मोहि अबै अक्रूर के हाथ
बुलाइ पठिओ मथुरा हू के राई।।
पेखत ही तिह मूरत नंद
कही तुमरे तन है कुसराई।।
काहे की है कुसरात कहयो
इह भांत बुलयो मुसलीधर भाई।।७६१।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३५६

अक्रूर की बातें सुन कर ग्वालों को साथ ले कर श्री कृष्ण जी उसी समय मथुरा को चल पड़े। कंस को भेंट करने के लिए बहुत सा दूध ले कर, बलभद्र को श्री कृष्ण जी ने आगे-आगे भेज दिया। जिन के दर्शन मात्र से ही अत्यंत आनंद प्राप्त होता है, सम्पूर्ण देह के पाप भाग जाते हैं, वह श्री कृष्ण जी ग्वालों का रूप बनाकर सुंदर मोर की भाँति लग रहे थे। श्री कृष्ण जी का तुरंत प्रस्थान सुन कर ब ज की गोपियाँ अत्यंत व्याकुल हो कर, ग ह त्याग कर, उनके पीछे पीछे दौड़ पड़ीं और रोती-बिलखती हुई श्री कृष्ण जी के रथ के समीप पहुँच गईं। उन गोपीयों की समझ में यह बात नहीं आ रही थी कि उनसे क्या अपराध हुआ है ? जिस कारण श्री कृष्ण जी उनको छोड़ कर मथुरा जा रहे हैं। सभी गोपीयों ने आकर श्री कृष्ण जी के रथ को चारों ओर से घेर लिया और हाथ जोड़ कर विनती करने लगीं,"हे बि जनाथ ! हमसे क्या अपराध हुआ है ? आप हमें त्याग कर जा रहे हो ? हम तो आप के लिए सर्वस्व निछावर कर चुकी हैं, हाथ की रेखाएँ कभी मिलती नहीं, इसी प्रकार

साधू-संतों की प्रीत कभी भी कम नहीं होती एवं मूर्ख की प्रीत रेत की दीवार समान कभी ठहरती नहीं। आप हमें बताएँ हमने आपका क्या बिगाड़ा है कि हमारी ओर से मुँह मोड़ कर मथुरा जा रहे हो ?'' इसके उपरांत गोपियाँ अक्रूर जी को कड़वी कसैली बातें करने लगी। यह अक्रूर तो बहुत क्रूर है, इसको गोपियों के दर्द का क्या पता ? जिस के बग़ैर गोपियाँ अनाथ हो जाती हैं उनको अपने साथ ले कर चले जा रहे हैं। अक्रूर कुटिल एवं मत से विहीन है इसलिए बेचारी अबलाओं को दुःख दे रहा है। कड़वे-कसैले वचन बोल कर गोपियाँ पुनः श्री कृष्ण जी के रथ के चारों ओर खड़ी हो कर बोलने लग पड़ीं। मथुरा की स्त्रियाँ अति चंचल, चतुर, रूप एवं गुणों से भरपूर हैं। उनके असीम प्रेम के वश मे हो कर श्री कृष्ण जी मथुरा में ही रह जायेंगे एवं बि ज की गोपियों को भूल जाएँगे। उनको यह समझ नहीं आ रही कि उनके द्वारा जप तप करते समय कौन सी भूल हो गई है जिस कारण श्री कृष्ण जी उनसे अलग हो रहे हैं। पुनः श्री कृष्ण को संबोधित करके कहने लगी,''आपका तो नाम ही गोपीनाथ है ! फिर आप हमें अपने साथ क्यों नहीं ले चलते ? आपके बिना तो एक क्षण भर भी निकालना कठिन है। हमारी छाती फटी जा रही है। प्रीत लगा कर वियोग क्यों दे रहे हो ? आप निष्ठुर-निर्दयी हो ?'' यशोदा माता अपने प्रिय पुत्र को गले से लगा कर ज़ोर-ज़ोर से रो उठी एवं अपने पुत्र को समझाने लगी कि वह मथुरा जाकर बैठ ना जाए व शीघ्र ही वहाँ से लौट आए। सभी ओर से श्री कृष्ण-श्री कृष्ण की ध्वनि से सारा वातावरण गूँज रहा था। श्री कृष्ण जी रथ पर खड़े हो कर पुकार-पुकार कर कह रहे हैं, आप सब अपने-अपने घर जाएँ। किसी बात की चिंता ना करें, मैं शीघ्र ही लौट जाऊँगा। इस प्रकार की बातें करते-करते रथ आँखों से ओझल हो गया। सभी ब जवासी निराश हो कर मछली की भाँति तड़पने लगे। कई गोपियाँ तो बेसुध हो गईं एवं फिर मन में धैर्य धारण कर

यशोदा सब गोपियों को साथ ले कर व ंदावन वापिस आ गई। यशोदा रो-रो कर कह रही थी,

।।सवैया।। बारह मास रखियो उदरे महि
तेरहि मास भए जोऊ जईया।।
पाल बडो जु करयो तबही
हरि को सुन मै मुसलीधर भय्या।।
ताही के काज किधौ त्रिपवा
बसुदेव को कै सुत बोल पद्धइया।।
पै हमरे घट भागन के घर
भीतर पै नही सयाम रहईया।।७६५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३५६

श्री कृष्ण जी सभी ग्वाल-बालों के सहित यमुना के किनारे आ पहुँचे। श्री कृष्ण जी व क्ष की छाया के नीचे विश्राम करने लगे। अक्रूर जी यमुना में स्नान हेतु जल के भीतर चले गए। श्री कृष्ण जी ने आज्ञा दी कि सभी ग्वाले बाबा नंद के नेत त्व में मथुरा की ओर बढ़ें, वह अक्रूर जी के स्नान करने के बाद पीछे आते हैं। जब अक्रूर जी ने यमुना में डुबकी लगाई तो जल में नेत्र खोल कर देखा तो रथ सहित श्री कृष्ण जी यमुना में दिखाई पड़े। फिर जब जल से बाहर निकल कर देखा तो श्री कृष्ण जी वटव क्ष के नीचे शोभायमान थे। अक्रूर जी देख कर हैरान हो गए। पुनः जल में डुबकी लगाई तो वहाँ भी भगवान के शंख—चक्र—गदा—पद्म धारण किए हुए अति मनोरम रूप के दर्शन प्राप्त हुए व बाहर आकर भी उसी स्वरूप के दर्शन हुए। अक्रूर जी को प्रथम बार श्री कृष्ण जी के चर्तुभुज रूप के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। फिर बैकुंठ की रचना, सुर, मुनि, किन्नर, गण, गंधर्वों सहित जल में दर्शन हुए, फिर शेषनाग की सेज पर विराजमान श्री कृष्ण जी के चरण लक्ष्मी जी पलोस रही है के दर्शन हुए। इस प्रकार के दर्शन होने के पश्चात् अक्रूर जी बाहर आने की सुध ही भूल बैठे।

अक्रूर जी इस प्रकार के सुंदर स्वरूप का दर्शन करके हाथ जोड़ कर श्री कृष्ण जी की महिमा का गुणगान करने लगे। आप ही स ष्टि के करता धरता हो, अपने ही भक्तों के लिए संसार में अवतार धारण किया है। संपूर्ण सुर, नर आपका अंश है एवं सभी आप में ही समा जाते हैं। आपकी महिमा अपरंपार है। ऐसी शक्ति किसके पास है जो आपके स्वरूप को देख सके। आप ही विराट स्वरूप हो। स्वर्ग आपका शीश है, प थ्वी आपके चरण हैं, सात समुद्र आपका पेट है। नदियाँ नाड़ीयाँ हैं, चंद्रमा-सूर्य आपके नेत्र हैं, दसों दिशाएँ आपके कान हैं, जल वीर्य है, बादल केश हैं। धर्म छाती पर निवास करता है, आपके भेद को कौन जान सकता है—ऐसे स्वरूप को मेरी प्रणाम। इस प्रकार प्रणाम करते-करते अक्रूर जी जल से बाहर निकले व मथुरा की ओर प्रस्थान किया। अक्रूर जी ने श्री कृष्ण जी के चरणों में हाथ जोड़कर विनती की कि वह उनके ग ह को पवित्र करें। श्री कृष्ण जी ने कहा कि सर्व-प्रथम कंस को उनके मथुरा आगमन् का समाचार दिया जाए। कंस ने अक्रूर जी का स्वागत किया एवं सभी घटनाक्रमों के बारे में जानकारी प्राप्त की। श्री कृष्ण जी के स्वरूप के दर्शन के लिए मथुरा शहर के सम्पूर्ण निवासी एकत्रित हो गये। जिसके शरीर में कोई दुःख, दर्द, पीड़ा हो रही थी, श्री कृष्ण जी के दर्शन करते ही सारे दुःख दर्द दूर हो गए।

हरि आगम की सुन कै बतिया
उठकै मथुरा की सभै त्रिय धाई।।
आवत थो रथ बीच चड़यो चलि कै
तिह ठउर बिखै सोऊ आई।।
मूरत देखकै रीझ रही
हरि आनन ओर रही लिवलाई।।
सोक कथा जितनी मन थी
इह ओर निहार दई बिसराई।।८१७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६२

श्री कृष्ण जी के आगमन की बातें श्रवण कर मथुरा की सभी स्त्रियाँ घरों से उठ कर दर्शन हेतु दौड़ पड़ीं। जिस मार्ग में श्री कृष्ण जी रथ पर आ रहे थे मथुरा की स्त्रियाँ उस स्थान पर आ गईं। वह श्री कृष्ण जी की मोहिनी सूरत देख कर अति प्रसन्न हो रही थी, उनके सुंदर मुख को निहार रही थी। मथुरा पुर के निवासियों के मन में जितनी भी उदासी की बात थी, श्री कृष्ण जी के सुंदर स्वरूप की ओर देखते ही वह सब भूल गयी। मथुरा शहर की सुंदरता का तो कथन ही नहीं किया जा सकता। श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी उस सुंदरता का वर्णन करते लिखते हैं,

।।सवैया।। जिह के जट ते नग भीतर है
दमकै दुत मानहु बिज्ज छटा।।
जमुना जिह सुंदर तीर बहै
सु बिराजत है जिह भांत अटा।।
ब्रहमा जिह देखत रीझ रहै
रिझवै तिख ता धर सीस जटा।।
इह भांत प्रभा धर है पुर धाम
सु बात करै संग मेघ घटा।।८१६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६२

घरों के द्वारों और दीवारों पर जो नग जड़े हुए हैं, उनकी चमक-दमक की शोभा इस प्रकार लग रही थी मानो दामिनी की चमक हो। जिनके साथ-साथ सुंदर यमुना बह रही है। मथुरा शहर की अट्टालिकाएँ सुशोभित हो रही थीं, जिसको देखते ही ब्रह्मा जी अति प्रसन्न रहते हैं और शिवजी भी प्रसन्न हो जाते हैं। शहर के घर इस प्रकार की सुंदरता को धारण किए हुए हैं कि मानो बादलों की घटाओं से बातें कर रहे हों। नगर के चारों ओर सुंदर बगीचे फूलों से सुसजित लहलहा रहे थे। उनके ऊपर बैठे पक्षी भाँति-भाँति की बोलियाँ बोल रहे थे। फूलों पर भंवरे गुंजार कर रहे थे ओर जल में हंस सारस एवं चकोर

इत्यादि अनेक पक्षी अति प्रसन्न हो रहे थे। रंगों-रंगों की फुलवाड़ियाँ खिल रही थीं, फव्वारे शीतलता प्रदान कर रहे थे। मथुरापुरी के सभी ओर ताम्र कोट एवं पक्की खाई बनी हुई थी। इस प्रकार की सुंदर नगरी में श्री कृष्ण जी ब जवासियों को छोड़ कर निश्चिंत घूम-फिर रहे थे व इधर गोपियाँ उनकी याद में तड़प रही थीं, उनके दर्शनों के लिए लालायित हो रही थी, उनका श्री कृष्ण जी के बिना एक-एक पल बिताना कठिन हो रहा था एवं तड़पती हुई वह कह उठीं,

सयाम गए मथुरा तजि कै ब्रिज
हो अब धो हमरी गति काई।

१५

।।सवैया।। सेज बनी संग फूलन सुंदर
चांदनी रात भली छबि पाई।
सेत बहे जमुना पट है
सित मोतनहार गरे छबि छाई।
मैन चड़ह्यो सरि लै बरकै
बधबे हमको बिन जान कनह्ाई।
सोऊ लयो कुबजा बस कै
टसकयो न ही यो कसकयो न कसाई।।६१२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७६

शब्दार्थ : छबि—सुन्दरता, शोभा। सेत—श्वेत, उज्जवल। पट—कपड़े, वस्त्र भी (श्वेत ही पहिने हैं)। गरे—गर्दन में। छाई—(श्वेत हार) सज रहे हैं। मैन—कामदेव, मदन। सरि—तीर लेकर। बघबे (हमको) मारने के लिए। बिन—कान्ह जी के बिना जानकर, अर्थात् कृष्ण जी से बिछड़ी हुई जान कर। सोऊ—सो, वह कान्ह (कुबजा ने काबू कर लिया है)। कै—पूरे ताण के साथ।

व्याख्या : राधा व षभान की सुपुत्री, श्री कृष्ण जी की परम सेविका, अपने मन में सोचती है—मेरी सेज फूलों द्वारा अति सुंदर बनी हुई है और चाँदनी रात भी अत्यंत शोभनीय लग रही है। इस चाँदनी रात में सभी वस्तुएँ चाँदनी में भीगी हुई चमक रही हैं। श्वेत यमुना बह रही है। मेरी देह पर धारण किए हुए वस्त्र भी श्वेत-स्वच्छ लग रहे हैं। प्रत्येक वस्तु चाँद की चाँदनी

में धुली हुई, निखरी हुई लगती हैं। श्री कृष्ण जी तो हमारे समीप नहीं, वह तो हम से दूर चले गए हैं, हमें श्री कृष्ण जी के बिना जान कर कामदेव धनुष-बाण ले कर बहुत पीड़ित कर रहा है। श्री कृष्ण जी को कुबजा ने पूर्ण रूप से अपने वश में कर लिया है। इस कारण श्री कृष्ण जी का हृदय तनिक भी हमारी ओर नहीं झुका एवं न ही उनको हमारे प्रेम की कोई कसक, पीड़ा पहुँची है। उनके पास तो हमारे विषय में सोचने के लिए अवकाश का क्षण भी नहीं है। उनको क्या पता कि यहाँ हमारी क्या दशा हो रही है। हम किस प्रकार अपना समय पल-पल आहें भर कर व्यतीत कर रही हैं। बेपरवाह ने तो हम सभी को भुला दिया है।

भाव : सुंदर, सुहावनी, चाँदनी रात में श्री कृष्ण जी के बिना गोपियों को कामदेव सता रहा है। श्री कृष्ण जी की अनुपस्थिति उनको अत्यंत व्यथित कर रही है।

सोऊ लयो कुबजा बस कै

कुबजा कंस की दासी थी एवं उसका कार्य प्रत्येक दिन राजा कंस को चंदन लगाने का था। श्री कृष्ण जी अब मथुरा की गलियों में से गुज़र रहे थे, वहाँ मार्ग में खड़े हुए माली की कंस के लिए प्रीत देख कर वह परम प्रसन्न हुए और उसको मानवता की सेवा करने का वरदान दिया। वहाँ से आगे चले तो सामने गली में से कुबजा चंदन, केसर, इत्र, फुलेल की भरी कटोरियाँ थाल में रख कर रास्ते में खड़ी हुई थी। श्री कृष्ण जी जब उसके पास से निकले तो उससे पूछा,"तुम कौन हो"? वह विनम्र भाव में बोली,"दीन दयाल ! मैं कंस की दासी हूँ, मेरा नाम कुबजा है, मैं राजा को नित्य चंदन लगाती हूँ और मन में आपके गुणों का गायन करती हूँ, जिसके परिणाम स्वरूप आज आपके दर्शन करके जन्म सार्थक हुआ है और नेत्र दर्शन कर क तार्थ हुए हैं। अब दासी का मनोरथ यह है कि आपकी आज्ञा

के अनुसार आपको अपने हाथ से चंदन लगाऊँ''।

।।सवैया।। हरि आवत अग्र मिली कुबजा
हरि को तिन सुंदर रूप निहारयो।।
गंध लए न्रिप लावन को
सु लगाऊं हउ या मन बीच बिचारयो।।
प्रीत लखी हरि संगि लगी
हमरे तब ही इह भांत उचारयो।।
लयावहु लावहु री हमको
कबि नै जसु ता छबि को इम सारयो।।८२८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६३

श्री कृष्ण जी ने कुबजा के प्रेम को जान लिया, उसके अंतःकरण के भावों का परिचय प्राप्त कर लिया। उसकी भक्ति की पहचान कर ली एवं श्री कृष्ण जी ने आदेश दिया कि कुबजा के मन में जो आता है, वही करे। यदि उसका ह्रदय श्री कृष्ण जी को चंदन लगा कर प्रसन्न होता है तो वह अवश्य लगाए। श्री कृष्ण जी की आज्ञा को मान कर कुबजा ने राजा की देह को लगाया जाने वाला चंदन श्री कृष्ण जी को लगा दिया। इस प्रकार कुबजा ने अपने मन में अत्यंत सुख प्राप्त किया। ब्रह्मा जी ने मन में प्रेम करके जिसके यश को कई दिनों तक गाया था और फिर भी उसके अंत को नहीं जान सके, कितनी भाग्यशाली है यह कुबजा मालिन जिसने हरी की देह को अपने हाथों से स्पर्श किया है।

।।सवैया।। हरि एक धरयो पग पाइन पै
अरु हाथ सो हाथ गहयो कुबजा को।।
सीधी करी कुबरी ते सोऊ
इतनो बल है जग मै कहु का को।।
जाहि मरयो बक बीर अबै करि है
बध सो पति पै मथरा को।।
भाग बडे इह के जिह को

उपचार करयो हरि बैद ह्वै ता को।।८३०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६४

श्री कृष्ण जी ने अपना एक पाँव उसके पाँव पर रख दिया और अपने हाथों से कुबजा के हाथ को पकड़ लिया। इस प्रकार उठा कर कुबजा को सीधा कर दिया। संसार के किस व्यक्ति में इतना सामर्थ्य है कि वह किसी कुब्जा का कुबड़ापन इस प्रकार सीधा कर सके ? कितनी भाग्यशाली है यह कुबजा जिसका वैद्य हरि आप बना व उसका इलाज बिना किसी औषधि के ही कर दिखाया। कुबजा की प्रसन्नता की सीमा न रही। श्री कृष्ण जी के हाथ का स्पर्श होते ही वह महासुंदरी बन गई। दोनों हाथ जोड़ कर विनती करने लगी,''हे प्रभु ! आप अभी मेरे घर चलो और मेरे ग ह को पवित्र करो।'' श्री कृष्ण जी के सुंदर मुखमंडल को निहार कर वह अत्यंत प्रसन्न हुई। उसने निसंकोच भाव से, राजा के भय से मुक्त हो कर, श्री कृष्ण जी को अपने ग ह में चलने के लिए विनती की। श्री कृष्ण जी ने भी जान लिया कि कुबजा उनके प्रेम के अधीन हो गई है। इसलिए उससे कहा,''मैं सर्वप्रथम कंस को समाप्त कर लूँ एवं फिर मैं तुम्हारी मनोकामना पूर्ण करूंगा।''

।।सवैया।। प्रभ धाम अबै चलीयै हमरे
इह भांत कहयो कुबजा हरि सों।।
अति ही मुख देख कै रीझ रही
सु कहयो न्रिपके बिनती डर सों।।
हरि जानयो कि मो मै रही बस ह्वै
इह भांति कहयो तिह सो छर सों।।
करिहौ तुमरो सु मनोरथ पूरन
कंस को कै बध हउ बर सों।।८३१।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६४

तत्पश्चात् कुबजा अपने घर जाकर, केसरी चंदन लगा कर श्री कृष्ण जी के दर्शनों की इच्छा कर मंगलाचार करने लगी।

आवैं तहां मथुरा की नारी।।
करैं अचंभा कहै निहारी।।
धंन धंन कुबजा तेरे भाग।।
जां को बिध ने दीओ सुहाग।।
ऐसा कहा कठिन तप कीओ।।
गोपी नाथ भेट तुझ लीओ।।
हम नीचे नहि देखे हरी।।
तुम से मिले प्रीत अति करी।।
ऐस तहां कहत सभ नार।।
मथुरा देखत फिरत मुरार।।

कंस वध के पश्चात् श्री कृष्ण जी एक दिन कुबजा को दिए हुए अपने वचन के पालन हेतु कुबजा के ग ह में उद्धव के संग गए। जब कुबजा ने अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के आगमन का समाचार सुना तो चित्रशाला में एक अति सुंदर श्वेत बिछावन बिछा दिया, उसके ऊपर सुंदर पुष्प सुसज्जित एक सेज बिछा दी। उस पर श्री कृष्ण जी विराज गए एवं कुबजा सोलह श ंगार कर श्री कृष्ण जी के दर्शनों के लिए गई।

।।सवैया।। ऊच अवास बनयो अति सुभ्र
मई गर रंग के चित्र बनाए।
चंदन धूप कदंब कलंबक
दीपक दीप तहा दरसाए।
लै परजंक तहां अति सुंदर
सव्च्छ सु मउर सुगंध बिछाए।
दो कर जोर प्रनाम करयो
तब केसव ता पर आन बैठाए।।६८७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८६

उद्धव को भी रत्नजड़ित तख्त पर विराजने को कुबजा ने कहा परन्तु उद्धव ने यह कह कर उसके ऊपर बैठने से साफ इंकार कर दिया,''प्रभु के साथ तुम्हारी बहुत प्रीति है, यह मैं

समझ गया हूँ परन्तु मैं महाकंगाल, आज्ञा में रहने वाला अनाथ, प्रभु के समक्ष इस तख्त के ऊपर नहीं बैठ सकता''। तब फिर उसने श्री कृष्ण जी के प्रताप के दर्शाने हेतु उसी पल उस पीढ़ी को उस स्थान से उठवा दिया। इतना कुछ करके वह प थ्वी पर बैठ गया क्योंकि तन-मन श्री कृष्ण जी के प्रेम के रंग में रंगा हुआ था।

जे पद पंकज सेस महेस
सुरेस दिनेस निसेस न पाए।
जे पद पंकज बेद पुरान
बखान प्रमान कै गयानन गाए।
जे पद पंकज सिद्ध समाध मै
साधत है मुन मोन लगाए।
ते पद पंकज केसव के अब
ऊधव लै कर मै सहराए।।६६०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८६

जो चरण कमल शेषनाग, शिव जी, इंद्र, सूर्य व चंद्रमा ने भी नहीं प्राप्त किए, जिन चरण कमलों को वेद व पुराण वर्णन करते हैं; जिन चरण कमलों को सिद्ध लोग समाधियों में साधते हैं; जिन चरणों का ध्यान करते हुए मुनियों के मनों ने चुप्पी साध ली है एवं उनकी आशंकाएँ मिट गई हैं, उन चरण कमलों को अब उद्धव अपने हाथों में लिया हुआ था। जो चरण योगियों के ध्यान में नहीं आते; जिनके दर्शनों के लिए योगी जन अति व्याकुल होते हैं; जिन चरणों को ब्रह्मा जैसे वेद पाठी, शेषनाग जैसे स्मरण करने वाले, इंद्र जैसे पुण्यात्मा खोज कर थक चुके हैं परन्तु किसी के द्वारा उनका अंत नहीं पाया गया, उन चरण कमलों को उद्धव अपने दोनों हाथों में ले कर स्नेह से पलोस रहे थे।

दूसरी ओर कुबजा हार श्रंगार करके अपने माथे पर लाल रंग की बिन्दिया लगा कर श्री कृष्ण जी की प्रसन्नता प्राप्त

करने का प्रयत्न कर रही थी। वह अत्यंत सुंदर लग रही थी मानो दूसरा चंद्रमा का प्रतिरूप प्रकट हो गया हो। अंर्तयामी श्री कृष्ण जी ने कुबजा के मन की अवस्था को जान लिया व उसको अपने पास बिठा लिया। उनके साथ सेज पर बैठ कर वह संकोच मुक्त हो गई क्योंकि उसके मन की सभी शंकाएँ दूर हो गई थीं,

।।सवैया।। बहियां जब ही गहि सयाम लई
कुबजा अति ही मन मै सुख पायो।
सयाम मिले बहुते दिन मै
हम कउ कहि कै इह भांत सुनायो।
चंदन जिउ तुहि अंग मलयो
तिह ते हम हूं जदुबीर रिझायो।
जोऊ मनोरथ थो जिय मै
तुमरे मिलए सोऊ मो करि आयो।।६६४।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८७

कुबजा के सभी मनोरथ पूर्ण करने के पश्चात श्री कृष्ण जी अक्रूर जी को दर्शन देने के लिए उनके ग ह में पधारे। कुबजा अपने भाग्य की सराहना करते हुए अति-प्रसन्न हो रही थी एवं अपने अंतःकरण में श्री कृष्ण जी के प्रेम प्यार के रस में बहुत देर तक डूबी रही।

आरंभिक सवैया

१६

।।सवैया।। रात बनी धन की अति सुंदर
सयाम सींगार भली छबि पाई।
सयाम बहै जमुना तरए
इह जा बिन को नही सयाम सहाई।
सयामहि मैन लगयो दुख देवन
ऐसे कहयो ब्रिखभानहि जाई।
सयाम लयो कुबजा बसि कै
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६१३।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७६

शब्दार्थ : घन की—घनघोर बादलों वाली, वर्षा ऋतु की (रात)। सयाम—काले रंग के जल वाली यमुना (बहती है)। तरए —तले, नीचे की ओर। इह जा—इस स्थान पर (ऐसे दुःखदाई बिछोड़े की हालत में, श्याम के बगैर कोई सहायक (मददगार) नहीं। सयाम—कृष्ण। सयामहि—(तभी) साँवला ही कामदेव (हमें दुःख देने लगा है)। ब्रिखभानहि—व षभान की पैदा (उत्पन्न) की हुई—राधा ने कहा। टसकयो—फटा हुआ दुःखी नहीं हुआ। कसकयो—चुभवी पीड़ा से अहित नहीं हुआ।

व्याख्या : जिस प्रकार घोर काले बादल आकाश में मंडराकर सम्पूर्ण आकाश मंडल व पर्यावरण को काला बना देते हैं। उसी प्रकार रात्रि भी खूब अंधेरी थी, अंधेरी होने के कारण चारों ओर कालिमा छायी हुई थी। काली रात्रि अपनी विशिष्ट बहुत सुंदर बना रही थी। श्री कृष्ण जी का रूप रंग तो सांवला था ही

परन्तु काला श्रंगार करके उनकी छवि ने अलौकिक सुंदरता धारण की हुई थी। नीचे बहती यमुना का जल भी काला लग रहा था। ऐसे अवसर में श्री कृष्ण जी के बिना कोई अन्य सहायक नहीं हो सकता। वषभान की सपुत्री राधा ने इस प्रकार कहा कि श्री कृष्ण जी को कामदेव दुःख देने लगा है, इसी कारण वह कुबजा के वश में हो गये है। गोपियों का कुबजा पर यह आरोप है कि उसने बि ज की गोपियों की किंचित भी परवाह नहीं की। उन पर क्या बीत रही है क्या नहीं इसकी चिंता श्री कृष्ण जी को बिल्कुल ही नहीं है। वह तो बहुत निश्चिंत है। कुब्जा पर श्री कृष्ण जी को छीन लेने का दोष लगेगा, वह अपराधी है। अपराध करके भी कुब्जा का हृदय फटा नहीं और न ही उसने बि ज की गोपियों की आहों पर जरा सा भी तरस किया। उसका हृदय गोपियों की चुभवीं पीड़ा से दुःखित नहीं हुआ।

भावार्थ : राधा श्री कृष्ण जी के वियोग में तड़पती है, वह अत्यंत बेबस व विवश है। राधा विचलित है कि कुब्जा ने पुर्णतया श्री कृष्ण जी को वश में कर लिया है।

बिन को नही सयाम सहाई

मनुष्य के जीवन में जब कठिन समय आता है तो वह असहाय हो जाता है। उस समय वह अपने सगे-सम्बंधियों की तरफ देखता है। परन्तु जब वह भी उनके सहायक नहीं बनते तो फिर उनका एक ही सहारा रह जाता है, एक ही सगा-सम्बंधी दिखता है, जो सम्पूर्ण विश्व का स्वामी है, सभी का सखा है, सभी का मीत है, सभी की आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाला है, सभी शरणागतों का सहारा है। सुदामा जी के नाम से कौन परिचित नहीं, उनका नाम तो श्री कृष्ण जी के नाम के साथ ही जोड़ा जाता है, कृष्ण और सुदामा।

सुदामा जी श्री कृष्ण जी के गुरूभाई, बाल्यकाल के मित्र व सखा थे। वह अत्यंत निर्धन व दरिद्री थे। घर में कुछ भी

खाने-पीने के लिये उपलब्ध न था। यदि कोई खाने को दे जाता तो वह ले लेते, नहीं तो उन्होंने कभी किसी से किसी वस्तु की माँग नहीं की। सुदामा की स्त्री बहुत पीड़ित व दुखिया थी, एक दिन वह निर्धनता व दरिद्रता से घबराई हुई अपने पति सुदामा के पास गई एवं विनती की,''हम इस दरिद्रता, गरीबी, क्षुधा के कारण अत्यंत कष्टमय दिन बिता रहे हैं, मैं आपको एक उपाय बताती हूँ, आप स्मरण करो, आपके एक परम मित्र त्रिलोकी नाथ, द्वारकाधीश, श्री कृष्ण जी आनंदकंद हैं, आप उनके पास जाओ, वही आपके सभी दुःख दरिद्र दूर कर सकते हैं।''

सुदामा जी दुविधा में पड़ गए व कहने लगे,''मैनें कभी किसी को कुछ नहीं दिया। श्री कृष्ण जी के समक्ष मैने कभी कुछ भी भेंट नहीं किया और न ही कभी मैने श्री कृष्ण जी के श्री चरणों में कुछ अर्पित किया है। मुझे वह कैसे कुछ देंगे। परन्तु फिर भी कोई बात नहीं, मैं जाकर दर्शन ही कर आऊँगा। उनके श्री चरणों में कुछ भेंट देने का प्रबंध कर दो।'' यह सुन कर सुशीला ने किसी के घर से चावल मंगवा लिए एवं पुराने वस्त्र में बाँधकर अपने पति को दे दिए। सुदामा लोटा एवं डोरी अपने कंधे पर डाल, चावलों की पोटली को बगल में दबा, हाथ में लाठी पकड़कर, श्री कृष्ण जी के ध्यान में मग्न होकर द्वारका की ओर चल पड़े। रास्ते में अनेक प्रकार के विचारों की उधेड़बुन में पड़ कर द्वारका के मार्ग पर चलते रहे,

।।दिज बाच।।

हउ अरु सयाम संदीपन के ग्रहि
बीच पड़े हित है अति ही करि।
हउ चित मै धरि सयाम रहयो रहै
ह्वै है सु सयामहि मो चित मै धरि।
दै धन पाइ घनो घरि मै
कछु दीनन देतन नैक क्रिपा करि।
ईस लहै किधो मोह निहारकै

कैसी क्रिपा करि है हम पै हरि।।२४०६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ५५६

उनको याद आया कि वह और श्री कृष्ण जी दोनों गुरू संदीपन से शिक्षा ग्रहण करते थे। और दोनों में परस्पर गहरी मित्रता थी। सुदामा को तो श्री कृष्ण जी बहुत याद आ रहे थे, पता नहीं श्री कृष्ण जी उसको पहचानते हैं कि नहीं। पुनः सोच कर कि वह तो सर्वस ष्टि के स्वामी हैं, उसको थोड़ा सा धन तो अवश्य ही दे देंगे। वह सुदामा को देख कर पहचान तो अवश्य लेंगे एवं उस पर क पा द ष्टि करके निहाल भी करेंगे। यह सोचते-विचारते, सुदामा द्वारकापुरी आ गए। उन्होंने देखा कि शहर के चारों ओर समुद्र है एवं उसके मध्य में पुरी है। पुरी के चारों ओर वन उपवन खिल रहे हैं एवं तालाब, बावलियाँ भी बनी हुई हैं। गायों के झुंड इधर-उधर घूम रहे हैं। ग्वाले गायों के साथ खेल कर अति प्रसन्न हो रहे हैं। सुदामा पुरी के भीतर प्रवेश करके देखता जाता है कि कंचन के मंदिर, मणियों के साथ, जगमग-जगमग कर रहे हैं; स्थान-स्थान पर यदुवंशी अपनी सभाएँ सजा कर बैठे हैं; अनेकों प्रकार की वस्तुएँ बिक रही हैं। पूछता-पूछता सुदामा श्री कृष्ण जी के द्वार पर जा पहुँचा एवं द्वारपाल को संदेश सुनाया कि भीतर जाकर वह श्री कृष्ण जी के दरबार में विनती करे कि उनका एक पुराना मित्र सुदामा उनको मिलने आया है। निर्धनता-दरिद्रता प्रकट करते पहनावे को देख कर द्वारपाल के मन में शंका उत्पन्न हुई कि इतना निर्धन-दरिद्र पुरूष श्री कृष्ण जी का मित्र कैसे हो सकता है ? सुदामा के बार-बार आग्रह करने पर द्वारपाल ने भीतर जाकर श्री कृष्ण जी के दरबार में विनती की कि उनका एक पुराना मित्र सुदामा उनसे मिलने आया है। सुदामा का नाम सुनते ही श्री कृष्ण जी उसी क्षण, तीव्रता से आसन से उठ कर प्रेम पूर्वक द्वार पर उसका स्वयं स्वागत करने गए। श्री कृष्ण जी ने सुदामा के चरण छुए व फिर पूर्ण तन्मयता से उसका आलिंगन किया।

लै तिह मंदर माहि गयो
तिह कौ अति ही करि आदरु कीनो।
बारु मंगाइ तही दिज के
दोऊ पाइन धवै् चरना म्रित लीनो।
झौपरी ते तिह ठां हरि जू
सुभ कंचन को पुन मंदर कीनो।
तउन सकिओ सु बिदा करि बिप्पहि
सयाम भनै तिह रंच न दीनो।।२४०८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ५६०

उसको ले कर मंदिर में चले गए। उसको मंदिर के भीतर ले जा कर उसका बहुत आदर—सत्कार—सम्मान किया। जल से उस ब्राह्मण के दोनों चरणों को धो कर चरणाम त लिया। फिर चंदन, धूप, दीप लगा कर सुदामा की पूजा की फिर उसका कुशल-मंगल समाचार पूछा। यह सम्पूर्ण द श्य देख कर श्री रुकमणी जी, आठों पटरानियाँ एवं सोलह हजार एक सो रानियाँ एवं अन्य यदुवंशी जो वहाँ उपस्थित थे, वे सब सुदामा के भाग्य की सराहना करने लगे कि इस दरिद्री, दुर्बल, मलिन, वस्त्रहीन ब्रह्मण का इतना सम्मान ? अंर्तयामी श्री कृष्ण जी ने सभी की शंका निव त्ति करने के लिए गुरू घर की बातें करनी प्रारंभ कर दी। श्री कृष्ण जी ने कहा—भईया तुम्हें वह दिन याद है जब एक दिन गुरू पत्नी ने हम दोनों को ईंधन हेतु लकड़ियाँ एकत्रित करने के लिए भेजा था। जब हम दोनों लकड़ियाँ एकत्रित कर सिर के ऊपर रख कर चलने लगे तो उस समय इतने जोर का तूफान आया कि सम्पूर्ण जल-थल एक समान हो गया। वर्षा के कारण हम इतने अधिक भीग गए कि हम ठंडी के कारण काँपने लगे। रात्रि हो गई एवं सम्पूर्ण रात्रि बाहर एक व क्ष के नीचे बैठ कर बिताई। प्रातःकाल का आगमन होते ही गुरूदेव हमें जंगल में ढूँढने आए व हमें आर्शीवाद दे कर अपने साथ घर ले गये। "हे मित्र ! जब से हम गुरूकुल से बिछुड़े हैं

तब से ही हमें तुम्हारे विषय में कोई समाचार प्राप्त नहीं हुआ कि तुम कहाँ हो ? अब तुमने मुझे दर्शन दिए हैं एवं मैनें अत्यंत सुख की प्राप्ति की है।'' सुदामा ने उत्तर दिया,''हे क पा निधान, दीन बंधु, मेरे स्वामी, अंर्तयामी आप तो सब कुछ जानते हैं, संसार में कोई भी वस्तु इस प्रकार की नहीं, जो आपसे छिपी रह गई हो।''

इस प्रकार के वार्तालाप करने के पश्चात् श्री कृष्ण जी ने सुदामा से पूछा,''भाई मेरी भाभी ने मेरे लिए जो भेंट भेजी है, आप मुझे देते क्यों नहीं, बगल में क्यों छिपा रखी है ?'' सुदामा हिचकिचाए परन्तु श्री कृष्ण जी ने तुरंत उनकी बगल में से चावलों की पोटली छीन कर खोल ली एवं अत्यंत प्रसन्न हो कर दो मुट्ठियाँ भरकर चावल खा लिए। जब तीसरी मुट्ठी भरी तो रुकमणी ने हाथ थाम लिया व कहा,''महाराज ! आप ने दो लोक तो इनको दे ही दिए हैं अब अपने निवास हेतु कोई स्थान रखना है कि नहीं ? यह ब्राह्मण तो सुशील, कुलीन, वैरागी एवं महात्यागी सा दिखाई देता है क्योंकि इनको न आने का हर्ष है एवं न जाने का शोक।'' रुकमणी के मुख से यह बात सुन कर श्री कृष्ण जी ने उत्तर दिया,''हे मेरी प्रिय, यह मेरा परमप्रिय मित्र है, इसके गुणों का व्याख्यान मैं कहाँ तक करूँ? यह सदैव मेरे स्नेह में मग्न रहता था। इसके आगे संसार के सुख त ण के समान हैं।'' श्री कृष्ण जी ने सुदामा को तरह-तरह के पकवान खिलाए तथा अति सुंदर सेज बिछा कर दी। सुदामा मार्ग की थकान के कारण बहुत थके हुए थे। इस कारण बड़े आराम से सुंदर शय्या पर सो गए।

श्री कृष्ण जी ने रात्रि को विश्वकर्मा को बुलाकर कहा,''आप तुरंत जा कर सुदामा के मंदिर कंचन मणियों के साथ सुसज्जित करके निर्माण करो। उसके भीतर आठों सिद्धियाँ व नौ निधियाँ रख दें ताकि सुदामा को किसी प्रकार की अन्य इच्छा न रह जाए सुदामा जी ने तीन दिन वहीं व्यतीत कर चौथे दिन

प्रातःकाल श्री कृष्ण जी से विदा ली। श्री कृष्ण जी उनको बरामदे तक छोड़ने आये एवं आँखों में अश्रु भर कर कहने लगे,''भईया आपने मुझपर बहुत कृपा की जो आ कर अपने दर्शन दिए। अब मेरी यह विनती है कि मुझे कहीं भुला न देना एवं भविष्य में भी दर्शन देने की क पा करना''। इस प्रकार सुदामा ने श्री कृष्ण जी से विदाई ली एवं मन में यही विचार करते रहे कि श्री कृष्ण जी ने तो उसको कुछ दिया ही नहीं। जिस कंगाल रूप में वह वहाँ आया था, उसी प्रकार ही वापिस जा रहा था। यह भी अच्छा हुआ कि उसने श्री कृष्ण जी से कुछ माँगा भी नहीं। अब घर जा कर ब्राह्मणी सुशीला को क्या मुँह दिखाऊँगा। जब वह अपनी झोंपड़ी के समीप पहुँचा तो उसे वहाँ न देखकर चिंतित हुआ। स्वयं को कोसने लगा,''सुदामा तुमने यह क्या किया ? एक दुःख, दूसरी दरिद्रता एवं तीसरा मेरी झोंपड़ी तक भी ओझल हो गई है। मेरी ब्राह्मणी कहाँ गई है, मैं अब उसको कहाँ खोजूँ, किससे पूछूँ, कहाँ जाऊँ। मैं कहीं मार्ग तो नहीं भटक गया, किसी अन्य मार्ग पर तो नहीं आ गया। इस प्रकार सोचते-सोचते द्वार के नजदीक जा कर द्वारपाल से पूछा,''यह अति सुंदर भवन किसका है ? द्वारपाल ने उत्तर दिया,''यह श्री कृष्ण जी के परम मित्र सुदामा का है''।

सुदामा खड़े हो कर सोचते हैं कि वह उसका उपहास तो नहीं कर रहा। इतने में उसकी सुपत्नी सुशीला जो छत पर खड़ी अपने पति की राह तक रही थी, सुदामा को देखते ही सुंदर कपड़ों में हार श ंगार कर सहेलियों को साथ लेकर अपने पति के समीप आई एवं सारी कथा सुदामा को कह सुनाई। सुदामा का चित्त उदास हो गया क्योंकि उसके अनुसार माया महा ठगिनी है, उसने सम्पूर्ण संसार को ठगा हुआ है। ब्राह्मणी ने समझाया कि श्री कृष्ण जी का अति धन्यवाद करना चाहिए क्योंकि उन्होंने उनकी सभी इच्छाओं को पूर्ण किया है। श्री गुरू

गोबिन्द सिंह जी ने बहुत सुंदर शब्दों द्वारा श्री कृष्ण जी की महिमा का गायन इस प्रकार किया हैं,

।।सवैया।। जो ब्रिजनाथ की सेव करै
पुन पावत है बहुतो धन सोऊ।।
लोग कहा तिह भेदहि पावत
आपनी जानत है पुन ओऊ।।
साधन के बरता हरिता दुख
बैरन के सु बडे घर खोऊ।।
दीनन के जग पालबे काज
गरीब निवाज न दूसर कोऊ।।२४१०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ५६०

१७

।।सवैया।। फूल रहे सिगरे ब्रिज के तर
फूलि लता तिन सो लपटाई।
फूलि रहे सर सारस सुंदर
सोभ समूह बढी अधिकाई।
चेत चड़ह्यो सुक सुंदर कोकिल
का जुत कंत बिना न सुहाई।
दासी के संगि रहयो गहि हो
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६१४।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७६

शब्दार्थ : तर—(तरू का बहुवचन) व क्ष, पेड़। फूलि—लताएँ, फूलों की बेलें। सर—सरोवर, ताल में। सारस—कमल। सुक—तोते। कोकिल—कोयलें। जुत—समेत। दासी—सेविका, कुबजा के साथ। टसकयो—चुभवीं पीड़ा के साथ दुःखी नहीं हुए। कसकयो—खिंचा चला नहीं गया, आह नहीं भरी।

व्याख्या : चैत्र मास आ गया। चारों ओर प्रक ति की अदभुत सुन्दरता छाई हुओ है। ब ज भूमि में उगे हुए सभी व क्ष खिल रहे हैं एवं पुष्पों से भरी हुई बेलें उन व क्षों के साथ लिपट रही हैं। तालाब जल से भरे हुए हैं एवं जल से भरे तालाबों में कमल पुष्प सुशोभित हो रहे है। चैत्र मास में सुंदर तोते एवं कोयलें अपना मीठा राग अलाप रहे हैं और बेचारी गोपियों के समीप श्री कृष्ण जी नहीं, वह तो दूर मथुरा में चले गए हैं, अपने प्रिय इष्ट की अनुपस्थिति में गोपियों को कुछ नहीं भाता। बसंत ऋतु

का सुहावनापन शिखर पर है। चारों ओर सुंदरता बिखर रही है परन्तु गोपियों को यह सब मनमोहन द ष्य ओर भी तड़पाता है, सताता है, क्योंकि प्रिय प्रीतम के बिना सब कुछ फीका लगता है। श्री कृष्ण जी को तो दासी का संग प्राप्त है। उस कसाई ह्रदय को न बिछोड़े का दुःख हुआ है और न ही प्रेम की कसक का आभास है।

भावार्थ : सभी ओर प्रक ति की छवि अति सुंदर आभास देती है। पशु-पक्षी भी अपने सुरीले सुरों के द्वारा हर्ष को प्रकट कर रहे हैं परन्तु यह सुहावनी वसंत ऋतु गोपियों के लिए अति दुःखदायक है।

कंत बिना न सुहाई

श्री कृष्ण जी को अक्रूर ब ज से मथुरा ले गए। श्री कृष्ण जी ने इस प थ्वी पर दुष्टों का संहार एवं संत जनों का उद्धार करने के लिए अवतार धारण किया था। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए श्री कृष्ण जी मथुरा पहुँचे। परन्तु ब जवासियों ने श्री कृष्ण जी के अथाह प्रेम का आनंद भोगा था। वह श्री कृष्ण जी के शरीर का अटूट अंग बन चुके थे। वह श्री कृष्ण जी के बिना एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकते। श्री कृष्ण जी तो उनके तन मन में समा चुके थे। जब ब जवासियों के प्राण दाता उनको छोड़ कर दूर चले गए, फिर भला वह अपने प्रिय प्रीतम के बिना किस प्रकार जीवित रह सकते थे ? श्री कृष्ण जी के मथुरा जाने से उनकी सुख, शाँति इत्यादि सब कुछ उनके साथ ही चला गया, उनका जीवन दुःखमय बन गया, सुख पंख लगा कर उड़ गया। ब ज के ग्वाले, गोपियाँ, गोपाल, गायें, पशु, पक्षी, इत्यादि सब अपने प्रिय की अनुपस्थिति में दुःखी हो गए, व्याकुल हो गए, पीड़ित हो गए, अति असहाय, बेबस, अनाथ हो गए थे। उनको अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के बिना कुछ भी नहीं भाता था।

श्री कृष्ण जी मथुरा पहुँच कर अपने कार्यों में व्यस्त हो गए। इधर ब जवासियों की विह्वलता बढ़ती गई एवं एक दिन श्री कृष्ण जी ने रात्रि को सोते समय बलराम जी से कहा कि सम्पूर्ण व ंदावन के निवासियों को उनकी स्म ति सता रही होगी एवं वह अत्यंत दुःखी हो रहे होंगे। श्री कृष्ण जी के लिए ब ज जाना अभी असंभव लग रहा था। इसलिए गोपियों, ग्वालों, माता यशोदा, पिता नंद बाबा को सांत्वना देने के लिए किसी को ब ज में भेजा जाए। वह वहाँ जाकर उनसे मिल कर उनको धैर्य व द ढ़ता प्रदान कर आए। इसके लिए श्री कृष्ण ने उद्धव को बुलाया व कहा—हम आपको व ंदावन भेजना चाहते हैं ताकि आप ब्रज में जाकर बाबा नंद, यशोदा मैया एवं गोपियों, ग्वालों को सांतवना दें व माता रोहिणी को साथ लेते आयें। पहले नंद बाबा फिर माता यशोदा जी के मन में ज्ञान उत्पन्न करो एवं उनके मन का मोह मिटा दो। उनसे कहना कि वह सभी सदैव मेरे निकट हैं। यशोदा मैया एवं नंद बाबा इस बात को याद करके सभी दुःखों को त्याग दें एवं पुत्र भाव छोड़ कर, ईश्वर भाव के साथ मेरे नाम को जपें। फिर गोपियों से कहना—जिन्होंने मेरे लिए लोक लाज व ग ह का त्याग कर दिया है, रात दिन मेरे ही यश को गाती हैं, वह भगवान के नाम का जाप करें। फिर दोनों भाईयों ने मिलकर एक पत्र लिखा जिसमें बाबा नंद, माता यशोदा को यथायोग्य दंडवत प्रणाम एवं सभी बाल-ग्वालों को आर्शीवाद एवं सभी ब ज की गोपियों को योग का उपदेश लिख भेजा, साथ ही उद्धव को समझाया कि यह पत्र उद्धव स्वयं गोपियों को पढ़कर सुनाएँ। यह कह कर श्री कृष्ण जी ने नए वस्त्र-आभूषण पहनवा कर, अपने रथ पर बिठाकर, उद्धव को वँदावन की ओर विदा किया।

।।सवैया।। प्रात भए ते बुलाइ कै ऊधव
पै ब्रिज भूमहि भेज दयो है।
सो चलि नंद के धाम गयो

बतियां कहि सोक असोक भयो है।
नंद कहयो संगि ऊधव के
कब हूं हरि जी मुहि चित्त कयो है।
यो कहि कै सुध सयामहि कै
धरनी पर सो मुरझाइ पयो है।।८६४।।

—दशम ग्रंथ पष्ठ ३७३

वंदावन पहुँच कर उद्धव जी ने देखा कि घने वक्षों की शाखाओं पर तरह-तरह के पक्षी मनभावन बोलियाँ बोल रहे थे। जहाँ तक दष्टि जाती, श्वेत, भूरी, काली, सुंदर गायें इधर उधर घास चर रही थीं, जगह-जगह पर गोपियाँ-ग्वाले श्री कृष्ण जी की स्मति में उदासी के गीत गा कर अपने मन की व्याकुलता को शांत करने का प्रयास कर रहे थे। उद्धव जी ने उस स्थान को श्री कृष्ण जी का पूजनीय स्थान समझ कर प्रणाम किया एवं जैसे ही बज के समीप पहुँचे, दूर से ही किसी ने श्री कृष्ण जी के रथ की पहचान कर ली एवं उसी समय दौड़ कर नंद बाबा से कहा,''महाराज ! श्री कृष्ण जी का भेस धारण कर, उनका रथ लेकर कोई उद्धव नाम का मनुष्य मथुरा से आया है।'' यह बात सुनते ही नंद राय व सारी की सारी गोप मंडली भाग कर रथ के समीप पहुँचे। उद्धव के समीप पहुँच कर श्री कृष्ण जी का संगी साथी जानकर बहुत ही स्नेह व हित से मिले। सभी का हाल पूछा एवं बहुत आदर-सत्कार सहित उसको घर ले आए। सर्वप्रथम चरण धुला कर आसन पर बैठाया व फिर छत्तीस प्रकार के भोजन बनवा कर, उद्धव की सेवा की गई। विश्राम करने के पशचात् नंद बाबा जी उद्धव के पास बैठे तथा सभी का कुशल-मंगल पूछा व कहा,''श्री कृष्ण जी ने मुझे कभी स्मरण भी किया है कि नहीं''? यह कहते ही वह मूर्छित होकर धरती पर गिर पड़े। उद्धव ने एकाएक कहा कि लो वह श्री कृष्ण जी आ गए। उद्धव के मुख से श्री कृष्ण जी का नाम सुनकर नंद बाबा उठ कर बैठ गए व उनके मन के सभी

संताप दूर हो गए। परन्तु नंद बाबा करो तो श्री कृष्ण जी न दिखाई दिए। उसी समय उन्होंने कहा,"मुझे ज्ञान है कि उद्धव ने मेरे साथ धोखा किया है, श्री कृष्ण जी ब ज छोड़कर चले गए हैं, जो लौटकर ब ज नहीं आए,

जब नंद परयो गिर भूम बिखै
तब याहि कहयो जदुबीर अए।
सुनि कै बतियां उठ ठाढ भयो
मन के सभ सोक पराइ गए।
उठि कै सुधि सो इह भांत कहयो
हम जानत ऊधव पेच कए।
तजकै ब्रिजको पुर बीच गए
फिरकै ब्रिज मै नही सयाम अए।।८६५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७३

बाबा नंद ने कहा,"श्री कृष्ण जी ब ज को छोड़ कर मथुरा चले गए हैं और ब ज के लोगों को बहुत दुःख दिया है। उद्धव मेरी बात सुनो, उनके बिना हमारा नगर शून्य हो गया है। विधाता ने हमारे ग ह में बालक देकर बिना किसी अपराध के ही हम से छीन लिया है। यह कहकर सर झुकाकर बैठ गए। उन्होंने अत्यंत शोक व विलाप किया। यह बात कहकर बाबा नंद जी पुनः धरती पर अचेत हो गिर पड़े। जब उनकी चेतना लौटी तो फिर उद्धव से पूछने लगे,"श्री कृष्ण जी ब ज को छोड़कर मथुरा चले गए हैं, अब आप हमें यह बताओ कि हमारा क्या अपराध है और इसका क्या कारण है ? मैं अब तुम्हारे पाँव पड़ता हूँ। हे उद्धव ! जो बात हुई है, वह सारी की सारी, जैसी की तैसी बोलो, मुझे पापी जानकर मुझ पर क्रोधित होकर रूठे हुए हैं, क्या इसी कारण मेरी सुध नहीं लेते ?"

।।सवैया।। कहि कै इह बात परयो धरि पै
उठ फेर कहयो संग ऊधव इउ।
तजि कै ब्रिज सयाम गए मथुरा

हम संग कहो अब कारनि किउ।
तुमरे अब पाइ लगो उठिकै
सु भई बिरथा सु कहो सभ जिउ।
तिहते नहीं लेत कछू सुधि है
मुहि पाप पछान कछू रिस सिउ।।८६७।।

—दशम ग्रंथ पष्ठ ३७३

उद्धव ने उनको सांत्वना देने का प्रयत्न किया, रोते हुए बाबा नंद के आंसू पौंछने का प्रयास किया। नंद बाबा को धैर्य देते हुए, उद्धव ने कहा,''आप तनिक भी शोक न करें। श्री कृष्ण जी ने मुझे जो बात कही है वह सारी बात सुन लो, उसकी कथा सुनकर मन को खुशी होती है, एवं उनके सुंदर मुख को देखकर जीवन प्राप्त होता है। उन्होंने कहा है आप तनिक भी चिंता न करें, इस कारण आपकी तनिक भी क्षति नहीं होगी''।

श्री कृष्ण जी की बातें सुन बाबा नंद जी के मन में धैर्य बँधा, साहस बढ़ा। उनके सभी कष्ट दूर हो गए, उन्होंने सभी बातें छोड़ दी, उनका सम्पूर्ण ध्यान श्री कृष्ण जी की कथा सुनने में लग गया और वह श्री कृष्ण के ध्यान में मस्त हो गए।

।।सवैया।। सुनि कै इम ऊधव ते बतिया
फिर ऊधव को सोऊ पूछन लागयो।
कानह् कथा सुनि चित्त के बीच
हुलास बढ़ियो सभ ही दुख भागयो।
अउर दई सभ छोर कथा
हरि बात सुनैबे बिखै अनुरागयो।
धयान लगावत जिउं जुगिया इह
तिउ हरि धयान के भीतर पागयो।।६००।।

—दशम ग्रंथ पष्ठ ३७४

इधर ब ज की रानी यशोदा माता अपने प्रिय पुत्र के लिए अति व्याकुल हो रही थी। उसने उद्धव से कहा,''उद्धव ! मेरे पुत्र से यह विनती करना कि वह लौट कर यहाँ आये और

आकर माखन खाए। हे ब जनाथ आप हम सबको बहुत प्रिय हो। आप हमारे प्रेम पर विचार करो। आप शीघ्र मथुरा छोड़कर ब ज में आ जाओ। बाल्यअवस्था में तो आप सभी बातें मानते थे, अब बड़े हो गए हो तो आप मेरी एक बात भी नहीं मानते। मेरा कहना मानकर आप एक क्षण के लिए ब ज में आ जाओ, ब जनिवासियों को सुख प्रदान करो। आपको वह दिन भूल गए जिस समय आप हमारे चरण स्पर्श करते थे।''

।।सवैया।। मात करी बिनती तुम पै
कबि सयाम कहै जोऊ है ब्रिज रानी।
ता ही को प्रेम घनो तुम सों हम
आपने जी महि प्रीति पछानी।
ता ते कहिओ तजि कै मथुरा
ब्रिज आवहु या बिधि बात बखानी।
इयाने हुते तब मानत थे अब
सयाने भए तब एक न मानी।।६६१।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८३

इस प्रकार ब ज के निवासियों को, बाबा नंद और माता यशोदा को सांत्वना दे कर तथा श्री कृष्ण जी का संदेश लेकर उद्धव अपने ज्ञान की चर्चा करने के लिए, गोपियों की व्याकुलता, दुःख, पीड़ा जानने के लिए उनके पास पहुँचे।

उद्धव को देखकर सभी गोपियाँ तड़प उठीं और सबसे बढ़ कर दुखी हुई व षभान की पुत्री राधा। वह अत्यंत दुःखी होकर उद्धव से कहने लगी कि उसको भोजन, वस्त्राभूषण व घर इत्यादि श्री कृष्ण जी के बिना कुछ भी अच्छा नहीं लगता। इस प्रकार के वचन कर राधा के नयन श्री कृष्ण जी के वियोग में वशीभूत हो गए और उनमे से दुःख के कारण अश्रु बहने लगे। वह प्रेम रस में मस्त हो गई एवं श्री कृष्ण जी को स्मरण कर रोने लगी। आँखों से अश्रु निकलने के कारण उनकी आँखों का काजल बह निकला। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो चंद्रमा को

जो दाग़ लगा है, वह दाग़ राधा की आँखों के रास्ते काजल के रूप में निचुड़ कर बह निकला हो। राधा ने अपने मन में धैर्य धारण किया तथा उद्धव से बातचीत शुरू कर दी—श्री कृष्ण जी ने ब ज में बसने वालों से एकदम ही प्रेम त्याग दिया है, हम में ही कोई कमी रही होगी, कोई खोट होगा, जिसको श्री कृष्ण जी ने जान लिया है। जिस समय श्री कृष्ण जी रथ में बैठे थे, उन्होंने हमारी ओर देखा तक नहीं। ब ज को त्यागकर मथुरा पुरी चले गए हैं इससे स्पष्ट है, कि यह हमारे भाग्य का ही दोष है।

।।सवैया।। गहि धीरज ऊधव सो बचना
ब्रिखभान सुता इह भांति उचारे।
नेहु तजयो ब्रिजबासन सो
तिह ते कछू जानत दोख बिचारे।
बैठ गए रथ भीतर आप
नही इन की सोऊ ओर निहारे।
तयागि गए ब्रिज को मथरा
हम जानत है घट भाग हमारे।।६४१।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८०

उद्धव के द्वारा राधा ने अपने प्रियतम के लिए संदेश भेजा,"हे उद्धव ! जब आप मथुरा जाएँ, मेरी ओर से यह विनती करें, सर्वप्रथम दस घड़ियों तक श्री कृष्ण जी के चरणों को पकड़े रहना व फिर उनको मेरा नाम स्मरण कराना। उस के उपरांत फिर श्री कृष्ण जी से कहना कि आप हमारे साथ हित जोड़कर गए थे परन्तु कभी तो हमारे हित की चिंता करें। जब से मेरा मन श्री कृष्ण जी के प्रेम से भरा है, उसी क्षण से ही मैंने सब वाद-विवाद त्याग दियें हैं। उनको यह भी स्मरण कराना जब वह वन में मेरे साथ रूष्ट हो गए थे, उस समय मैंने गर्व किया था, उन्होंने मेरे साथ जो खेल किए हैं, उनको मन में याद करें, मेरे साथ जो प्रेम प्रसंग की बातें की हैं, उनको अपने हृदय में

स्मरण करें। ब ज को किस कारण छोड़ दिया है तथा मथुरा क्यों चले गए हैं ? हमें ज्ञात है इसमें उनका कोई दोष नहीं, हमारा भाग्य ही खराब है ? हमने अवश्य कोई दुष्कर्म किए हैं।''

राधा की वियोगपूर्ण बातें सुन कर उद्धव ने भरोसा दिलाया कि श्री कृष्ण जी की प्रीति राधा के साथ सबसे अधिक है। परन्तु उद्धव संभ्रमित थे कि श्री कृष्ण जी अब मथुरा को छोड़कर कैसे आ सकते हैं क्योंकि श्री कृष्ण जी तो गोपियों के मना करने पर भी नहीं रूके। राधा तो किसी को भी दोष नहीं देती वह तो सिर्फ यह जानती हैं कि,

जानत है हमरे घटि भागन
आवत है हरि जू फिर डेरै।।६४५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८०

यह स्मरण कर राधा पुनः रोने लगी व उसका मन अत्यंत शोक पूर्ण हो गया। मन की सभी खुशियाँ लुप्त हो गईं तथा वह बेसुध होकर धरती पर गिर पड़ी। सारी सुध भूल गई एवं राधा ने मन को श्री कृष्ण जी के ध्यान में लगा दिया, तथा,

यो कहि ऊधव सो तिन टेर
हहा हमरे ग्रहि सयाम न आयो।।६४६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८१

राधा को उन दिनों का स्मरण हो आया जब वह गोपियों के साथ मिलकर ब ज की गलियों में खेल—खेलते थे। उस समय श्री कृष्ण जी के साथ मंगलमय गीत गाते थे। श्री कृष्ण जी का मन गोपियों से भर गया है, इसलिए ब ज को त्यागकर मथुरा चले गए हैं, उन्होंने अभी तक वापिस आने की योजना भी नहीं बनायी। ब जनाथ ने सभी गोपियों को विस्म त कर दिया है। श्री कृष्ण जी वहाँ के निवासियों के साथ घुल मिल गए हैं तथा उनको वह बहुत प्रिय लगते है। श्री कृष्ण जी के बिना सभी गोपियाँ अति व्याकुल हो रही हैं। श्री कृष्ण जी ने गोपियों को ऐसे त्याग दिया है, जिस प्रकार सर्प अपनी त्वचा को त्याग देता

है। श्री कृष्ण जी के मुख की आभा चंद्रमा के समान है; वह तीनों लोकों में प्रभु-रूप होकर शोभायमान हो रहे हैं। श्री कृष्ण जी ब ज को त्याग कर मथुरा पुरी चले गए हैं। इसलिए राधा अपने प्राण प्रिय के बिना बहुत दुःखी हुई। जिस दिन से श्री कृष्ण जी मथुरा गए हैं उस दिन से किसी ने भी आकर राधा व अन्य गोपियों की खबर नहीं ली है। जिस दिन से श्री कृष्ण जी गए हैं उन्होंने किसी अन्य व्यक्ति को भी उनका समाचार लेने के लिए नहीं भेजा। श्री कृष्ण जी ने गोपियों के साथ सम्पूर्ण प्रेम ही त्याग दिया है।

वह आप तो शहर निवासियों के साथ घुल मिल गए हैं, ब ज की बेचारी गोपियों को उन्होंने सम्पूर्ण रूप से भुला दिया है, उनको पीड़ा व दुःख दे रहे हैं तथा मथुरा निवासियों को हर्ष व उल्लास प्रदान कर रहे हैं। पता नहीं श्री कृष्ण जी के मन में क्या है। जब से श्री कृष्ण जी मथुरा गए हैं तब से एक बार भी ब ज नहीं लौटे। वह स्वयं भी मथुरा निवासियों के साथ प्रसन्न हैं एवं उनके साथ घुलमिल गए हैं। श्री कृष्ण जी ने इतनी पीड़ा दी है कि जैसे उनका जन्म ब ज में हुआ ही नहीं इसलिए वह एक क्षण में ही पराए से हो गए हैं।

।।सवैया।। तयाग गए न लई इन की सुध
होत कछू मन मोह तुहारे।
आप रचे पुर बासन सों
इन के सभ प्रेम बिदा करि डारे।
ताते न मान करो फिरि आवहु
जीतत भे तुमहू हम हारे।
ताते तजो मथुरा फिर आवहु
हे सभ गऊअनि कै रखवारे।।६५२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८१

श्री कृष्ण जो गोपियों को त्यागकर मथुरा चले गए हैं उन्होंने कभी भी आकर इन बेचारी गोपियों की सुध नहीं ली, श्री कृष्ण

जी के मन में मोह बिल्कुल ही समाप्त हो गया लगता है इस कारण गोपियों को भुला दिया है। गोपियाँ अपनी पराजय मानती हैं और श्री कृष्ण जी की विजय। श्री कृष्ण जी गोपियों पर कृपा करें व शीघ्र ही लौट कर ब ज आए। गाय के रक्षक श्री कृष्ण जी शीघ्र ही मथुरा छोड़ कर, ब ज आकर गोपियों को क तार्थ करें। राधा तो श्री कृष्ण जी के बिना नही रह सकती थी, साथ ही अन्य गोपियाँ भी श्री कृष्ण जी को स्मरण करके अपने मन में अत्यंत दुःखी हो रहीं हैं। एक गोपी तो अचेत होकर धरती पर गिर पड़ी और एक वियोग में दुःख भरे गीत गा रही थी। किसी एक गोपी के मुख से हाय श्री कृष्ण निकला, दूसरी गोपी श्री कृष्ण का नाम सुनकर उठ भागती है। जब उसको श्री कृष्ण जी के दर्शन नहीं होते तो वह विलाप करने लगती है कि श्री कृष्ण जी अब उनके पास नहीं आयेंगे। जब गोपियों को श्री कृष्ण जी के आने का कोई समाचार न प्राप्त हुआ तो वह अपने प्रिय इष्ट के बिना अति व्याकुल हो गईं। राधा अधीर हो गई तथा उसका मन अति व्याकुल हो गया, मुरझा गया, मन की सम्पूर्ण खुशी समाप्त हो गई। राधा को श्री कृष्ण जी के न आने का अत्यंत दुःख हो रहा था, जिसका वर्णन करना अति कठिन था। उद्धव ने गोपियों को सांत्वना दी व कहा,

जोगनि होइ जपो हरि को मुख
मांगहु गी तुम सो बर दैहै।।६५५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८२

उद्धव ने गोपियों को शिक्षा दी कि वह योगिनें बन जायें तथा श्री कृष्ण जी को स्मरण करें, तथा जो भी वह अपने मुख से मांगेंगी, वह वरदान उनको श्री कृष्ण जी से प्राप्त होगा। इस प्रकार अपने प्रिय स्वामी का संदेश उद्धव को देकर गोपियों की आँखें अपने प्रिय के मार्ग पर लग गईं व उनका प्रत्येक पल अपने प्रिय प्राणस्वामी की प्रतीक्षा में व्यय होने लगा।

।।सवैया।। उन दै इम ऊधव गयान चलयो
चलिकै जसुधा पति पै सोऊ आयो।
आवत ही जसुधा
जसुधा पति पाइन ऊपर सीस झुकायो।
सयाम ही सयाम सदा कहीयो
कहि कै इह मो पहि कानह् पठायो।
यौं कहि कै रथ पै चड़ह् कै
रथ को मथुरा ही की ओर चलायो।।६५६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८२

१८

बास सुबास अकास मिली अर
बासत भूमि महां छबि पाई।
सीतल मंद सुगंध समीर
बहै मकरंद निसंक मिलाई।
पैर पराग रही है बैसाख
सभै ब्रिज लोगनि की दुखुदाई।
मालन लैब करो रस को
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६१५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७६

शब्दार्थ : बास—सुगंध, गंध। सुबास—सुगंध के फूल। बासत—बसने वाले। सीतल—ठंडी। मंद—धीरे धीरे चलना। समीर—हवा। मकरंद—धूल, जो गुलाबों के फूलों की पत्तियों के ऊपर सफेद रंग की होती है। निसंक—बिना शक। पैर—फैल, बिखरना, फैलना। पराग—पुष्पों की धूल, जिससे हवा सुगंधित हो जाती है। मालन—बागवान की स्त्री, कुबजा। लैब करो—छीन लिया। टसकयो—झुका, दुःखी नहीं हुआ। कसकयो—खिंचाव।

व्याख्या : बैशाख मास का आगमन हुआ परन्तु श्री कृष्ण जी मथुरा से न लौटे, न ही कोई संदेश भेजा और न ही गोपियों को स्मरण किया। इस मास में फूल खिले हुए सुंदर दिखते हैं एवं उनकी सुगंध सम्पूर्ण वातावरण को सुगंधित करती है। सुंदर सुगंध युक्त पुष्पों की मनोहर गंध वातावरण में चारों ओर ठंडी, मंद पवन द्वारा धीरे-धीरे घुल रही है और चारों ओर

प्रत्येक कण में सुगंध बिखेर रही है। उस शीतल मंद पवन में पुष्पों का इत्र मिला हुआ है। बैशाख में सभी ओर पुष्पों की सुगंध बिखर रही है जिस कारण पवन सुगंधमय हो गई है, परन्तु गोपियों का अपना प्रियतम उनके समीप नहीं है इसलिए गोपियों को खिले हुए पुष्प, पुष्पों की महक और अधिक दुःखी करती है। उनके विरह को और अधिक बढ़ाती है। उनके हृदय में अपने प्रिय गोपाल के प्रति तड़प अधिक बढ़ जाती है, वातावरण सुखद न होकर दुःखद बन जाता है क्योंकि श्री कृष्ण जी ने ब जवासियों को भुला दिया है। श्री कृष्ण जी का हृदय गोपियों की ओर समर्पित नहीं, उस निर्दयी के हृदय में गोपियों के लिए तनिक सा भी खिंचाव नहीं पैदा हुआ।

भावार्थ : मनोहर सुगंध युक्त पुष्प, सुगंधमय शीतल पवन सम्पूर्ण वातावरण को अत्यंत सुखदायी बना रही थी परन्तु ब जवासियों के लिए श्री कृष्ण जी के बिना यह अति कष्टदायक था।

बि ज लोगनि की दुखदाई

श्री कृष्ण जी का जन्म यद्यपि मथुरा के कारागार में हुआ परन्तु मथुरा वासियों को श्री कृष्ण जी की बाल लीलाओं का भरपूर आनंद प्राप्त नहीं हुआ। ब जवासी अपने आप को बहुत भाग्यशाली समझते थे क्योंकि उन्होंने श्री कृष्ण जी की बाल लीलाओं का भरपूर आनंद अनुभव किया था। वह स्वयं को गौरवमयी समझते थे क्योंकि ब ज का कण कण श्री कृष्ण जी के चरण-कमलों का स्पर्श प्राप्त कर धन्य हो गया था। ब ज की गलियाँ मौज मेलों की गुंजार से गूंज रही थी।

जब भी ब जवासियों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता तब श्री कृष्ण जी सदैव ही उनके सहायक, रक्षक बनते। जब कभी ब ज के आकाश पर काले बादल मंड़राते तो श्री कृष्ण जी विद्युत रूप धारकर उनका मार्गदर्शन करते, पथप्रदर्शन करते।

ब ज भूमि यमुना के किनारे पर स्थित है। कथित यमुना नदी के भीतर एक विषैले नाग का निवास था। उसका विष इतना भयंकर था कि यमुना में चार-चार कोस तक विष के प्रभाव से जल उबलता था। कोई भी पशु-पक्षी या मनुष्य यमुना नदी में प्रवेश नहीं कर पाता था। यदि कोई भूलवश उस तरफ जाता भी तो जीवित नहीं लौटता था। इस के पश्चात भी यमुना के किनारे एक बड़ा कदंब का व क्ष सुरक्षित था। यह व क्ष इस कारण बच सका क्योंकि गरूड़ जी अम त लेकर जाते समय इसी कदंब के व क्ष पर आ बैठे थे और अम त की एक बूंद इस व क्ष पर पड़ गई थी। इस कारण वह विष के प्रभाव से बच गया एवं अविनाशी बन गया।

ब ज के सभी लोग नाग के आतंक से दुःखी थे। वह उस ओर आस-पास भी नहीं जा सकते थे। इस लिए श्री कृष्ण जी ने यह निर्णय किया कि इस विषैले नाग से यमुना को मुक्त करना होगा।

वह अपने बाल गोपालों के साथ, गेंद खलने के बहाने, यमुना तट पर आ पहुंचे एवं वह उस कदंब के व क्ष के ऊपर चढ़ गए। नीचे से साथियों ने गेंद को ऊपर फेंका और श्री कृष्ण जी ने गेंद को नीचे फेंका और गेंद सीधी यमुना में जा गिरी। गेंद के साथ श्री कृष्ण जी भी यमुना मे कूद गए। कूदने की ध्वनि सुनकर काली नाग ने ज़ोर से फुंकार भरी और जल में अपना विष घोलने लगा। श्री कृष्ण जी आराम से जल के ऊपर तैरते रहे और बाहर उनके बाल-गोपाल, सखा उनको जोर से आवाज़ें लगाकर पुकार रहे थे। जब श्री कृष्ण जी ने जल से बाहर निकलने में विलम्ब किया तो सब बाल-गोपाल ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे। किसी ने घर जाकर श्री कृष्ण जी के जल में कूदने की सूचना उनके परिवारजनों को दी। यह सुनते ही नंद बाबा, माता यशोदा, रोहिणी, एवं गाँव के सभी बाल-गोपाल, दौड़कर वहाँ पहुँच गए। जब उन्होंने श्री कृष्ण जी को वहाँ न

देखा तो वह सभी अपना धैर्य गंवा बैठे तथा अति अधीर हो उठे, परम व्याकुल हो उठे। अंत में श्री बलराम ने श्री कृष्ण जी की महिमा का गुणगान करके सबको सांत्वना व धैर्य प्रदान किया।

।।सवैया।। कान लपेट बडो वह पंनग
फूकत है कर क्रुद्धहि कैसे।।
जिउ धन पात्र गए धन ते
अति झूरत लेत उसासन तैसे।।
बोलत जिउ धमीआ हरि मै
सुरके मधि सव्रास भरे वह अैसे।।
भूभर बीच परे जल जिउ
तिह ते फुनि होत महा धुन जैसे।।२१०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २७६

काली नाग ने श्री कृष्ण जी की सम्पूर्ण देह को लपेट लिया। श्री कृष्ण जी ने अपने शरीर का आकार बढ़ाया। जिस कारण काली नाग ने श्री कृष्ण जी को मुक्त कर दिया और वह ज़ोर-ज़ोर से फुंकार भरने लगा। अंत में श्री कृष्ण जी उसके सिर पर चढ़ कर सम्पूर्ण त्रिलोकी का बोझ उस पर डाल दिया व न त्य करना प्रारंभ कर दिया। उसकी नाक व मुख से रक्त की धारा बह निकली। काली नाग को संदेह हुआ कि कोई विशेष शक्ति ही उसके विष का विनाश कर उसके अभिमान को नष्ट कर सकती है। यह तो स्वयं ईश्वर ही हो सकते हैं। पलभर में काली नाग की पत्नी रत्न, मोतियों, मणियों के थाल भरकर श्री कृष्ण जी के चरणों में आ पहुँची। उसने विनती की,''हे नाथ ! आपने अपार क पा की है कि इसके अभिमान को चूर-चूर कर दिया है। अब इनका भाग्य उदय हो गया है, कि आप जैसे महापुरूष के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आपके श्री चरणों को छूने के लिए तो ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा सम्पूर्ण जगत तरसता है। वही पवित्र चरण काली नाग के सिर पर सुशोभित हुए हैं। महाराज ! मुझ पर कृपा कीजिये एवं

इनको क्षमा कीजिये, अथवा क पा कर मेरा जीवन भी समाप्त कर दें क्योंकि पति के बिना मेरा जीना व्यर्थ है। इनका कोई दोष नहीं, यदि आप इनके मुख में अम त डालते तो अम त ही निकलता। अब इनके मुख में विष भरा है तो यह विष ही उगलेगें।''

।।काली नाग की त्रियो बाच।।

।।सवैया।। तउ तिहकी तिरिया सभही सुत
अंजल जोरकै यौ घिघयावै।।
रछ्छ करो इहकी हरि जी
तुम पै बरदान इहै हम पावै।।
अंम्रित देत वहै हम लिआवत
बिख्ख दई वह ही हम लिआवै।।
दोस नही हमरे पति को
कछु बात कहै अरु सीस झुकावै।।२१५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २८०

काली नाग की पत्नी की विनती सुनकर श्री कृष्ण जी उसके सिर से नीचे उतर आए। काली नाग ने हाथ जोड़कर प्रभु के चरणों में विनती की,''हे नाथ ! मेरे अपराधों को क्षमा करें, मैं आपके स्वरूप को न समझ सका।'' श्री कृष्ण जी ने काली नाग को आदेश दिया कि वह शीघ्र ही यमुना छोड़ अपने परिवार सहित रमणक स्थान में जा बसे।

।।कान् बाच काली सों।।

।।सवैया।। बोल उठियो तब यौ हरि जी
अब छाडत हउ तुम दछ्छन जइयो।।
रंचक ना बसीयो सर मै सभ ही
सुत लै संग बाटहि पईयो।।
सीघ्रता ऐसी करो तुम हू
त्रिया लइयो अर नाम सु लईयो।।

छोडि दयो हरि नाग बडो थक
जाइके मद्ध बरेतन पईयो।।२१७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २८०

काली नाग ने डरते-डरते श्री कृष्ण जी के चरणों में विनती की कि यदि वह वहाँ जाएगा तो गरूड़ का आहार बन जाएगा। श्री कृष्ण जी ने सांत्वना दी और उसे बेझिझक वहाँ जाने के लिए कहा व समझाया कि उन के चरण चिन्ह देखकर गरूड़ उसको कुछ नहीं कहेगा। श्री कृष्ण जी ने उसी क्षण गरूड़ का आह्वान किया व काली नाग का भय दूर कर दिया। काली नाग अपने परिवार सहित श्री कृष्ण जी के चरणों में प्रणाम कर रमणक खंड में जा बसा।

इस तरह काली नाग को वहाँ से विदा कर श्री कृष्ण जी ने ब जवासियों के दुःख का सदा के लिए निवारण किया एवं सम्पूर्ण ब जवासियों ने चैन की सांस ली।

१६

।।सवैया।। नीर समीर हुतासन के सम
अउर अकास धरा तपताई।
पंथ न पंथी चलै कोऊ ओतरु
ताक तरै तन ताप सिराई।
जेठ महा बलवंत भयो
अति बिआकुल जीय महा रित पाई।
ऐसे सकयो धसकयो ससिकयो
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६१६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७६

शब्दार्थ : नीर—जल। समीर—हवा। हुतासन—अग्नि (समान लगते हैं)। तपताई—(गर्मी ने धरती-आसमान) तपा दिए हैं। पंथ—रासता। पंथी—राही, मुसाफिर। कोऊ—कोई भी (नहीं चलता)। ताक—व क्ष तक देखकर। तरै—(उसके) नीचे बैठ गए। सिराई—ठंडा करता है, शरीर की तपिश, गर्मी दूर करता है। रित—ऋतु। सकयो—ऐसे शक्ति वाला बना। धसकयो—(मन) बहता जता है। ससिकयो—सहक, दुख के साथ।

व्याख्याः श्री कृष्ण जी ने मथुरा पुरी में जाकर ब ज की गोपियों को एकदम भुला दिया है परन्तु गोपियाँ अपने प्रिय प्रीतम श्री कृष्ण जी को न भुला सकी। वह उनके प्रेम की स्म ति में दिन-रात उनका स्मरण करती रहती। वह प्रत्येक क्षण, प्रत्येक घड़ी प्रत्येक मास गिन-गिन कर व्यतीत करतीं कि शायद श्री कृष्ण जी का कोई संदेश उनको मिल जाए या वह

किसी दूत को ही भेज दें या वह स्वयं ही आकर उनके सुलगते तड़पते मन को शीतलता प्रदान करें।

प्रत्येक मास की अपनी एक विशेषता है, अपना ही एक विशेष मौसम है। अब ज्येष्ठ मास आ गया है। इस मास में भीष्ण गर्मी पड़ती है, गर्मी पड़ने के कारण सम्पूर्ण वातावरण में तपिश उत्पन्न हो जाती है। उस तपिश के कारण जल अत्याधिक उष्ण हो जाता है, हवा एवं जल अग्नि के समान हो जाते हैं, प थ्वी बहुत तप जाती है। प थ्वी पर चलना कठिन हो जाता है। इस तीव्र तपिश के कारण पशु-पक्षी अति व्याकुल हो जाते हैं, तड़पते हैं। वह व क्षों की छाया ढूंढ़कर अपने शरीर को तपन से बचा कर ठंडा करते हैं। ज्येष्ठ मास अत्यंत शक्तिशाली व क्रूर बना हुआ है। इस ग्रीष्म ऋतु में मन बहुत व्याकुल रहता है क्योंकि मौसम सुहावना होने के स्थान पर अति दुःखदाई बन जाता है। ऐसे समय में ह्रदय तीव्रता से स्पंदन करता है एवं सकुंचित हो जाता है क्योंकि प्रीतम को गोपियों का प्रेम तनिक भी आकर्षित नहीं कर सका। एक ओर श्री कृष्ण जी के वियोग में विह्वलता, व्याकुलता, दूसरी ओर अति तपिश ह्रदय को सुलगाती है। गोपियों का कोई वश नहीं चलता, वह बेचारी तो सिर्फ अपने प्रिय प्रीयतम की याद में तड़प ही सकती हैं।

भावार्थ : वातावरण में अत्यंत तपन होने के कारण सब पशु पक्षी, व्याकुल हो रहे हैं परन्तु उसकी अपेक्षा में गोपियों की अर्न्तमन की तपन कई गुणा अधिक थी।

अति बिआकुल जीय

गोपियाँ अपने प्रिय इष्ट के साथ रासलीला में अति मग्न थी। वीणा, बाँसुरी, ढ़ोलक बज रहे थे और साथ ही गोपियाँ अपने पांवों में घुंघरू बांधकर श्री कृष्ण जी के साथ न त्य कर रही थीं। इस प्रकार न त्य करते-करते गोपियों ने सोचा कि श्री कृष्ण जी उनके वश में हो गए हैं।

अब मोहि इन अपने बस जानयो।
पती बिखई सम मन में मानयो।
भई अगयान लाज तज ऐह
लपटहि पकरहि कंत सनेह।
ज्ञान ध्यान मिल के बिसारयो।
छाड़ जाओ इक गरब बढ़ारयो।

इसी उधेड़बुन के बीच श्री कृष्ण जी वहाँ से राधा को साथ लेकर रासलीला करते-करते एकाएक आँखों से ओझल हो गए, उसी क्षण गोपियों की आँखों के समक्ष अंधेरा छा गया। वे अति व्याकुल हो गईं, वह अत्यंत दुःखी हो गईं, जिस प्रकार मणि के बिना सर्प दुःखी होता है। श्री कृष्ण जी गोपियों से लुप्त हो गए, आकाश में चले गए या धरती में समा गए तथा उनमें ही अभेद्य हो गए, उनको कुछ समझ ही नहीं आ रहा था। वे तन की सुध बुध भूल, उन्मत्त हो कर वन में श्री कृष्ण जी की खोज में भागने-दौड़ने लगीं। एक उठकर बैठती है तो दूसरी मुर्छित हो कर गिर पड़ती है एवं कहीं कोई ब ज की स्त्री भागी-भागी आती है। सभी अति दुःखी होकर श्री कृष्ण जी को खोजती हैं। उनकी चुनरियाँ सर से खिसक गयी थीं। श्री कृष्ण जी गोपियों के मन में बस गये हैं। इसलिए वह व क्षों को श्री कृष्ण जी का रूप जान उनको बांहों में भर लेती हैं। फिर जब उनकी चेतना लौटती है तो वे उन व क्षों को छोड़ कर कहती हैं,''हे सखी ! नंद लाल कहाँ चले गए हैं ? चंबा, मोलसिरि, बढ़ ताल, लौंग, बेलें व कचनार जैसे छायादार व क्ष यहाँ हैं परन्तु जिसके कारण हम पांवों में कांटे एवं सर पर धूप सहती हैं, वह कहां हैं ? हे व क्षों ! तुम ही कुछ बताओ, हम तुम्हारे पाँव पड़ती हैं, एवं तुम पर बलिहार जातीं हैं। जहाँ नाना प्रकार की बेलें, चम्पा के पुष्प सुशोभित हो रहे हैं, मोलसिरी, गुलाब के पुष्प और कचनार इत्यादि के साथ प थ्वी अति मनभावन लगती है, जहाँ यह सब कुछ होने के कारण धरती अति सुखदायी प्रतीत हो रही है,

ऐसी धरती पर सुशोभित वन को भी श्री कृष्ण जी के प्रेम में वशीभूत होकर ब ज की गोपियाँ से कहती हैं,''अपने पति से भी अधिक प्रिय श्री कृष्ण जी को मिलने के लिए हमने सिरों पर कड़ी धूप सही है परन्तु वह हमें यहाँ कहीं भी दिखाई नहीं देते। आश्चर्य है अपने घर-परिवार छोड़कर हम श्री कृष्ण जी के पास क्यों भागी चली आती हैं। श्री कृष्ण जी के दर्शन बिना हमसे रहा नहीं जाता।''

।।सवैया।। कानह् बियोग को मान बधू
ब्रिज डोलत है बन बीच दिवानी।।
कूंजन जयों कुरलात फिरै
तिह जा जित जा कछु खान न पानी।।
एक गिरै मुरझाइ धरा पर
एक उठै कहि कै इह बानी।।
नेह बढाइ महा हम सो
कत जात भयो भगवान गुमानी।।४८५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३१६

श्री कृष्ण जी के वियोग में ब ज की स्त्रियाँ वन में बावरी हुई फिरती हैं। उस स्थान पर रोती, बिलखती हैं, जहाँ खाने-पीने के लिए कुछ भी नहीं है। एक तो मूर्छित होकर धरती पर ढ़ेर हो जाती है एवं एक मूर्छावस्था से लौटकर कहती है,''हमे अत्याधिक मोह वश करके अभिमानी भगवान कहाँ द ष्टिगोचर हो गये हैं?

श्री कृष्ण जी ने म ग जैसी आँखों को नचा-नचा कर सम्पूर्ण गोपियों के मन को चुरा लिया था। उनमें ही गोपियों का मन गढ़ गया था। गोपियाँ उनसे मिलने के लिए घर-परिवार छोड़कर वन में भटक रही थी श्री कृष्ण जी की चर्चा करके गोपियाँ ठंडी आंहें भर रही थी। फिर गोपियों ने वन को संबोधित करते हुए कहा,''हे जंगल ! वह सभी वार्ता हमें बता कि श्री कृष्ण जी किस कारणवश हमें यहाँ अकेला छोड़ गए हैं और किस ओर गए हैं ?''

जिसने वन में मरीच वध किया था, जिसके सेवक हनुमान ने रावण की लंका का दहन किया था, उसी के साथ ही गोपियों ने प्रेम किया है, उनके कारण ही लोगों का हास परिहास सहन किया है। सुंदर गोपियाँ परस्पर कह रही हैं,''उनके नयन रूपी वाणों की मार से हमारा मन रूपी म ग शिकार हो कर रह गया है अर्थात् श्री कृष्ण जी के नयनों के कटाक्ष पर हमारा मन मोहित हो गया है।

।।सवैया।। बेद पड़ै सम को फल हो
बहु मंगन को जोऊ दान दिवावै।।
कीन अकीन लखै फल हो जोऊ
आथित लोगन अंनु जिवावै।।
दान लहै हमरे जिअ को
इह के सम को न सोऊ फल पावै।।
जो बन मै हमको जररा इक
एक घरी भगवान दिखावै।।४८८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३१७

गोपियाँ अति व्याकुल होकर सब से विनय करती हैं, जो पुरूष क्षण भर के लिये भी उनका भगवान श्री कृष्ण जी के दर्शन कराएगा, उसको म तक को जीवित करने के तुल्य पुण्य प्राप्त होगा। गोपियों की व्याकुलता उसी क्षण तक समाप्त नहीं होगी, जब तक उनको भगवान श्री कृष्ण जी के दर्शन नहीं हो जाते। उनको याद आती है कि विभीषण को लंका का राज्य प्रदान किया था। जिसने ऋषियों की रक्षा के लिए दैत्यों का विनाश किया था, वह इस स्थान पर गोपियों के साथ अत्याधिक प्रीत करने के पश्चात इस वन में छिप गए हैं। गोपियाँ वनों को भी संबोधित करके कहती हैं। गोपियाँ उनके पांव पड़ती हैं कि वह उनको बता दें कि श्री कृष्ण जी आखिरकार गए कहाँ हैं?

सभी ग्वालिनें अति व्याकुल होकर श्री कृष्ण जी को खोज रही हैं, परन्तु उनके प्रयत्नों के पश्चात भी उनको श्री कृष्ण जी

नहीं मिले। सभी गोपियों ने यह निश्चय कर लिया कि श्री कृष्ण जी जिस स्थान से लुप्त हो गए थे, उसी स्थान पर फिर लौटकर न आ गए हों इसलिए सभी गोपियाँ उसी स्थान पर पुनः लौट आईं।

जब वहाँ भी दर्शन न हुए तो वे उनको खोजने चल पड़ीं। उनकी सुधि श्री कृष्ण जी के चरणों से जुड़ी हुई थी। जब चारों ओर ढूंढने पर भी भगवान श्री कृष्ण जी न मिले तो गोपियाँ व्याकुल हो खड़ी हो गईं। वे इस प्रकार लग रही थीं जैसे दीवार पर मूर्ति अंकित हो या जैसे कोई सुन्दर पत्थर की मूर्ति हो। उन्हें यही उपाय सूझा कि वे अपने ध्यान को श्री कृष्ण जी के चरणों से जोड़ दें। एक गोपी यथावत् खड़ी होकर श्री कृष्ण जी की याद में उनकी महिमा का गुणगान करने लगी, एक मुरली बजाने लगी तो एक ने उनका स्वांग धारण कर खेलना प्रारंभ कर दिया, वे भगवान श्री कृष्ण जी को खोजने लगीं एवं रो-रोकर अपने प्रिय का स्मरण करने लगीं।

हम को क्यों छाड़यो ब्रज नाथ।
सरबंस दिया तुम्हारे हाथ।।

श्री कृष्ण जी कहीं न मिले, गोपियाँ आपस में परस्पर बातें करने लगी,''हे सखी ! यहाँ तो और कोई दिखाई नहीं पड़ता, हम किस से पूछें हमारे प्रिय कृष्ण जी किस ओर गए हैं ?'' इसके उत्तर में एक सखी ने कहा,''सुनो मेरी सहेली ! मेरे मन में एक बात आई है, कि यह जितने भी वन में, पशु-पक्षी एवं व क्ष हैं, इन को सब कुछ दिखाई देता है। इन्होंने श्री कृष्ण जी की लीला देखने के लिए अवतार धारण किया है, जिस ओर हरि जी गए हैं, उनको पता है।'' इस प्रकार अधीर व अति व्याकुल होकर गोपियाँ, पेड़ों-पौधों से अपने प्रिय प्रभु के बारे में पूछने लगी,

चौपई

ऐ बड़ पीपल पागड़ वीर।।
लहा यतन कर ऊच शरीर।।

पर उपकारी तुम ही भए।।
व क्ष रूप प थ्वी पर लए।।
धाम सीत बरखा दुःख सहै।।
काज पराए ठाढे रहे।।
हे बिगसा फूल मूल फल डार।।
तिन से करत पराई सार।।
सब का मन हर नंद लाल।।
गये ईधर को कहीं दयार।।
हे कदली अंब और कद लाल।।
तुम कहु देखे जात मुरार।।
हे अशोक चंपा कर बीर।।
जा लखे तुम ने बलबीर।।
हे तुलसी अति हरि प्यारी।।
तुम ने हरि नहीं देखे प्यारी।।
फूली आज मिलै हरि आए।।
हम ही को किन देत बताए।।
जाती जूही मालती खाई।।
इत है निकसे कुवर घनाई।।
म गन पुकार कहै ब्रजनारी।।
इत तुम जात लखो बनवारी।।

—भागवत पुराण, प ष्ठ ३२२

यह सब करती हुई गोपियाँ पशु-पक्षी, व क्षो-केलों से पूछती-पूछती स्वयं ही श्री कृष्ण जी का रूप हो गईं। एक गोपी पूतना बनी तो एक त णाव त बन गई एवं एक ने अघासुर का रूप धार लिया। एक गोपी ने श्री कृष्ण जी का स्वरूप धार कर दैत्यों को मारकर धरती पर पटकने का नाटक किया। उनका मन श्री कृष्ण जी के चरणों में अनुरक्त हो कर पलभर के लिये भी दूर होना नहीं चाहता था। ग्वालिनें विरह का भाव प्रकट कर अधिक विरह युक्त हो जाती। इस प्रकार के कौतुक अन्य लोगों के मन में संशय

पैदा कर रहे थे। गोपियाँ अपने प्रियतम के बिछौह का दुःख वर्णन करके सभी को शिक्षा दे रही थी कि उन्होंने श्री कृष्ण के साथ प्रीति लगाकर बहुत दुःख अनुभव किया है। कोई अन्य भी जो उनके साथ प्रेम करेगा, वह भी इसी प्रकार दुःख उठाएगा। श्री कृष्ण जी के वियोग में उनकी मनोव्यथा अत्यंत गम्भीर हो रहीं थी परन्तु कल्पित रूप में वह उनके दर्शन करके, उनकी लीलाओं को मन में संजोय अपने आप को धैर्य दे रही थी।

एक ग्वालिन व षभासुर का रूप धारण करती है एवं एक गोपी बछरासुर का रूप धारण करती है। एक ग्वालिन चार मुखों वाले ब्रह्मा का रूप धर कर ग्वाल-बालों को चुरा ले जाती है एवं फिर एक ब्रह्मा रूप गोपी बगुला बनकर मन में अति क्रोध भरकर श्री कृष्ण जी के साथ युद्ध करती है। इस प्रकार ब ज की नारियाँ खेल करती हैं, जिस प्रकार उनके साथ कभी कृष्ण जी करते थे। इस प्रकार नाटकीय ढ़ग से श्री कृष्ण जी को स्मरण कर सभी ग्वालिनें उनके गुण गाने लगीं। गोपियाँ बहुत ज़ोर से तालियां बजातीं एवं बाँसुरी पर मनोहर धुन बजाती हैं। उनको श्री कृष्ण जी के संग खेले हुए खेलों का स्मरण आते ही वे स्वयं को भी भूल गईं एवं वह उनके वियोग में अत्यंत दुःखी होने लगीं। जब वे बहुत दूर निकल गईं, तो एकाएक श्री कृष्ण जी के पद चिन्हों के साथ एक नारी के पद चिन्ह भी प्रकट हुए। उत्सुकता से उन्होंने दायें-बाएं देखा, एक ओर कोमल पत्तों के बिछावन व सुंदर जड़ाऊ दर्पण पड़ा हुआ है। फिर दर्पण से पूछने लगी, भला कभी दर्पण भी बोल सकता है? एक गोपी ने कहा,''इसकी क्या आवश्यकता पड़ गई थी ?'' उसके उत्तर में एक सखी ने कहा,''हे सखी ! यहाँ श्री कृष्ण जी की प्रियत्मा ने अपना मुख देखने के लिए यह दर्पण हाथ में लिया होगा। यह बात सुनते ही एक गोपी क्रुध होकर बोली,''इस कारण दर्पण ने भी बहुत तप किया होगा।'' इस पर सभी गोपियाँ अति व्याकुल हो उठी एवं श्री कृष्ण जी की खोज अधिक तत्परता से करने लगीं।

उधर राधा अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के साथ अनेक प्रकार के सुख भोगते हुए मन में सोचने लगी कि श्री कृष्ण जी ने उनको सब सखियों से अधिक प्रेम किया है एवं सम्मान दिया है, यही सोचकर मन ही मन अपने पर गर्व करने लगी। राधा ने अपने प्रिय हरि जी से कहा,''हे प्रिय अब मुझसे चला नहीं जाता, मुझे अपने कंधे पर बिठा लो।'' इतनी बात सुनते ही अंतर्यामी श्री कृष्ण जी ने मुस्कुराते हुए कहा,''आओ मेरे कंधों पर चढ़ जाओ।'' राधा हाथ पसारकर खड़ी ही रह गई। भगवान श्री कृष्ण जी अर्न्तध्यान हो गए। जब श्री कृष्ण जी राधा की आँखें से ओझल हो गये तो राधा ने ऊँचे स्वर मे क्रन्दन शुरू कर दिया। उसका रूदन सुनकर पशु-पक्षी, जड़-चेतन, भी उसके संग विलाप करने लगे।

हाहा नाथ परम हितकारी।
कहा गए सवै् छंद बिहारी।
चरण सरन दासी मै तोरी।।
क पा सिंघ लीजै सुध मोरी।।

राधा श्री कृष्ण जी को पुकार-पुकार कर विलाप कर रही थी। तब सभी गोपियाँ श्री कृष्ण जी को खोजती-खोजती राधा के निकट आ पहुँची एवं राधा के गले लगकर खूब ज़ोर ज़ोर से रोने लगी। उन ग्वालिनों का अत्यंत स्नेह देखकर भगवान जी ने शीघ ही उनको अपना दर्शन देकर त प्त किया। धरती के ऊपर इस प्रकार प्रकाश हुआ जैसे रात्रि के समय आतिशबाजी से प्रकाश होता है। सभी गोपियाँ उस प्रकाश को देखकर इस प्रकार चौंक पड़ीं जैसे निद्रा में मनुष्य स्वप्न देखकर एकाएक ड़रकर चौंक पड़ता है, श्री कृष्ण जी की ओर इस प्रकार भाग उठीं जैसे मदिरा पान के पश्चात मनुष्य घर को छोड़कर भाग उठता है। गुमान भरे भगवान को देखकर ही ग्वालिनें उनको मिलने के लिए चल पड़ीं। जिन ग्वालिनों को अपनी सुंदरता पर अभिमान था वह भी श्री कृष्ण जी के दर्शनों के लिए भाग उठीं

जैसे हिरनियाँ म ग को देखने के लिए चल पड़ती हैं। श्री कृष्ण जी गोपियों को मिलकर अति प्रसन्न हुए। जैसे पपीहा स्वाति बूंद मिलने पर प्रसंन होता है एवं जैसे पानी से बिछड़ी हुई मछली पानी को देखकर उछलकर उसमें जा गिरती है इसी प्रकार गोपियाँ श्री कृष्ण को देखते ही उनका आलिंगन कर बैठीं। श्री कृष्ण जी के कंधे पर पीतांबर रहता है उनकी दोनों आँखें हिरण की आँखों की तरह सुशोभित हो रही थी। श्री कृष्ण जी के कण्ठ में वह मणि भी सुशोभित हो रही थी जो समुद्र से उनको भेंट स्वरूप मिली थी। श्री कृष्ण जी उन गोपियों के बीच विचरते हैं जिन के समान सम्पूर्ण जगत में कोई भी सुंदर नहीं। ब ज की ग्वालिनें मन ही मन अत्यंत प्रसन्न हो रही थीं।

।।कबितु।। कउल जिउ प्रभात तै बिछरयो मिली बात तै
गुनी जिउ सुत सात तै बचायो चोर गात तै।।
जैसे धनी धन तै अउ रिनी लोक मन तै
लरईया जैसे रन तै तजईया जिउ नसात तै।।
जैसे दुखी सूख तै अभूखी जैसे भूख तै
सु राजा सत्र आपने को सुने जैसे घात ते।।
होत है प्रसंन जेते एते एती बातन तै
होत है प्रसंनय गोपी तैसे कानह् बात तै।।५०२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३१६

गोपियों की व्याकुलता समाप्त हुई नहीं कि वे श्री कृष्ण जी के दर्शन पाकर, उनके प्रेम में आनन्द विभोर हो कर झूम उठीं।

२०

।।सवैया।। पउन प्रचंड बहै अति तापत
चंचल चिति दसो दिस धाई।
बैस अवास रहै नर नार
बिहंगम वार सु छाहि तकाई।
देख असाड़ नई रित दादर
मोरन हूं घनघोर लगाई।
गाढ परी बिरही जन को
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६१७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७८

शब्दार्थ : प्रचंड—अग्नि के समान गर्म हवा। तापत—(तपी हुई हवा) तपा रही है। बैस—बस रहे हैं। अवास—घर के भीतर, महलों में। बिहंगम—पक्षी, उड़ने वाले जीव। वार—जल व छांव। तकाई—ढूंढ कर, देख कर। रित—नई ऋतु जो अर्ध आषाढ़ से प्रारंभ होती है। दादर—मेंढक। घनघोर—ध्वनि, गूँज लगाई है। गाढ—भीड़, बिपतर, कठिनाई बनी है। बिरही—बिछड़े हुए दुःखी जन को।

व्याख्या : श्री कृष्ण जी ब ज की गोपियों को त्याग कर मथुरा चले गए। गोपियों का हर पल श्री कृष्ण जी का स्मरण करते व्यतीत होता। वे हर क्षण, हर पल अपने प्रियतम को स्मरण करती। अब आषाढ़ का महीना आ गया। इस मास में अत्याधिक उष्णता पड़ती है, हवा अत्याधिक तीव्रता से चलती है एवं तन को जलाती है। अत्याधिक तपिश होने के कारण सभी

स्त्री-पुरूष अपने घरों के भीतर बैठे रहते हैं एवं पक्षियों के झुंड गर्मी से अति व्याकुल हो कर जल व घनी छांव को लोचते हैं। आषाढ़ के मास में वर्षा का आगमन होते ही मेंढकों ने टर्टराना, मयुरों ने कुहु-कुहु व बादलों ने गर्जना आरम्भ कर दिया। इस ऋतु में अपने प्रीतम से बिछुड़े हुए पुरूषों को अत्याधिक मुसीबतों का सामना करना पड़ जाता है क्योंकि अपने प्रीतम के साथ मेल होने की आशा धूमिल होने लगती है इसलिए हृदय धैर्य खो बैठता है।

भावार्थ : प्रचंड हवाओं के वेग व तपिश के कारण पक्षी अपने घनी छाया से भरपूर आवास खोजते हैं परन्तु प्रीतम के वियोग के कारण पड़ी मुसीबत के लिए कहाँ ठिकाना खोजा जाए?

गाढ परी बिरही जन को

जब श्री कृष्ण जी इस संसार का त्याग कर बैकुण्ठ चले गए तो महाराज युधिष्ठिर को भयानक स्वपन सपने आने लगे; अजीब से कुलक्षण दिखाई देने लगे; उनका मन धैर्य खो बैठा। वह अति चिंतातुर व व्याकुल हो उठे कि श्री कृष्ण जी आनंद मंगल तो हैं। उन्होंने भीम के समक्ष अपनी चिंता प्रकट की कि उनकी बाईं आँख व बाईं भुजा फड़कने लगी है; तारे टूटते हुए दिखाई देते हैं; जब वह तबेले में जाते हैं तो हाथी-घोड़े रोते दिखाई पड़ते हैं; दिन एवं रात्रि को स्वान रोते रहते हैं; चारों दिशाओं में अंधेरा दिखाई देता है। जिस समय आँधी आती है, उस समय रक्त की वर्षा होती है; गायों का दूध बछड़े प्रसन्न हो कर नहीं पीते; गायों की आँखों से आँसूओं की धारा बहती है; युधिष्ठिर की सभा में लोग मिथ्यावादी हो गए हैं एवं उनका स्वभाव क्रोधी हो गया है। आकाश में जैसे केतु तारा चमकता प्रतीत हो रहा था। साधूओं, संतों, महात्माओं का चित्त हरि के स्मरण में नहीं लग रहा था और वह विषई हो गए हैं। नगर में किसी के ग्रह में मंगलाचार नहीं हो रहा था; सभी ओर सूनापन

छाया हुआ था, उनको ऐसे लग रहा था जैसे उनके प्रिय श्री कृष्ण जी बैकुँठ चले गए हों।

द्वारका पुरी में श्री कृष्ण जी ने वास्तव में बैकुंठ जाने की तैयारी कर ली। उस समय श्री कृष्ण जी ने अर्जुन को अपने समीप बुलाया व आदेश दिया,''हे अर्जुन ! तुम सभी यादवों का सामान एवं विधवा स्त्रियों को साथ ले कर हस्तिनापुर चले जाओ एवं किसी प्रकार का शोक नहीं करना।'' अपने स्वामी के आदेशानुसार अर्जुन सभी सामान एवं स्त्रियों के साथ हस्तिनापुर की ओर रवाना हुए। रास्ते में भील डाकुओं ने अर्जुन पर आक्रमण कर दिया। अर्जुन ने उन पर बाणों की वर्षा की परन्तु सभी के सभी वार व्यर्थ जा रहे थे। ऐसे लग रहा था कि अर्जुन का अभिमान एवं अहंकार नष्ट करने के लिए ही श्री कृष्ण जी का रचाया हुआ यह स्वांग था। जब अर्जुन के सभी बाण निष्फल हो रहे थे, उस समय अर्जुन अपने मन में उधेड़-बुन कर रहा था कि ऐसे शक्तिशाली बाणों से तो भीष्म पितामह, कर्ण, जयद्रथ इत्यादि बड़े-बड़े शूरवीर धराशायी हो गए फिर वही बाण एक मुट्ठी भर डाकुओं का कुछ भी न कर सके, उनका कुछ भी न बिगाड़ सके। अर्जुन को यह अनुभव हो रहा था कि उसके बाणों के पीछे सम्पूर्ण शक्ति श्री कृष्ण जी की दी हुई थी, उसका अहंकार करना तो बिल्कुल व्यर्थ था। अर्जुन को ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जो कुछ होता था, वह सब श्री कृष्ण जी की क पा के कारण ही होता था, वह तो केवल अर्जुन को मान-सम्मान देने के लिए प्रत्येक सफलता का श्रेय अर्जुन को ही प्रदान करते थे।

चिंतातुर अर्जुन हस्तिनापुर पहुँच अपने बड़े भाई के चरणों में गिर पड़े। उन्होंने उसे उठा कर अपने गले से लगाया व उदासीनता का कारण पूछा। बड़े भाई ने कई प्रकार के प्रश्न पूछ कर, अर्जुन की व्यथा को जानने का प्रयत्न किया,''अर्जुन तेरा मुख इतना मलिन किस कारण से है ? तुझे कोई रोग तो नहीं, अधिक दिन द्वारका में रहने के कारण किसी ने तुम्हारा

अनादर तो नहीं किया या किसी ने कुछ मांगा हो और तुम दे न सके हो या किसी महात्मा या साधू का निरादर तो नहीं तुम से हो गया, कोई भूखा-प्यासा तुम्हारे घर से लौटकर तो नहीं चला गया, कोई ब्राह्मण या स्त्री तेरी शरण में आए हों और तुम उसकी सहायता न कर सके हो या मेरे परमप्रिय श्याम सुंदर कहीं बैकुंठ तो नहीं चले गए ? तेरा मन किस कारण इतना अधिक उदास है ?'' अपने बड़े भाई की बातें सुनकर अर्जुन ने कुछ उत्तर न दिया परन्तु श्री कृष्ण जी का नाम सुनते ही उसने ज़ोर-ज़ोर से रोना प्रारंभ कर दिया।

अर्जुन को ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वह अपने परम प्रिय इष्ट के वियोग में अति पीड़ित होकर अनेक तरह की कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं। उनकी बोलने की शक्ति ही जैसे समाप्त हो गई हो। वह बच्चों की तरह फूट-फूटकर रोने लगे। कुछ ही देर में अपने मन को समझाते हुए धैर्य किया व उत्तर दिया,''हे प थ्वीनाथ ! मैं क्या कहुँ, हमारे परम प्रिय श्याम सुंदर जी हम सभी को छोड़कर बैकुंठ धाम को सिधार गए हैं। यदि मुझे यह ज्ञान होता कि वह साक्षात परमेश्वर का अवतार हैं, तो मैं तन-मन के साथ उनकी सेवा करके अपने जीवन को सफल करता व इस भवसागर से पार हो जाता। परमेश्वर की महिमा अति प्रबल है, जिस कारण हम उनके वास्तविक रूप की पहचान नहीं कर सके। जिस प्रकार चंद्रमा कच्छुए के श्राप के कारण समुद्र में जा छुपा था व जल के जीव, मछली इत्यादि ने उनको भी जल जीव समझ लिया व उनसे अम त नहीं प्राप्त किया जिसको पी कर वह अमर हो सकते थे। इस प्रकार हम भी श्री कृष्ण जी को नहीं पहचान सके। मेरा मन शोक से भरा हुआ है; मैं बहुत पछता रहा हूँ; हम ने अपने प्रिय श्री कृष्ण जी की सहायता के कारण महाभारत में बड़े-बड़े शूरवीर सहज ही मार दिए थे, उस समय मेरा मन यही सोचता था कि सभी कुछ मैंने ही किया है, मैंने ही अपने बल से सभी को मार गिराया है। वो सब कुछ मिथ्य था। इस बात का ज्ञान मुझे अब हो

रहा है, वही बाण, वही धनुष, वही अर्जुन मैं हूँ जिसने भीष्म पितामह, कर्ण, जयद्रथ, मय नामक राक्षसों को जीता था एवं कई राजाओं को जीतकर अपने लिए धन लाया था। उन्ही बाणों के होते हुए भील लोग मुझसे रास्ते में स्त्रियों सहित सब कुछ लूटकर ले गए। जब भी हम पर कोई विपत्ति आती थी, श्री कृष्ण जी वहाँ सुर्दशनचक्र भेजकर हमारी सहायता करते थे। जब महाभारत में कर्ण इत्यादि शूरवीर मुझे मारने के लिए शस्त्र चलाते, श्री कृष्ण जी उस समय मेरे आगे खड़े होकर मुझे बचा लेते एवं धैर्य देते। मैं उनकी क पा के कारण ही बड़े-बड़े प्रतापी राजाओं के सामने द्रोपदी को स्वयंवर में से जीतकर लाया था। जिस समय दुर्वासा ऋषि अर्ध-रात्रि को भोजन हेतु हमारे पास आए, वह हम सभी को श्राप देना चाहते थे, उस समय श्री कृष्ण जी हमें अपना भक्त जानकर हमारे पास वन में आए तथा अन्न का एक तिनका अपने मुँह में ड़ालकर सभी को त प्त कर दिया। दुर्वासा ने श्राप न देकर बदले में आशीर्वाद दिया। यह सभी बातें जब स्मरण हो आती हैं तो कलेजा फट जाता है। हे राजन ! मैं और श्री कृष्ण जी साथ-साथ एक ही थाली में खाना खाते थे, एक ही श्यया पर सोते थे, वह मेरा कितना आदर करते थे, अब हमारी रक्षा श्री कृष्ण जी के बिना कौन करेगा ? किसके भरोसे हम शेष जीवन व्यतीत करेंगे। जब श्री कृष्ण जी महाभारत के पश्चात् द्वारका गए, उन्होंने देखा कि यादव बहुत बलवान हो गए हैं; किसी से मरने वाले नहीं, श्री कृष्ण जी की अनुपस्थिति में युद्ध करेंगे। इस कारण इनका नाश कर देना ही उचित है। स्वयं अपने हाथों से मारना अपराध जान दुर्वासा ऋषि से श्राप दिलवाया एवं करोड़ों यादव परस्पर लड़कर ही मर गए। जिस प्रकार समुद्र में बड़े जीव छोटों का भक्षण करते हैं। हे राजन ! अब हमारे जीवन का कोई मनोरथ नहीं''। इस प्रकार अपने प्रिय ईष्ट श्री कृष्ण जी से बिछड़कर अर्जुन पर कठिनाइयों का पहाड़ टूट पड़ा।

सुन्दर श्याम

२१

।।सवैया।। ताल भरे जल पूरनि सौं
अरु सिंध मिली सरिता सभ जाई।
तैसे घटान छटान मिली
अति ही पपीहा पीय टेर लगाई।
सावन माहि लगिओ बरसावन
भावन नाहि हहा घरि माई।
लाग रहयो पुर भामन सौं
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६१८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७६

शब्दार्थ : सिंध—समुद्र में। सरिता—नदियां। घटान—घटा, बादलों के साथ। छटान—बिजलियां (मिल रही हैं)। टेर—लगातार बोलने की धुनि लगाई है। भावन—मन को भाने वाला प्रियवती। हहा—हाए हाए माँ, बड़ा दुःख है। भामन—शहिरन मुहियारों के साथ लगा हुआ है।

व्याख्या : श्रावन मास आ गया। श्रावन मास में अत्याधिक वर्षा होती है, चारों ओर वर्षा के कारण जल, थल हो जाता है। मौसम अति सुहावना व रमणीय बन जाता है। प्रक ति का कण-कण जल से घुल कर स्वच्छ व उज्जवल बन जाता है। सभी तालाबों में जल की भरमार होने के कारण पानी किनारों तक आ जाता है तथा नदियां उछलती-उछलती अपने प्रिय प्रियतम सागर को मिलने के लिए उतावली हो उठती है। ऊपर आसमान में काली घटाएँ ऊमड़ने लगती हैं, वातावरण में पपीहा

अपने प्रियतम की रट लगाता है एवं पीहु-पीहु करता है। श्रावण मास में बादल जल से भरपूर होते हैं, परन्तु गोपियों की दशा अति दयनीय है क्योंकि ऐसे सुहावने मौसम में, जब प्रक ति का हर पल, हर कण पुलकित हो उठा है, गोपियों के प्रिय इष्ट श्री कृष्ण जी उन से दूर हैं, वह असहाय क्या करें उनका प्रियतम तो परदेस में है। उनके प्रियतम ने ब ज को, गोपियों को भूला दिया है एवं उनका मन मथुरा की युवतियों, स्त्रियों में रम गया है। उस परदेसी प्रियतम का हृदय ब ज की गोपियाँ की ओर न तो झुका एवं न ही प्रेमी को उन गोपियों के प्रति कोई आकर्षण रहा है।

भावार्थ : धरती पर मूसलाधार वर्षा होने के कारण सब जल थल हो गया है, काली घटाएँ एवं घोर काले बादल गोपियों को अपने प्रियतम श्री कृष्ण जी का स्मरण कराती हैं।

भावन नाहि हहा घरि माई

गोपियों का मन भावन श्रावन में भी उनके निकट नहीं। वह उनको त्याग कर मथुरा पुरी की स्त्रियों के वश में हो गया है। उस प्रियतम की याद बार-बार सताती है, इसलिए उन गोपियों का अपना मन भावन उनके श्वास-श्वास में बसा हुआ है। वह उसके नाम की माला जपती हैं। जब मौसम अति सुहावना होता है, बाहर रिमझिम-रिमझिम वर्षा होती है, सम्पूर्ण वातावरण उज्जवल, स्वच्छ एवं स्पष्ट होता है, तो गोपियों के हृदय की गति बढ़ जाती है, वे व्याकुल एवं अधीर हो जाती हैं, वे आहें भरकर परस्पर सांत्वना देने का प्रयत्न करती हैं,''हे सखी ! हमारा प्रिय मनभावन आज हमारे निकट नहीं है। जब जब अत्याचार, क्रूरता का बोलबाला होता था, जब भी दैत्य संतों को तंग करते थे, जब चारों ओर हा-हाकार मची थी, उस समय धरती गाय का रूप धारण कर ब्रह्मा जी के पास गई एवं जाकर पुकार की। ब्रह्मा जी ने उसको कहा,''तुम और मैं दोनों

मिलकर वहाँ जाएँ जहाँ महाविष्णु जी रहते हैं, उनके पास जाकर हम विनम्र निवेदन करते हैं।'' इस प्रकार कार्यक्रम तय कर के सभी देवता ब्रह्मा जी को साथ लेकर महाविष्णु जी की सेवा में उपस्थित हुए। वहाँ जाकर सब ज़ोर-ज़ोर से विलाप करने लगे जैसे उनको किसी ने मारा-पीटा हो, जैसे बनिया लुट गया हो तथा चौधरी को ले जाकर कोतवाल के समक्ष फरियाद करने के लिए एकत्रित हो गए हों। धरती रूपी गाय ने प्रणाम किया व नेत्रों के जल से उनके पाँव धोए। सागर में सब महाविष्णु के चरणों पर गिर गए। उन्होंने ब्रह्मा जी से कहा,''आप जाएँ। मैं अवतार धारण कर दैत्यों को जड़ से विनाश कर दूंगा।'' सभी देवताओं के मन अति प्रसन्न हुए। फिर विष्णू जी ने हमारे प्रिय श्री कृष्ण जी के रूप मे धरती पर अवतार धारण किया।

।। दोहरा।। फिरि हरि इह आगिआ दई देवन सकल बुलाइ।
जाइ रूप तुम हूं धरो हउ हूं धरि हौ आइ।।१३।।

—दशम ग्रंथ पष्ठ २५६

दूसरी गोपी ने अपने मन भावन की बाल-लीला को स्मरण करते हुए अपने प्रियतम के वह दिन सब को स्मरण कराये, जब उनके हाथ में शंख, गदा, त्रिशूल धारण किया हुआ था। चतुर्थ हाथ में खड्ग, पांचवें हाथ में कमल, छठे में धनुष, सांतवें में तीर, आठवें हाथ से धैर्य देने का संकेत कर रहे हैं। इस प्रकार का स्वरूप धारण किए हुए प्रेम स्वरूप ने अपनी देह पर पीले वस्त्र धारण किए हुए थे। जिस समय देवकी गहरी निद्रा में थी, उस क्षण कारागह में इस प्रकार का स्वरूप धारण किए हुए एक महापुरूष प्रकट हुए। वह मन में डर गई। उन्होंने उसे पुत्र के सम्बन्ध से नहीं जाना बल्कि हरि स्वरूप जान प्रणाम करके उनके चरणों में गिर पड़ीं।

क्रिसन जनम जब ही भयो देवन भयो हुलास।।
सत्र सभै अब नास होहि हम को होइ बिलास।।५६।।

—दशम ग्रंथ पष्ठ २६०

श्री कृष्ण जी ने देवकी के ग ह में अवतार धारण कर माता यशोदा एवं बाबा नंद के ग ह में अपने बचपन के मनोहर दिन अपने बाल-गोपालों के साथ मौज-मस्ती में व्यतीत किये। दूसरी ओर कंस को अत्याधिक चिंता हुई तथा उसने श्री_कृष्ण जी का जीवन अन्त करने की योजनाए बनानी प्रारंभ कर दी। कंस ने वनदैत्य की बहन को बुला कर कहा,"हे पूतना ! एक बात ध्यान से सुन ले और आज ही मेरा कार्य कर दे। जो बालक मेरे राज्य में जन्में हैं उनको जाकर समाप्त कर दे क्योंकि उनके भय से मेरा हृदय कांप उठा है।" पूतना ने कंस को वचन दिया कि वह सब बालकों को मोत के घाट उतार देगी और कंस निर्भय होकर राज्य करे। पापिन पूतना ने सम्पूर्ण जगत के स्वामी की हत्या करने की जिम्मेदारी ले ली। वह सोलह श ंगार करके गोकुल में जा पहुँची। छल के साथ यशोदा से बालक श्री_कृष्ण जी को गोद में ले लिया एवं विष से लिप्त स्तनों को श्री_कृष्ण जी के मुख में डाल दिया। श्री कृष्ण जी ने उसके प्राण भी दूध के साथ ही मुख में खींच लिए।

।।दोहरा।। पाप करिओ बहु पूतना जा सो नरक डराइ।।
अंति कहियो हरि छाडि दै बसी बिकुंठह जाइ।।८८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २६३

इस प्रकार श्री कृष्ण जी ने सब से पहले पूतना की गति की व धरती का भार उतारा।

हे सखी ! मेरे प्रिय को फिर त्रिणाव्रत ने मारने का प्रण किया। गोकुल में पहुँचकर त्रिणाव्रत ने व ताकार बन कर ज़ोर की हवा चला दी। श्री_कृष्ण जी ने भी स्वयं को भारी कर लिया एवं उसको धरती पर पटक दिया। त्रिणाव्रत श्री कृष्ण जी को लेकर आकाश में उड़ गया। घमासान युद्ध हुया। श्री_कृष्ण जी ने अपने शत्रु का सिर काट दिया व त्रिणाव्रत धरती पर इस प्रकार गिरा जैसे कोई पेड़ धरती से उखड़ कर गिरा हो एवं उसका सर ऐसे गिरा जैसे शाख से फल गिरता है।

जउ हरि जी नभि बीच गयो
कर तउ अपने बल को तन चटट्ा।।
रूप भयानक को धरिकै
मिलि जुद्ध करयो तब राछस फट्टा।।
फेरि संभार दसो नख आपने
कै कै तुरा सिर सत्र को कट्टा।।
रुंड गिरयो जन पेडि गिरयो
इम मुंड परयो जन डार ते खट्टा।।१०६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २६६

हे सखी ! मेरे प्रियतम ने बच्छासुर का वध कर धरती के भार को हल्का किया। अब बक दैत्य ने मेरे प्रिय की हत्या का वचन लिया। श्री कृष्ण जी ने पलों-क्षणों में अग्नि रूप धारकर उसका कंठ जला दिया फिर उसकी चोंच पकड़कर उसके शरीर को चीरकर रक्त की धारा बहा दी एवं उसके जीवन का अंत कर दिया।

।। कबितु।।जबै दैत आयो महा मुखि चवरायो
जब जानि हरि पायो
मन कीनो वाके नास को।।
सिद्ध सुर जाप तिनै उखार डारी चोच वाकी
बली मार डारयो महाबली नाम जास को।।
भूमि गिर परयो ह्वै दुटूक महा मुखि वा कौ
ता की छबि कहिबे को भयो मन दास को।।
खेलबे के काज बन बीच गए बालक जिउं
लै के कर मद्धि चीर डारैं लांबे घास को।।१६३।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ २७३

फिर पूतना के भाई अघासुर ने श्री कृष्ण जी की हत्यावश अपने मुख को विशाल कर लिया। श्री कृष्ण जी के सभी बालक सखा उसके खुले हुए मुख में चले गए फिर श्री कृष्ण जी भी उसके खुले मुख के अन्दर घुस गए। उसने लेटकर अपना मुख

बंद कर लिया, श्री कृष्ण जी ने अपनी देह को बढ़ाकर उस राक्षस के मुख का द्वार बन्द कर उसके श्वास रोक दिए। श्री कृष्ण जी ने उसका सर फोड़ दिया व इस प्रकार अघासुर को अपने प्राणों से हाथ धोने पड़े। फिर मेरे प्रिय ने व ष्भासुर दैत्य जिसके सींग आकाश को छूते थे बहुत क्रोध के साथ अपने दोनों हाथों के बल से जकड़कर अठारह कदम की दूरी पर पटक दिया। जब उसने पुनः लड़ने का प्रयास किया तब श्री हरि ने उसको फिर उठा कर दूर फेंका जिससे उसकी म त्यु हो गई। वास्तव में उसका अंत लड़ने से नहीं अपितु मेरे प्रिय भगवान श्री कृष्ण जी के स्पर्श से ही उसकी मुक्ति हो गई थी। इसी प्रकार हे सखी ! केशी दैत्य को भी क्षणों में ही मार डाला। बिसवासुर दैत्य चोर बनकर जब ग्वाल बालों को खाने के लिए आया उस क्षण श्री कृष्ण जी ने उसकी गर्दन पकड़कर जोर से धरती पर पटक कर म त्यलोक पहुँचा दिया। उसका संहार कर साधु संतों की रक्षा की। कुव्वलीया पीड़ हाथी को क्षणों में मार डाला व फिर चंडूर पहलवान का कुछ क्षणों में ही अन्त कर दिया।

हे सखी ! मुझे आज अपने प्रिय की याद बहुत सता रही है। उन्होंने क्षणों में कंस, जिसने श्री कृष्ण जी की हत्या करने के अनेकों प्रयत्न किए उसको शीघ्र ही समाप्त कर दिया।

गहि केसन ते पटकयो धर सों
गहि गोडन ते तब घीस दयो।।
न्रिप मार हुलास बढयो जीय मै
अति ही पुर भीतर सोर पयो।।
कबि सयाम प्रताप पिखो हरि को
जिन साधन राख कै सत्र छयो।।
कट बंधन तात दए मन के
सभ ही जग मै जस वाहि लयो।।८५२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६७

पहले केशों से पकड़कर धरती पर पटक दिया। टांगों से पकड़कर धरती पर घसीटा व इस प्रकार उसका अन्त कर दिया।

धन सिंह जैसे शूरवीर को मार गिराया एवं गज सिंह बली जब अति क्रोधित हो गये तब मेरे प्रिय श्री कृष्ण जी ने उसका भी वध कर दिया।

।।दोहरा।। अणग सिंघ अउ अचलसी अमित सिंघ न्रिप तीर।
अमर सिंघ अर अनघसी महांरथी रनधीर।।११३६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ४०७

श्री कृष्ण जी ने अनेकों महारथियों को मार गिराया। अपने शूरवीरों का वध देखकर राजा जरासंघ ने सब शूरवीरों को ललकारा व कहा,''देखो ! आज रणभूमि में श्री कृष्ण जी ने पाँच राजाओं का अन्त कर दिया। अब आप निसंकोच होकर रणभूमि की ओर चल पड़ें।'' इस प्रकार राजा जरासंघ के असंख्य शूरवीर श्री कृष्ण जी के हाथों मारे गये।

हे सखी ! मेरे प्राण प्रिय श्याम सुंदर जी ने वीर खड़ग सिंह से भयंकर युद्ध किया। जरासंघ को मारकर प थ्वी के भार को हलका किया। काल यमन को नष्ट किया। हे मेरी प्रिय सखी ! मेरे श्री कृष्ण जी ने मुर दैत्य जो जल के किले में निवास करता था, युद्ध कर उसको भी समाप्त कर दिया।

।।सवैया।। घाव बिअरथ गयो जब ही
तब गाज कै राछस कोप बढायो।
देह बढाइ बढाइ कै आनन
सयाम जू के बध कारन धायो।
नंदग काढ तबै कटि ते
ब्रिजनाथ तबै तकि ताहि चलायो।
जैसे कुमह्हार कटै घटि को
अरि को सिर तैसे ही काटि गिरायो।।२१२५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ५२३

जब मुर दैत्य के सम्बन्धियों को पता चला कि श्री कृष्ण जी ने मुर दैत्य को मार डाला है, तो उसके सात पुत्रों ने अत्याधिक सेना लेकर श्री कृष्ण जी पर चढ़ाई कर दी। घमासान युद्ध हुआ। श्री कृष्ण जी ने सभी को म त्यु लोक में भेज दिया। हे सखी ! भूमासुर दैत्य को इस घटना का पता चला तो वह अपनी सम्पूर्ण सेना लेकर आ गया। उसकी सेना के साथ श्री कृष्ण जी ने डटकर मुकाबला किया।

।।सवैया।। जुद्ध को आवत भूप जबै
ब्रिजनाइक आपने नैन निहारयो।
ठाढ रहयो नहि तउन धरा पर
आगे ही जुद्ध को आप सिधारयो।
मारत हउ तुह कौ अब ही
रहु ठाढ अरे इह भांति उचारयो।
यो कहि कै पुन सारंग को
तन कै सर सत्र ह्विदै महि मारयो।।२१३७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ५२५

राजा को युद्ध करने के लिए आता देख श्री कृष्ण जी उसको ललकारते हुए युद्ध के लिए चल पड़े। उन्होंने ऊँची आवाज़ में कहा,''अरे खड़ा रह, तुझे अभी समाप्त करता हूँ।'' ऐसा कहकर सारंग धनुष को खींचकर शत्रु की छाती को तीर से भेद दिया।

।।सवैया।। सारंग तान जबै अरि को
ब्रिजनाइक तीछन बान चलायो।
लागत ही गिर भूम भूमासुर
झूम परयो जमलोक सिधायो।
स्त्रउन लगयो नहि ता सर कौ
इह भांति चलाकी सो पार परायो।
जोग के साधक जिउ तन तयाग चलयो
नभ पाप न भेटन पायो।।२१३८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ५२५

इस प्रकार मेरे प्रियतम ने तीक्ष्ण तीर चलाकर भूमासुर को जीवन मुक्त कर दिया। उसके पश्चात बकत्र दैत्य एवं बैदूरथ दैत्य का वध कर धरती के भार को कम किया। भसमागत दैत्य जिसने शिवजी से यह वर मांगा हुआ था कि जिसके शीर्ष पर वह हाथ रखे वह जलकर भस्म हो जाए, उस को भी कृष्ण जी ने छल से जला कर मरवा दिया था।

।।सवैया।। हाथ धरो जिह कै सिर पै
तिह छार उडै जब ही बरु पायो।
रुद्र ही कउ प्रथमै हति कै
जड़ चाहत तउ तिह त्रीअ छिनायो।
रुद्र भजयो तब आइ है सयाम जू
आइ कै सो छल सो जरवायो।
भूप कहो बडो सो तुम ही कि
बडो हरि है जिह ताहि बचायो।।२४५८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ५६६

इस प्रकार गोपियाँ अपने ह्रदय की व्याकुलता, विह्वलता, कसक, पीड़ा को अपने प्रियतम सर्व प्रतिपालक, सर्व दुष्ट दैत्यों का संहार करने वाले, सर्वश्रेष्ठ श्याम सुंदर उनके इष्ट उनके निकट नहीं, गोपियाँ उनके गुणों का गान कर घड़ी भर के लिए शांति प्राप्त कर लेती है।

श्रावण

२२

।।सवैया।। भादव माहि चड़यो बिनु नाहि
दसो दिस माहि घटा घहराई।
दयोस निसा नहि जान परै
तम बिज्जु छटा रवि की छबि पाई।
मूसलधार छुटै नभि ते
अवनी सगरी जल पूरनि छाई।
ऐसे समे तजि गयो हम को
टसकयो न हियो कसकयो न कसाई।।६१६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७७

शब्दार्थ : नाहि—पति, स्वामी। घहराई—गरजती है। दयोस—दिन व रात का पता नहीं चलता। निसा—दिन व रात पहचान में नहीं आते। तम—अंधेरे में। बिज्जु—बिजली की चमक। रवि—सूर्य। मूसलधार—जल की तीव्र धाराएँ। नभि—आकाश से। अवनी—धरती, भूमि। टसकयो—दर्द महसूस नहीं की। कसकयो—खिंचा नहीं। कसाई—बेदर्द कृष्ण।

व्याख्या : वर्ष के सभी मास एक-एक करके आकर सभी गोपियों व ब जवासियों को तड़पाते हैं। श्री कृष्ण जी का स्मरण करेत हैं परन्तु उनकी विवश्ता का कोई अंत नहीं। वियोग के पल और लंबे हो जाते हैं। उनकी पीड़ा और बढ़ जाती है तथा दुखियारी गोपियों की दशा पर किसी का ध्यान नहीं जात। वह तो अपने प्रिय इष्ट की हर पल आराधना करती हैं कि वह आकर उनको दर्शन देंगे। भाद्रपद का मास आ पहुँचा है परन्तु

गोपियाँ अपने प्रिय स्वामी के बिना अधूरी हैं। दसों दिशाओं में घटाएँ चढ़ी हुई हैं क्योंकि भाद्रपद में चारों ओर बादल मंडराते हैं, सभी ओर मूसलाधार वर्षा धरती, आकाश को एक कर देती है। उनका एक होना भी गोपियों के लिए अति कष्टदायक है क्योंकि उनका स्वामी उनके पास नहीं है। घने बादलों के कारण बहुत चारों ओर अंधेरा छा जाता है जिसके कारण रात व दिन में अंतर करना कठिन हो गया था। पता ही नहीं चलता था कि दिन है या रात। गहरे घने बादलों में से विद्युत कड़कड़ाहट करती है, चमकती है जिसकी चमक सूर्य की शोभा जैसी होती है। बहुत बड़ी धारा आकाश में से गिरती है जिसके साथ पूरी धरती जल से भर जाती है। ऐसे रोमांचक संयोग के क्षण में जबकि गोपियों के प्राण प्रिय को उनके पास होना चाहिए था वह उनको छोड़कर दूर चले गए हैं। उनको वियोग की जलती हुई अग्नि में झोंक गए हैं। उन्होंने मथुरा में जाकर गोपियों की तनिक चिन्ता नहीं की। उनका हृदय ज़रा सा भी गोपियों की ओर नहीं झुका और न ही गोपियों के स्नेह ने श्री कृष्ण जी के हृदय में कोई आकर्षण उत्पन्न किया।

भावार्थ : रिमझिम-रिमझिम गिरती फुहार, आकाश पर छाई काली घटा, बिजली की चमक इस प्रकार का रोमांचकारी समय वियोगियों के लिए अति कष्टदायक है।

अवनी सगरी जल पूरनि छाई

भाद्रपद का मास आ पहुँचा। इस मास की विशेषता यह है कि धरती पर खूब पानी दिखाई देता है एवं लगातार वर्षा के कारण सम्पूर्ण धरा जल के साथ भर जाती है। गर्मी की तपिश के उपरांत वर्षा ऋतु का शुभ आगमन होता है। कहीं काली घटाएँ छा जाती हैं, कहीं तीव्र पवन चलकर पर्यावरण को शीतलता प्रदान करती है, कहीं बिजली की गड़गड़ाहट एवं चमक आकाश में एवं पथ्वी पर गुंजार उत्पन्न करती है।

आकाश में काले, घने बादलों के कारण सूर्य चंद्रमा एवं तारे ढ़के रह जाते हैं। इस प्रकार आकाश शोभायमान होता है। आकाश से ज़ोर की वर्षा प थ्वी को आकर छूती है जैसे सूर्य, धरती व आकाश परस्पर आलिंगन करते हुए दिखाई देते हैं। जिस प्रकार दयालु पुरूष जब देखता है कि उसकी प्रजा बहुत पीड़ित है, उस समय वह दया के अधीन होकर अपने प्राण तक न्यौछावर कर देता है, उसी प्रकार ही बिजली की चमक के साथ सुशोभित घनघोर बादल तीव्र पवन की प्रेरणा के साथ सभी जीव-जंतुओं के कल्याण के लिए अपने जीवन स्वरूप जल को बरसाने लगे। ज्येष्ठ व आषाढ़ की उष्णता से धरती सूख जाती है। अब वर्षा के जल के साथ सींचे जाने पर फिर से हरी-भरी हो जाती है। सांय के समय घनघोर बादलों के कारण घना अंधेरा छा जाता है व इस प्रकार तारों व चंद्रमा इत्यादि का प्रकाश बिल्कुल भी दिखाई नहीं देता, परन्तु जुगनुओं की भरमार के कारण उनकी खूब चमक होती है। मेंढ़क पहले तो खूब शांत व मूक रहते हैं। अब वह बादलों की गरज सुनकर टर्टराने लग पड़ते हैं। छोटी नदियाँ-नाले जो ज्येष्ठ व आषाढ़ की उष्णता के कारण बिल्कुल सूख गये थे, वर्षा के कारण उन मे जल उमड़ आया है। उनका जल उनके किनारों से उछल-उछल कर बाहर निकलने के लिए उतावला होता है। धरती पर तपिश एवं जल की कमी के कारण सारी घास सूख गयी थी, अब लगातार वर्षा होने के कारण चारों ओर हरियाली दिखती है। कहीं-कहीं लाल रंग के मखमली कीड़े घूमते हुए धरती को लाल कर देते हैं उनको देखकर ऐसा प्रतीत होता है जैसे किसी राजा की रंग-बिरंगी सेना प थ्वी पर घूम-फिर रही हो। जिधर भी द ष्टि जाती है वर्षा ऋतु में जल की भरमार होने के कारण हर प्रकार की क षि लहरा जाती है। उसको देखकर किसानों की खुशी की सीमा नहीं रहती क्योंकि उनको फसल अधिक होने की आस बंध जाती है व अच्छा मुल्य मिलने की संभावना बढ़ जाती है सभी थलचर

प्राणियों को अत्याधिक मात्रा में जल पीने को मिल जाता है जिस कारण वह अधिक प्रसंन होते हैं।

समुद्र की लहरें उछल-उछल कर वैसे ही हिचकोले मारती है परन्तु वर्षा रानी की क पा के कारण नदियाँ नाले सब जल के साथ किनारों तक भर जाते हैं एवं वह उछलते-उछलते अपने प्रिय सागर में जाकर मिल जाते हैं। इसी कारण सागर में और अधिक लहरें उमड़ने लगती हैं। पर्वतों पर भी लगातार वर्षा होती रहती है। उस भीषण वर्षा की लगातार चोट पड़ने के कारण पर्वतों का कुछ भी नहीं बिगड़ता परन्तु एक बात अवश्य है कि वर्षा होने से पहाड़ों पर उगी हुई वनस्पति धुल कर स्वच्छ व उज्जवल बन जाती है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे प्रक ति ने उन्हें नया रूप प्रदान किया हो। जिन मार्गों को कभी साफ नहीं किया गया, वह घास के उगने के कारण पहचान में आने कठिन हो जाते हैं। वैसे बादल बहुत परोपकारी होते हैं फिर भी बिजली उनमें स्थिर रूप में नहीं रहती। आकाश बादलों की गर्जन से भर जाता है। जब ज़रा सी वर्षा बढ़ जाती है, आकाश में इंद्र धनुष बन जाता है जिसको देख कर सब प्रसन्न होते हैं। चंद्रमा की उज्जवल चांदनी के साथ बादलों का पता चलता है परन्तु वह बादल चंद्रमा को ढ़क कर शोभाहीन कर देते हैं। आकाश में मंडराते हुए बादलों को देखकर मयुर अति प्रसन्न होते हैं। उनका रोम रोम खिल जाता है एवं वह प्रसन्नचित होकर न त्य करते हुए आनंदित होते हैं। ठीक उसी प्रकार जैसे ग हस्थ के जंजाल में फंसे हुए लोग तीनों तापों के साथ जलते हैं एवं घबराए हुए प्रभु के भक्तों के आगमन की सूचना पाकर आनंद मग्न हो जाते हैं। जो व क्ष ज्येष्ठ व आषाढ़ की उष्णता के कारण सूख जाते हैं, कुम्हला जाते हैं, वह अब अपनी जड़ों के द्वारा जल पी कर, पत्ते, फूल व शाखाओं के द्वारा जल लेकर खूब सज-धज जाते हैं। कच्चे स्थानों पर वर्षा के कारण कीचड़ ही कीचड़ हो जाता है परन्तु सारस उन

तालाबों को एक क्षण के लिए भी नहीं छोड़ना चाहते। वर्षा ऋतु में मूसलाधार वर्षा होती है जिस कारण नदियों के बांध, खेतों की मेढ़ें टूट जाती हैं। वायु की प्रेरणा के कारण गहरे-घने बादल जीवों के लिए अम तमय जल की वर्षा करते हैं, जिस प्रकार ब्राह्मणों की प्रेरणा लेकर अधीर व धनी मनुष्य समय-समय पर दान देकर प्रजा की ईच्छाओं की पूर्ति करते हैं।

वर्षा ऋतु में व ंदावन अति शोभनीय हो रहा था, चारों ओर लंबी खजूरों के पेड़, जामुन के पेड़ फलों से भरपूर थे। ऐसे वनों में श्री कृष्ण जी व बलराम जी अपने बाल-ग्वालों व गायों के साथ विचर रहे थे। गायों के थन दूध से भरपूर थे, इस कारण वे वनों में ठुमक-ठुमक कर चलतीं। जब श्री कृष्ण जी उनका नाम ले लेकर पुकारते तब वह श्री कृष्ण जी के प्रेम वश होकर तीव्रता से दौड़ने लगती। भागते-भागते उनके थनों से दूध की धाराएँ प थ्वी पर गिरतीं। व क्षों की पत्तियों से टप-टप वर्षा की बूंदे धरती पर गिरती एवं पहाड़ों में से झर-झर करते झरने झर रहे थे।

झर-झर करती वर्षा की धारा की ध्वनि अत्याधिक सुरीली लगती थी। जब ज़ोर की वर्षा होती, उससे बचाव के लिए गुफाओं के भीतर प्रवेश किया जाता था। ज़ोर-ज़ोर की वर्षा के समय श्री कृष्ण जी कभी व क्षों के नीचे खड़े होते तो कभी अपने बाल-ग्वालों को लेकर गुफाओं में घुस जाते; कभी कंद मूल खाकर अपने साथियों के साथ खेल-क्रीड़ाएँ करते। श्री कृष्ण जी कभी जल के समीप किसी चट्टान पर जाकर बैठ जाते व घर से लाई हुई दही चावल, दाल, साग इत्यादि अपने साथियों में बांटकर खाते। वर्षा ऋतु में बैल, बछड़ें एवं गायें अपने पेट को घास ले भर लेते एवं फिर हरी-भरी घास पर बैठकर आँखें बंद कर जुगाली करते रहते। वर्षा ऋतु की सुंदरता अपार थी। सभी जीव-जंतु, प्राणी सुख अनुभव कर रहे थे। श्री कृष्ण जी बार-बार वर्षा ऋतु, बैल, बछड़ों गायों इत्यादि की अत्यंत प्रशंसा करते।

सुन्दर श्याम

२३

।।सवैया।। मास कुआर चढ़यो बलधार
पुकार रही न मिले सुखदाई।
सेत घटा अरु रात छटा सर
तुंग अटा सिमकै दरसाई।
नीर बिहीन फिरै नभि छीन
सु देख अधीन भयो हिय राई।
प्रेम छकी तिन सो बिथकयो
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६२०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७७

शब्दार्थ : कुआर—अश्विन का मास। छटा—बिजली। सर—सरोवर, ताल। तुंग—ऊँची अटालिकाएँ। सिमकै—(विद्युत) चमकती है। दरसाई—नजर आते हैं। नीर बिहीन—बिना पानी के बादल। छीन—पतले पतले। अधीन—सहम जाता है, दिल का घबराना। हिय राई—मन, हृदय। प्रेम—प्रीत के साथ सजी हुई अर्थात प्रेमकला। तिन—उस कृष्ण से (प्रेम करने वाली)। बिथकयो—यह दासी राधिका (विरह दुःख से पीड़ित)।

व्याख्या : श्री कृष्ण जी गोपियों को त्याग कर, ब ज को कुँज गलियों को छोड़कर, रोते बिलखते माता-पिता, ब ज के बाल गोपाल सब को त्याग कर अक्रूर जी के साथ मथुरापुरी में चले गए। अब वियोग में ब जवासियों के पास प्रतीक्षा, तड़प व मिलने की आशा ही रह गई थी। वह तो हर क्षण, हर पल, अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के दर्शनों के लिए विह्वल हो रहे थे। अब अश्विन

का मास प्रबलता के साथ आरम्भ हुआ है, जिसमें गोपियाँ अपने प्रिय को दिन-रात पुकारती हैं। अपने सुखों के भंडार प्रीतम को स्मरण करती है परन्तु सब निष्फल, उनकी सब पुकार व्यर्थ, उनकी कोई सुनवाई नहीं, उनके सुखदाता तड़पती हुई गोपियों को आकर, आज तक नहीं मिले। श्वेत-काले बादलों की घनघोर घटाएँ आसमान में छाई हुए हैं और रात दामिनी की चमक के समान है एवं ऊँची अटालिकाएँ चाँदी के समान दिखती हैं। जल विहीन बादलों को देखकर गोपियों का मन अधीर हो गया। बादलों में पानी की उपस्थिति उनकी यौवनावस्था को प्रकट करती थी। जिस प्रकार बादल जल विहीन होकर मानो अपना यौवन समाप्त कर चुके हैं, इसी प्रकार राधा को लगता है कि वह भी अपना यौवन बादलों के समान ही नष्ट न कर दे, यह विचार कर वह अशांत हो रही हैं कि अपने प्रिय इष्ट श्री कृष्ण जी के बिना उनकी यौवनावस्था समाप्त न हो जाए। जिसके प्रेम में वह रात-दिन मस्त रहती है, उसे उसका वियोग सता रहा है। वियोग के कारण उसका हृदय फटा जा रहा है परन्तु उसके प्रेमी पर उसका कोई असर नहीं हुआ।

भावार्थ : बादल जल विहीन हो गए हैं। उनकी यौवनावस्था पूर्ण हो गई। बादलों के समान गोपियों की जवानी भी कहीं श्री कृष्ण जी के वियोग में समाप्त न हो जाए।

पुकार रही न मिले सुखदाई

गोपियाँ अपने प्रिय इष्ट का नेत्रों से दर्शन कर निहाल होती थीं। उन पर बलिहार जातीं थीं। वह श्री कृष्ण जी से बिछुड़कर एक क्षण के लिए भी जीवित नहीं रह सकती थीं, उनसे प थक होने का तो उनके मन में कभी विचार ही नहीं आया। परन्तु कभी-कभी सोच के विपरीत भी कुछ हो जाता है; बेबसी हो जाती है; अपने वश में कुछ भी नहीं रह जाता; विधाता को कुछ ओर ही स्वीकार होता है। परिस्थितियों के समक्ष मनुष्य को

घुटने टेकने ही पड़ते हैं। हृदय के भीतर इच्छाओं, आहों व सिसकियों का सागर उमड़ रहा है। श्री कृष्ण जी गोपियों को विरह की जलती हुई भट्ठी में फेंक कर मथुरा चले गए थे। वह वियोग की अग्नि में झुलसती हैं, तड़पती हैं,''हाय ! श्री कृष्ण जी'' की रट लगाती हैं, परन्तु उनकी पुकार अपने प्रिय इष्ट तक नहीं पहुँचती। वह अपने प्रिय सुखदाता को स्मरण कर दुःखी होती हैं। उनके प्रिय श्री कृष्ण जी तो अथाह गुणों के भण्डार हैं, वह उनके गुणों को एक-एक करके स्मरण करके उनकी दूरी को समीपता समझकर अपना समय बिताने का प्रयत्न करती हैं। राधा अपनी अन्य सखियों के साथ श्री कृष्ण जी के गुणों का गायन करने लगी।

हे मेरी प्रिय सखी ! मुझे अपने प्रिय सुखदाई प्रीतम के गुण बहुत याद आते हैं।

- सबसे बड़ा गुण कि वह कभी भी झूठ नहीं बोलते, वह तो सदैव सत्य के धारणी हैं। वह स्वयं तो सत्य बोलते ही हैं, दूसरों को भी सदैव सत्य बोलने की प्रेरणा देते हैं, असत्य से उनको बहुत द्वेष हैं।
- उनका आचरण सर्वश्रेष्ठ हैं। वह स्वयं एक आदर्श हैं उनके सच्चे आदर्शों का अनुसरण करने के लिए सभी का मन करता था।
- उनके हृदय में दया व करूणा का सागर उमड़ता रहता हैं। वह प्रत्येक जीव-जंतु सब पर दया करते हैं।
- वह धैर्य की प्रतिमा हैं। वह प्रत्येक कार्य धैर्य के साथ करते हैं। वह कभी भी अपनी सीमा का उल्लंघन कर धैर्य को नहीं खोते हैं।
- यदि कोई अनुचित कार्य करता तो मेरे प्रिय सुखदाई सदैव उसको क्षमा करते क्योंकि क्षमा करना तो उनका स्वभाव हैं। वह उसके दोषों को कभी भी न चित पर लगाते व मुस्कुराते हुए क्षमा प्रदान करते।

- मेरे सुखदेव श्री कृष्ण जी सदैव संसारी माया से मुक्त रहते हैं। वह संसार में विचरते हुए सांसारिक माया से सदैव स्वयं को ऊँचा रखते हैं। उसमें कभी भी लिप्त नहीं होते हैं।
- वह संतोष की मूर्ति हैं, जो कुछ भी उस प्रभु का दिया हुआ है, वह उस से ही संतुष्ट हैं। असंतुष्टता तो उन से कोसों दूर हैं।
- मेरे सुखदाई प्रियतम हर किसी से म दुलता से बोलते हैं। उनके वचन मिठास से भरे होते हैं। वह मेरे मधुर वक्ता स्वामी अपने म दुल वचनों से सभी को मोहित कर लेते हैं। कटु वचन तो वह बोल ही नहीं सकते।
- मेरे सुखकंद प्रियतम ने पूर्ण रूप में अपनी सभी इंन्द्रियों को वश में किया हुआ है।
- मेरे उस रसिया प्रियतम की दिव्य द ष्टि में कोई बड़ा-छोटा नहीं है। सभी जीव उस प्रभु के बनाए हुए हैं, इसलिए सब एक जैसे हैं, कोई बड़ा कोई छोटा नहीं। किसी को बड़ा छोटा जानकर वह कभी भी किसी का निरादर नहीं करते।
- मेरे आनंदकंद ईष्ट के साथ यदि कोई कटु वचन बोल जाता तो वह चुप-चाप सहन कर जाते एवं उनको कभी भी क्रोध नहीं आता।
- वह कभी भी कोई कार्य शीघ्रता में नहीं करते। शीघ्रता तो कार्य को बिगाड़ देती है इसलिए वह अत्यंत सहज भाव से कार्य को निपटाते हैं।
- मेरे प्रिय जो बात एक बार सुन लेते वह उसको कभी भी नहीं भूलते। उसको वह सदैव स्मरण रखते।
- मेरे प्रियतम जो वचन अपने मुखारबिन्द से निकालते हैं उसको पूरा करने का प्रयत्न करते हैं। उन वचनों

की पूर्ति में वह ज़रा सी भी कसर नहीं छोड़ते हैं।

- वह अपने ज्ञान को सदैव स्थिर रखते हैं। उनका मन पूर्णतया वैराग्यमय है।
- उनकी यह शिक्षा है कि स्त्री व पुत्र से अधिक मोह नहीं करना चाहिए। वह उनको अन्य सांसारिक सम्बन्धों के समान ही समझते हैं।
- यदि किसी के पास धन अधिक है तो वह अधिक धनवान हो गया है। उसको अभिमानी नहीं होना चाहिए क्योंकि धन-दौलत तो अस्थिर है, वह तो एक आने-जाने वाली वस्तु है, इसलिए माया का घमण्ड करना व अहंकार करना व्यर्थ है।
- यदि किसी पुरूष के पास अत्याधिक बल है तो उसको उस पर अभिमान नहीं करना चाहिए। यह बल भी स्थिर नहीं रहता। जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, मनुष्य का बल भी क्षीण होता जाता है। इसलिए बलशाली होने का अभिमान करना व्यर्थ है।
- प्रत्येक को यह प्रयत्न करना चाहिए कि वह अच्छे कर्म कर सबसे श्रेष्ठ व उत्तम बने।
- विद्या अनेक प्रकार की है। प्रत्येक प्राणी का प्रयत्न यह होना चाहिए कि सब प्रकार की विद्याओं का ज्ञान प्राप्त करे।
- दूसरों का दुःख देखकर आँखें बंद नहीं कर लेनी चाहिए। यदि कोई भी दुःख या पीड़ा से ग्रस्त हो, मेरे प्रियतम उसके कष्ट निवारण का उपाय करते हैं, उसको सांत्वना प्रदान कर, दुःखों को दूर कर, खुशियाँ प्रदान करते हैं।
- मेरे आनंदकंद तो निर्भय है, वह न तो स्वयं डरते हैं और न ही किसी को भयभीत करते हैं।
- यदि कोई पुरूष किसी दुःख या पीड़ा का शिकार

होता है और वह आकर मेरे प्रिय श्री कृष्ण जी को अपनी दशा बताता है तो वह बहुत प्रेम से उसको सुनते हैं।

- मेरे परम परमेश्वर श्री कृष्ण जी तीनों कालों के ज्ञाता हैं। वह पूर्ण रूप में अंर्तयामी हैं एवं उनको भूत, भविष्य व वर्तमान सब का ज्ञान है।
- श्री कृष्ण जी सागर के समान गंभीर हैं, सजीव हैं, वह अपने मन की दशा कभी भी किसी से नहीं कहते, अपने मन में ही रखते हैं।
- वह पूर्ण रूप में धरमात्मा हैं, धर्म की मूर्ति हैं, धर्म की ओर से अपना मन कभी भी हीं मोड़ते। वह स्वयं तो धर्म के रास्ते पर चलते ही हैं अन्य लोगों को भी धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं।
- मेरे प्रियतम धर्म व वेदों के रक्षक हैं।
- वह कभी भी मंदकर्म नहीं करते, सदैव शुभ कर्मों के करता हैं। उनके शुभ कर्मों को देखकर संसारी जीव उनको महांपुरूष कहते हैं।
- उनका एक पवित्र उपदेश यह भी है कि सदैव आँखों में शर्म रखनी चाहिए।
- उनका यह जीवनोद्देश्य है कि कभी किसी जीव-जन्तु को कष्ट न पहुँचे।
- यदि कोई दीन अधीन होकर अपना मनोरथ बताए तो उसका मनोरथ अवश्य पूरा करना चाहिए।
- वह स्वयं तो प्रभु के चरणों में ध्यान धरकर जप तप करते हैं वरन् दूसरों को भी प्रभु की महिमा व गुणगान करने की शिक्षा देते हैं।
- वह सर्वश्रेष्ठ है एवं सबसे अधिक गुणवान हैं। इतने समर्थ होने के पश्चात् भी उनमें सदैव नम्रता रहती है।

– मेरे स्वामी अपने मन में किसी प्रकार का लोभ नहीं रखते।
– वह मेरे प्रिय साधु, ब्राह्मण व महात्माओं का आदर करते हैं एवं सदैव उनके परोपकार में लग जाते हैं।

असंख्य गुणों के अथाह भण्डार, सुखों के सार, जीव रक्षक, धैर्य, सत्य, दया, क्षमा, प्रेम की मूर्ति, वैरागी, त्यागी, भूत–भविष्य–वर्तमान के ज्ञाता, वीर, गंभीर, दीन-दयाल गोपियों के हृदय के सम्राट के लिए गोपियाँ उनके गुणों का गायन करके दर्शनों के लिए बार-बार विनती करती हैं, पुकारती हैं परन्तु उनकी पुकार पर कोई कार्यवाही नहीं होती।

गोपियों के प्रिय इष्ट ने उनकी पुकार को नहीं सुना एवं न ही आकर दर्शन प्रदान करके संतुष्ट किया।

आश्विन

२४

कातकि मै गनि दीप प्रकाशत
तैसे अकाश मै ऊजल ताई।
जूप जहां तह फैल रहयो
सिगरे नर नारन खेल मचाई।
चित्र भए घर आंञ्न देख
गचे तह के अरु चित्त भ्रमाई।
आयो नही मन भायो तही
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६२१।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७७

शब्दार्थ : गनि—बल वाली रस्सी। दीप—दिया। ऊजल ताई—सफेदी, प्रकाश। जूप—जूए का खेल। तह—जहाँ, हर स्थान पर। चित्र—चित्रित किए हुए फूल पौधे, मूर्तियां बनाकर सजाए हुए घर, मकान। आं ान—प्रांगन। तह के—उन मूर्तियों इत्यादि के साथ। भायो—वहाँ पर मन रम गया। टसकयो—धैर्य। कसकयो—खींच। कसाई—प्रीतम।

व्याख्या : कार्तिक मास में गोपियाँ अपने चारों ओर मौसम के सुहावने पन का द श्य देखती हैं। इस मास में, जिस प्रकार दीये में बाती के कारण प्रकाश होता है, उसी प्रकार ही आकाश भी बहुत निर्मल, उज्जवल, स्वच्छ दिखाई देता है। सभी ओर, प्रत्येक स्थान पर द्यूत क्रीड़ा का खेल अत्यंत प्रसिद्ध हो रहा है। सभी पुरूष-स्त्रियाँ द्यूत क्रीड़ा के खेल को खेलकर आनंदित हो रहे हैं। चूने के साथ जोड़े हुए घरों के ऊपर तरह-तरह के चित्र

बने हुए हैं एवं आंगनों में अत्यंत सुंदर सजावट दिखाई दे रही है। उनको अति उत्तम ढंग से सुसज्जित किया हुआ है, जिनको देखकर मन में भ्रम पैदा हो जाता है कि कहीं यह वन तो नहीं है। चित्र मुख से बोलते हैं कि वास्तव में वन में शेर विचर रहे हैं। इस सम्पूर्ण द श्य का प्रकाश, आकाश की उज्जवलता, घर आंगन का हार-श्रं गार उनके ऊपर बने हुए फूलों के पौधे गोपियों के मन में खुशी प्रदान नहीं करते। यह सम्पूर्ण द श्य देखकर वे उदासीन हो जाती है क्योंकि उनका प्रियतम, ब जनाथ, मथुरा में जा बैठा है एवं ब ज में लौटकर उनको दर्शन प्रदान नहीं कर रहा। इस कारण उनके ह्रदय में जरा सा भी धैर्य नहीं आता। उनके गहरे प्रेम ने श्री कृष्ण जी के ह्रदय में कोई खिंचाव उत्पन्न नहीं किया।

भावार्थ : वातावरण उज्जवल तथा स्वच्छ हो गया। आकाश भी एकदम निर्मल है। घर-आंगन की सजावट देखकर गोपियों के मन को श्री कृष्ण जी के बिना धैर्य नहीं आता।

आयो नहीं मन भायो तहीं

अक्रूर जी श्री कृष्ण जी को लेकर मथुरा चले जाते हैं। ब ज वासियों की तड़प उनके वियोग में स्थिर रहती है। वे अत्यंत बेबस हैं, उनके वश में कुछ भी नहीं। वह स्वयं भागकर अपने प्रिय के दर्शन नहीं कर सकते, वह अपनी इच्छानुसार मथुरा नहीं जा सकते क्योंकि उनके प्रियतम का आदेश नहीं है। इस कारण वह अधीर होकर अपने प्रियतम के पथे में नयन बिछाकर दिन रात बैठे रहते हैं। मथुरा जाते समय श्री कृष्ण जी अपने साथ बलराम जी, बाबा नंद व कुछ ग्वालों को लेकर जाते हैं। कंस के वध के पश्चात् श्री कृष्ण जी अपने माता-पिता के दर्शनों के लिए गए। माता-पिता अपने सुपुत्र के दर्शन कर त प्त हुए तथा उनके चरणो में नमस्कार की। माता-पिता ने उनको ब्रह्मा का रूप माना पर श्री कृष्ण जी ने उनके मन पर मोह-माया का

पर्दा डाल दिया तो फिर अपने माता-पिता को कारागार के बंधनों से मुक्त कर दिया।

वहाँ से चलकर फिर श्री कृष्ण जी ने जो ग्वाल-बाल साथ आए थे उन सभी को ब ज लौट जाने की आज्ञा प्रदान की। बाबा नंद गोप-ग्वालों के साथ मथुरा में श्री कृष्ण जी के चरणों पर नमस्कार कर ब ज लौट आए।

।।सवैया।। सीस झुकाइ गयो ब्रिज को
अति ही मन भीतर सोक भयो है।
जिउ कोऊ तात मरे पछुतात है
पयारे कोऊ मनो भ्रात छयो है।
पै जिम राज बडे रिप राज की
पैरन मै पति खोइ गयो है।
यों उपजी उपमा बसुदे ठग
सयाम मनो धन लूट लयो है।।८५८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६८

बाबा नंद ने सर झुकाकर आज्ञा का पालन किया। परन्तु उनका मन बहुत दुखी हो रहा था क्योंकि वह अपने प्रिय पुत्र से बिछुड़ रहे थे। उनके साथ गए बाल-गोपाल भी श्री कृष्ण जी के बिना दुःखी हो रहे थे। उनको ऐसा लग रहा था जैसे वह अपने सगे संबंधी से बिछुड़ रहे हों। बाबा नंद को ऐसा अनुभव हुआ कि श्री कृष्ण जी को उनसे छीन लिया हो। बाबा नंद ने ब ज में आकर श्री कृष्ण जी का मथुरा में ही रह जाने का समाचार सब को सुना दिया। श्री कृष्ण जी की माता यशोदा अपने पुत्र के बिना व्याकुल हो उठी। उसके हृदय का वात्सल्य रो पड़ा क्योंकि उसका प्रिय कन्हैया अपनी माता से दूर चला गया है एवं लौटकर नहीं आया।

।।सवैया।। बचयो जिन तात बडे अहि ते
जिन हू बक बीर बली हनि दईया।
जाहि मरयो अघ नाम महां रिपु

पै पिअरवा मुसलीधर भइया।
जो तपसया करि कै प्रभ ते
कबि सयाम कहै पर पाइन लइया।
सो पुर बासन छीन लयो
हम ते सुनिये सखी पूत कनह्ईया।।८६०।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३६८

माता यशोदा जी को वह दिन याद आ जाते हैं, जब श्री कृष्ण जी ने अपने पिता की सर्प से रक्षा की थी एवं बहुत बड़े शूरवीर बकासुर का विनाश किया था। अघासुर नाम के राक्षस का संहार किया था, बलराम जिनका बड़ा भाई है, उन श्री कृष्ण जी के दर्शनों के लिए अनेकों लोग तपस्या करते हैं परन्तु फिर भी उनका अंत जानने में असमर्थ रहते हैं, ऐसे गुणों के धारणी श्री कृष्ण जी को जो माता यशोदा के पुत्र हैं, मथुरा वासियों ने छीन लिया है।

माता यशोदा तो विलाप करती ही थी पर सभी गोपियाँ एकत्रित होकर यशोदा के साथ मिलकर गहरा रोष मना रहीं हैं। उनके मन का सम्पूर्ण उल्लास समाप्त हो गया है, एवं उन्होंने अपने मन को श्री कृष्ण जी के चरणों के साथ अनुरक्त कर लिया है। ध्यान में लीन होकर उनका स्मरण व तड़प और बढ़ गई है, कई बार वह बेसुध होकर धरती पर गिर पड़ीं। वे आहें, सिसकियाँ ले-लेकर तड़प रही हैं। उनके मनों का सुख-चैन शांति सब कुछ वियोग के कारण समाप्त हो गया। श्री कृष्ण जी तो मथुरा में बहुत सुख के साथ अपना समय व्यतीत कर रहे हैं व इधर गोपियाँ उनके बिना अति व्याकुल हैं। उनकी श्री कृष्ण जी के साथ अत्यंत प्रीति हैं। प्रीत-वियोग के कारण वह अत्यंत दुःखी हो रही हैं, अपने हृदय की भावनाओं को प्रकट करने के लिए कई प्रकार के राग गाती हैं व भिन्न-भिन्न प्रकार की तानें अलाप रही हैं। आलाप करके वह अपना ध्यान श्री कृष्ण जी के चरणों में लगाना चाहती हैं परन्तु इस प्रकार करने

से उनको कोई सुख प्राप्त नहीं होता बल्कि ध्यानमग्न होकर वह अधिक दुःखी हो उठती हैं। ध्यान में श्री कृष्ण जी की मूर्ति को बसा कर कुम्हला जाती हैं, जिस प्रकार चन्द्रमा का मुख देखकर कमलपुष्प मुरझा जाता है।

श्री कृष्ण जी मथुरा निवासियों के साथ जाकर घुल-मिल गए हैं एवं उन्होंने ब जवासियों को अपने मन से भुला दिया है। श्री कृष्ण जी गोपियों को साथ लेकर मथुरा नहीं गए। गोपियों को ऐसा प्रतीत होता है जैसे श्री कृष्ण जी ने उन के प्रति प्रेम समाप्त कर दिया है। वह गिरधर जिन्होंने गोवर्धन पर्वत उठा लिया था, उन्होंने न तो कोई संदेश भेजा है और न स्वयं ही आए हैं क्योंकि वह मथुरावासियों के वश में हो गए हैं। गोपियाँ श्री कृष्ण जी के बिना अति उदास व गंभीर हैं उनके मन में शोक व्याप्त है क्योंकि श्री कृष्ण जी के प्रेम का फन्दा उनके गले में पडा हुआ है। कभी तो वह रोती-बिलखती है और कभी अत्यंत क्रोधित होकर अपने मुख से कहती हैं कि श्री कृष्ण जी को तो लोगों के हास-परिहास की तनिक भी चिन्ता नहीं है, इसलिए वह उनको ब ज में छोड़कर मथुरा शहर की वासना में फंस गये हैं। उनको तो ब ज याद ही नहीं आता और न ही वह मथुरा छोड़कर ब ज लौट आने की कोई योजना बना रहे हैं।

।।सवैया।। इह भांत सो गव्ारनि बोलत है
अपने जिय मै अति मान उदासी।
सोक बढ़यो तिनके जीय मै
हरि डार गए हित की तिन फासी।
अउ रिस मान कहै मुख ते
जदुराइ न मानत लोगन हासी।
तयाग हमै सु गए ब्रिज मै
पुर बासन संग फसे ब्रिज बासी।।८६४।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७६

गोपियों के मन को बिलकुल चैन नहीं, सांत्वना नहीं, इस कारण वह श्री कृष्ण जी को र्निमोही कहकर याद करती है कि वह र्निमोही मथुरा जाकर, शहर की नारियों में समा गया है, उसने ब ज की गोपियों के मोह को पूर्ण रूप से त्याग दिया है। वह ठण्डी-ठण्डी आहें भर कर कहती हैं कि उन्होंने हम सब को क्यों भुला दिया है। कुछ को ऐसा आभास होता है कि श्री कृष्ण जी उनकी आँखों के समक्ष खड़ें हैं परन्तु वह सोचती हैं कि उनको वह दिखाई क्यों नहीं देते। गोपियाँ तो श्री कृष्ण जी के साथ रासलीला रचाती थीं, वन में क्रीड़ाएं करती थीं, आँख मिचोली खेलती थी, उनको यह समझ नहीं आ रहा कि गिरधर गोपाल ने उनको क्यों विस्म त कर दिया है। यहाँ तक कि कोई संदेश भी नहीं भेजा। श्री कृष्ण जी कितने निष्ठुर बन गए हैं।

श्याम सुंदर न तो लौट कर ही आए हैं, न ही गोपियों को वहाँ मथुरा में बुलाया है और न ही किसी दूत के हाथ संदेश-पत्र भेजा है। यह अति कष्टदायक व चिंताजनक बात है।

२५

।।सवैया।। बारज फूल रहे सर पुंज
सुगंध सने सरि तान घटाई।
कुंजत कंत बिना कुल हंस
कलेस बढे सुनि कै तिह माई।
बासुर रैन न चैन कहूं छिन
मंघर मास अयो न कनह्ाई।
जात नही तिन सौ मसकयो
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६२२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७७

शब्दार्थ : बारज—कमल पुष्प। सर—सरोवरों, तालों में। पुंज—बहुत से। सने—सुगंधी युक्त। सरि तान—नदियाँ कम हो गई है, जल का स्तर कम हो गया। कुंजत—कुरलाती हैं। कुल हंस—राज हंसनियाँ। कलेस—दुःख, कल्पना। बासुर—दिन। अयो—आया नहीं कन्हैया। इन—कान के साथ। मसकयो—पाया, प्रीत टूटती नहीं। टसकयो—खींच। कसाई—प्रीतम।

व्याख्या : हर महीने गोपियों को श्री कृष्ण जी का वियोग तड़पाता है, सताता है। मार्गशीर्ष का मास आ पहुँचा है तथा इस मास में सभी तालाबों में कमल पुष्प खिले हुए हैं। उनकी अत्यंत महक व सुगंध चारों ओर बिखर रही हैं। वह सुगंधी से भरपूर है। दूसरी ओर नदियों-नालों में जल स्तर कम हो गया है। हंसों की कूअ-कूअ सम्पूर्ण वातावरण में गुंजन पैदा करती है। जैसे दुःख के समय अकसर सभी के मुख से—हाए माँ ही

निकलता है, इस प्रकार हंसों की कूअ-कूअ की आवाज सुन कर हंसनियाँ, जिनके हंस पास नहीं थे जो वियोग की पीड़ा में जल रही थी। उनके हृदय का दुःख और भी बढ़ जाता है। ब ज की गोपियों की दशा भी इन हंसनियों के जैसी हो गई है। दिन-रात उनको किसी भी पल आराम नहीं प्राप्त होता, सुख की प्राप्ति नहीं होती क्योंकि मार्गशीर्ष का मास आ गया है परन्तु गोपियों को श्री कृष्ण जी के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। मार्गशीर्ष की ठंड सहन नहीं होती परन्तु उस ठंड के होते हुए भी गोपियों का हृदय शीतल नहीं हुआ और उनके प्रिय श्री कृष्ण जी के हृदय में कोई खिंचाव पैदा नहीं हुआ।

भावार्थ : कमल पुष्प खिले हुए देखकर हंसों की कुअ-कुअ सुनकर पति से विहीन नारियों का कलेश बहुत बढ़ जाता है। बाहर वातावरण में यद्यपि ठंडक है परन्तु गोपियों के हृदय में वियोग की अग्नि की लपटें उठ रही हैं।

बासुर रैन न चैन कहुं छिन

जब प्रेमिका का प्रियतम उससे बिछुड़कर उसकी द ष्टि से दूर हो जाए, फिर भला उस प्रेमिका के मन को चैन किस प्रकार आ सकता है। वह तो दिन-रात अपने प्रिय का स्मरण करते-करते विह्वल हो जाती है। उसकी आँखों की नींद उड़ जाती है। वह सदैव टकटकी लगाकर अपने प्रियतम के मार्ग को देखती रहती है। शायद उसका प्रियतम कहीं दिखाई दे जाए। यह बात एक प्रेमिका की नहीं बल्कि अनगिनत प्रेमिकाएँ अपने आराध्य इष्ट देव के वियोग में आहें लेकर तड़प रही हैं क्योंकि उन गोपियों के प्रिय श्री कृष्ण जी उनको रोते-बिलखते को याग कर मथुरापुरी चले गए हैं। वे वहाँ दुष्ट कंस का संहार करने गए हैं। कुबजा को दर्शन देकर निहाल किया। वहाँ के नर-नारियों को दर्शन दे क तार्थ करते। गोपियों का असीम प्रेम जब बहुत बढ़ गया तो श्री कृष्ण जी के हृदय में गोपियों के प्रेम का आकर्षण हुआ। इसलिए उन्होंने

उद्धव जो कि ज्ञान की मूर्ति थे, को ब ज में यदुपति सेवी गोपियों को सांत्वना देने के लिए भेजा।

उन्होंने पहले यशोदा माता को श्री कृष्ण जी का संदेश सुनाकर त प्त किया फिर गोपियाँ, जो कि श्री कृष्ण जी के स्मरण में दिन-रात व्याकुल व वैराग्यमय हो रही थीं, उनको मिलकर ज्ञान प्रदान करने का प्रयत्न किया। यद्यपि वह निष्काम थे, तब भी उनका ज्ञान गोपियों के प्रेम के समक्ष हार गया। उद्धव को देखते ही गोपियों के प्रेम रूपी समुद्र में बाढ़ आ गई तथा उस बाढ़ में उद्धव का ज्ञान बह गया।

गोपियाँ उद्धव की ओर ध्यान न देकर आपस में श्री कृष्ण जी के साथ व्यतीत हुए क्षण स्मरण करने लग गईं। गोपियों ने परस्पर कहा,''हे सखी ! सुन, हम सभी श्री कृष्ण जी के साथ मिलकर कुंज गलियों में खेलती थीं। वह हमारे साथ मिल-जुलकर गाते थे एवं हम सभी एकत्रित होकर मंगलमय गीत गातीं थीं व अब वही श्री कृष्ण जी, हमारे प्रिय, हम सब को त्याग कर मथुरा चले गए हैं। हम सभी की ओर से उन्होंने अपना सुंदर मुख मोड़ लिया है। ऐसा मुख मोड़ा है कि अब वहाँ से लौटने का नाम ही नहीं लेते।'' आपस में श्री कृष्ण जी के संग व्यतीत हुए प्रेम से परिपूर्ण दिनों का स्मरण करती हैं व फिर अपने हावों-भावों का वर्णन उद्धव से करती हैं। गोपियाँ उद्धव से कहती हैं,''हे उद्धव ! सुन, एक वह सुहावना समय था जब श्री कृष्ण जी हमें साथ लेकर कुंज गलियों में घूमते थे। उनके साथ मोह अत्याधिक बढ़ गया था। श्री कृष्ण जी हमारे साथ प्रेम भरी बातें करते थे। उनकी प्रेम भरी बातों के साथ हमारा मन उनके वश में हो गया एवं मन में अत्यंत सुख का अनुभव किया। वह अब हमें छोड़कर मथुरा चले गए हैं। इसलिए अब हमारे जीवित रहने का कोई मंतव नहीं। हम तो केवल श्वास ही ले रही हैं, जीवित नहीं हैं।''

।।सवैया।। एक समै हमको सुनि ऊधव
कुंजन मै फिरै संग लीये।

हरि जू अति ही तिह साथ घने
हम पै अति ही कहयो प्रेम किये।
तिन के बसि गयो हमरो मन ह्वै
अति ही सुखु भयो ब्रिज नार हीये।
अब सो तजि कै मथुरा को गयो
हित के बिछुरे फल कउन जीये।।६२७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७८

उद्धव ने उन गोपियों को कई प्रकार से श्री कृष्ण जी के संदर्भ में बातें कहीं परन्तु उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उद्धव को कही हुई बातों को गोपियों ने तनिक भी नहीं माना, वह तो श्री कृष्ण जी के साथ अथाह प्रेम करतीं थीं। इस कारण श्री कृष्ण जी के पहले दर्शन करती फिर भोजन करतीं थीं। श्री कृष्ण जी के बिना तो वह जल का एक घूंट भी नहीं पीती थीं। सभी गोपियों ने एकत्रित होकर उद्धव को घेर लिया और कहा, ''हे उद्धव ! सुन, हमारे प्रिय भगवान से जाकर कहना कि जो ज्ञान आपने भेजा है वह सम्पूर्ण हमने ग्रहण कर लिया है। आप सभी गोपियों का हित श्याम जी के पास जाकर कह देना। आप हम सब को छोड़कर मथुरा चले गए हो परन्तु हम सब की सुध सदैव ही लेते रहना।''

उद्धव गोपियों के अथाह प्रेम के सामने चुप हो गया। उसका तन-मन भी गहरे प्रेम के रंग में रंग गया। मन से अन्य सुध-बुध खो गई व सारा ज्ञान का अभिमान दूर हो गया। गोपियों के साथ श्री कृष्ण जी के प्रेम की बातें करके उसका मन भी उसी प्रेम के रंग में रंग गया। उद्धव अपने ज्ञान के वस्त्र उतारकर प्रेम की गहरी नदी में कूद पड़े। उद्धव ने गोपियों के प्रेम को जान लिया। उनको गोपियों के साथ मोह सा हो गया। उन्होंने गोपियों के सच्चे प्रेम के समक्ष नतमस्तक हो कर कहा कि श्री कृष्ण जी ने ब ज को सूना कर दिया है। श्री कृष्ण जी ब ज को त्याग कर मथुरा चले गए हैं, उन्होंने यह अच्छा नही किया।

उन्होंने अपनी सुध-बुध खो दी, गोपियों को सांत्वना व धैर्य देकर कहा,''हे सखी ! मैं मथुरा जाकर श्री कृष्ण जी के चरण-कमलों में विनती करूंगा कि आप सभी को ब ज से मथुरा ले जाने के लिए दूत को भेजें। आप पर जो कष्ट भरी अवस्था व्यतीत हो रही है, वह सम्पूर्ण मैं श्री कृष्ण जी को जाकर सुनाऊंगा। आपकी विनतियाँ-संदेश मैं उनको सुना-सुना कर प्रसन्न करूंगा। मैं उनको फिर ब ज में ले आऊंगा।'' जब उद्धव ने गोपियों को श्री कृष्ण जी को वापिस लाने के संदर्भ में विश्वास दिलाया तो वह सभी उठकर उद्धव के चरणों में गिर पड़ीं। उन सभी ने उद्धव से कहा कि वह श्री कृष्ण जी से निवेदन करें कि प्रीत डालकर छोड़ना कोई अच्छी बात नहीं है। श्री कृष्ण जी के प्रेम के कारण हमने लोगों के हास-परिहास को सहारा। हमारी ओर से दोनों हाथ जोड़कर विनती करना,''आप हमें ब ज मे छोड़कर स्वयं मथुरा चले गए तथा शहर में रहने वालों के प्रेम रस में भीग गए हो। हे हरि जी ! आपने हमारे प्रेम को क्यों त्याग दिया है ? हे उद्धव जी ! जब आप ब ज भूमि को छोड़कर मथुरा पुरी जाओ, अपने मन में प्रेम के कारण हम सभी को ओर से श्री कृष्ण जी के चरणों में दण्ड़वत् प्रणाम करना एवं हमारी ओर से विनती करनी कि प्रीत डाल कर यदि निभाने का साहस न हो तो किसी से कभी भी प्रीत नहीं डालनी चाहिए।''

।।सवैया।। ऊधव मो सुन लै बतिया
जदुबीर को धयान जबै करि हों।
बिरहा तब आइ कै मोहि ग्रसै
तिह के ग्रसए न जियो मरि हों।
न कछू सुधि मो तन मै रहि है
धरनी पर ह्वै बिसुधी झरि हों।
तिह ते हम को बिरथा कहियै
किह भांत सो धीरज हउ धरिहों।।६३७।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७६

एक गोपी ने कहा,''हे उद्धव ! मेरी बात सुनो, जिस समय मैं श्री कृष्ण जी का ध्यान करती हूँ, उस समय ही मुझे वियोग आकर घेर लेता है, उस वियोग के कारण न तो मैं जी सकती हूँ, न ही मर सकती हूँ। मेरे तन को सुध नहीं रहती, एवं मैं बेसुध हो धरती पर गिर पड़ती हूँ। इस प्रकार की मेरी दशा उनको बता देना इस स्थिति में मैं कैसे धैर्य रख सकती हूँ ?'' ग्वालिनें जिनको कभी अपने प्रेम का मान व अभिमान था अब विनम्र होकर बोल रही थीं। उन गोपियों की देह सोने जैसी व मुख कमल जैसे थे एवं रूप में वह रती के समान थीं। इस प्रकार बातें करते-करते अति व्याकुल हो जाती हैं। उनका विरह विलाप देखकर उद्धव को यह भरोसा हो गया कि सभी ग्वालिनें मछलियाँ हैं तथा श्री कृष्ण जी का नाम जल है, जिसको ग्रहण कर वह जीवित रहती हैं।

।।सवैया।। दीन ह्वै गव्ारनि सोऊ कहै
कबि सयाम जु थी अति ही अभिमानी।
कंचन से तन कंज मुखी जोऊ
रूप बिखै रति की फुन सानी।
यों कहै बयाकुल ह्वै बतिया
कबि ने तिह की उपमा पहिचानी।
ऊधव गव्ारनीया सफरी सभ
नाम लै सयाम को जीवत पानी।।६३८।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७६

ऐसे अनंत गुणों के स्वामी, सरब प्रतिपालक, दुष्ट संहारक, गाय जैसे दीन पशु के रक्षक, गोपियों के ह्रदय सम्राट, उच्च अध्यात्मिक शिखरों के प्राप्त कर्ता, श्री कृष्ण जी के कारनामे स्मरण कर गोपियाँ अपने सुंदर नेत्रों के द्वारा श्रावन मास जैसी झड़ी लगाकर अपने ह्रदय की कसक, पीड़ा का वर्णन कर के सांत्वना ग्रहण करती हैं।

२६

।।सवैया।। भूम अकास अवास सु बासु
उदास बढी अति सीतलताई।।
कूल दुकूल ते सूल उठै सभ
तेल तमोल लगै दुखदाई।।
पोख संतोख न होत कछु
तन सोखत जिउ कुमदी मुरझाई।।
लोभ रहयो उन प्रेम गहयो
टसक्यो न हीयो कसकयो न कसाई।।६२३।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७७

शब्दार्थ : अवास—महल, घर, मकान। सु बासु—उत्तम, रहने के सुंदर निवास। कूल—कोमल (वस्त्र)। दुकूल—धारण किए हुए वस्त्र। सूल—पीड़ा उठती है अर्थात् कोमल वस्त्र भी चुभते हैं। तमोल—पान के पत्ते व बीड़े। पोख—पौष मास में। कुमदी—भंबूल, जो रात्रि में खिलते हैं व दिन में कुमलहा जाते हैं। लोभ—लोभायमान, मोहित होकर।

व्याख्या : पौष मास का आगमन हुआ। पौष अपनी शीत के कारण अति प्रसिद्ध है। पौष के मास में चारों ओर सर्दी तथा बर्फीली हवाओं का ज़ोर होता है। धरती पर निवास करने वाले मनुष्य अपने ग्रह व पक्षी अपनी नीड़ से बाहर नहीं निकल पाते। सभी के मन उदास रहते हैं क्योंकि इस मास में भीषण ठंड पड़ती है। नदी का जल बहुत शीतल हो जाता है। शीतल जल का स्पर्श करने से हवा भी अधिक ठंडी हो जाती है। नदी के किनारों पर व अन्य स्थानों पर शूलों के समान दुःख देने वाली

पीड़ा उठती है। इसके साथ ही तेल, तंबोल इत्यादि भी बहुत दुःखदायी लगते हैं। पौष के मास में मन को जरा भी धैर्य नहीं होता। जिस प्रकार पौष की ठंड में कुमदी के पुष्प मुरझा जाते हैं उसी प्रकार श्री कृष्ण जी के वियोग में तड़प-तड़प कर गोपियों के शरीर मुरझा गए हैं, वह सूखकर तिनके के समान हो गई हैं। इन कष्टों का कारण यह है कि गोपियों के हृदय में श्री कृष्ण जी के साथ गहरा लगाव हो गया है, प्रेम बढ़ गया है। उसने उनको जकड़ लिया है परन्तु उस क्रूर का हृदय गोपियों के लिए जरा भी विचलित नहीं हुआ। एक तो पौष के मास में अत्याधिक सर्दी, दूसरा सभी को सर्दी के कारण घरों के भीतर ही उदासीन होकर रहना पड़ता है, तीसरा गोपियों के प्रियतम उनसे दूर मथुरा चले गए हैं एवं उनकी कोई सुधि इत्यादि नहीं ली। यद्यपि गोपियों के हृदय मे प्रेम का सागर उमड़ता रहता है। यह सब कुछ होने पर भी श्री कृष्ण जी के हृदय में गोपियों के प्रति खींचाव उतपन्न नहीं होता, यह उनका दुर्भाग्य है।

भावार्थ : अत्याधिक सर्दी होने के कारण सभी फूल-पत्तियाँ इत्यादि मुरझा जाते हैं। हार-श्रंगार इत्यादि सब कष्टदायक बन जाता हैं, अपने प्रिय ईष्ट के बिना गोपियों के तन-मन सूखकर मुरझा गए हैं। वह शक्तिविहीन हो गई हैं।

तन सोखत जिउ कुमदी मुरझाई

श्री कृष्ण जी मथुरा जाकर अपने कार्यों में व्यस्त हो गये, कुछ समय के लिए गोपियों के प्रति उनका प्रेम अदश्य हो गया, परन्तु बज में गोपियों की तड़प दिन प्रतिदिन बढ़ती गई। वह अति व्याकुल हो गईं। उनका सुख-चैन समाप्त हो गया, वह हर समय चिंतातुर रहती, इस कारण उनका तन-मन दोनों पीड़ित हो गए। उनके तन कुमदी के समान मुरझा गए, बहार, खिलाव समाप्त हो गयी। उदासी व उष्णता के कारण गोपियों का तन क्षीण हो गया। श्री कृष्ण जी ने एक दिन उनकी दशा जानने हेतु एवं सांत्वना देने

के लिए उद्धव को भेजा कि वह ब ज में जाकर गोपियों को ज्ञान देकर शांत कर आएँ परन्तु उनका ज्ञान गोपियों के अथाह प्रेम के समक्ष झुक गया। वे उनका संदेश लेकर मथुरा पुरी लौट गए एवं गोपियों की सारी व्यथा श्री कृष्ण जी को जाकर सुनाई। सबसे पहले उद्धव ने श्री कृष्ण जी तथा बलराम के चरणों में गिरकर विनती की,"हे मेरे प्रिय स्वामी ! जिस प्रकार आपने मुझे कहकर भेजा था मैंने उसी प्रकार ही किया है। बाबा नंद व गोपियों के साथ ज्ञान की चर्चा कर वापिस लौट आया हूँ। मेरे मन का दुःख रूपी अंधेरा आपके सूर्य जैसे मुखड़े को देखकर दूर हो गया है।" यह कह कर उद्धव ने फिर एक-एक कर सभी संदेश देने प्रारंभ कर दिए। उद्धव ने कहा,"सभी गोपियाँ आपके चरणों में विनती करती हैं, शहर निवासियों को छोड़कर हे हमारे प्रियतम जी ! हम ब ज निवासियों को आकर दर्शन देने की क पा करें। उदासीन तथा वात्सल्य प्रेम से पीड़ित यशोदा ने कहा है कि उनका प्रिय सुपुत्र शीघ्र ही ब ज में आकर अपनी माता को मिलकर शांति प्रदान करे। उसके जलते हृदय को शांत करें। पुनः उसी प्रकार ही माखन व दही खाए, पता नहीं श्री कृष्ण जी अपनी माता के प्रेम को क्यों भूल गए हैं। वह शीघ्र ही मथुरा को छोड़कर ब ज वापिस आ जाएँ।"

।।सवैया।। मात करी बिनती तुम पै
कबि सयाम कहै जोऊ है ब्रिज रानी।
ता ही को प्रेम घनो तुम सों
हम आपने जी महि प्रीति पछानी।
ता ते कहिओ तजि कै मथुरा
ब्रिज आवहु या बिधि बात बखानी।
इयाने हुते तब मानत थे
अब सयाने भए तब एक न मानी।।६६१।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८३

ब ज की रानी, मुरझाई हुई माता यशादा ने श्री कृष्ण जी को उद्धव के द्वारा संदेश भेजा कि उनका प्रेम श्री कृष्ण जी से अधि

ाक है। उन्होंने विनती की है कि मथुरा को छोड़कर ब ज में अपनी माता के पास पहुँच जाएँ। जब आप छोटे बालक थे उस समय माता यशोदा जी की सारी बातें मानते थे परन्तु अब आप बड़े हो गए है इसलिए उनकी एक बात भी नहीं मानते।

उद्धव गोपियों का संदेश देते हैं कि वह उस समय को अवश्य स्मरण करें जब वह उनसे रूठ जाती थीं तथा उनको मनाने के लिए श्री कृष्ण जी उनके पाँव पड़ते थे। वह अब एक क्षण भी मथुरा न ठहरें, शीघ्र ही ब ज में पहुँचकर तड़पती-प्यासी गोपियों को दर्शन देकर त प्त करें। गोपियों ने उद्धव को समझाया कि वह श्री कृष्ण जी के चरण पकड़ कर विनती करें। ब ज में वापिस आने पर श्री कृष्ण जी की तनिक भी हानि नहीं है। यद्यपि गोपियाँ उनके सुंदर मुखड़े को देखकर प्रसन्न होंगी। श्री कृष्ण जी की प्रतीक्षा में, उनका मार्ग देख-देखकर गोपियों की दोनों आँखों की पुतलियाँ पूर्ण रूप से थक गई हैं। उद्धव श्री कृष्ण जी की सबसे प्रिय प्रेमिका का संदेश देते हैं,''हे हरि जी, आप मथुरा को त्यागकर ब ज की गलियों में आकर ब जवासियों का भाग्य जगाओ।'' जिस प्रकार आप हमारे साथ कुंज गलियों में तरह-तरह के खेल खेलते थे, उस प्रकार ही पुनः पधारकर खेलों का सिलसिला प्रारंभ करो। आपके बिना चित्त किसी कार्य में नहीं लगता। आपका सुंदर मुख चंद्रमा के समान है, सभी गोपियाँ चकोर हैं, उनके चांद जैसे मुखड़े के दर्शन करके ही वह त प्त हो जाती हैं।

मुरझाई हुई राधा का संदेश श्री कृष्ण जी को देने के पश्चात् अब उद्धव ने शेष तड़पती-मुरझाई हुई गोपियों के संदेश क्रमशः सुनाए। उद्धव श्री कृष्ण जी को चंद्रभगा का संदेश देते हुए कहते हैं,''हे मेरे प्रिय हरि जी ! अपने सुंदर मुखड़े के दर्शन हमको शीघ्र दो। आपके बिना मैं दुःखी हूँ, एवं बलभद्र भाई भी मुझे बहुत याद आते हैं। मेरे मन की पुकार को सुन लो, मैं अपने दोनों हाथ जोड़कर आपके चरणों में विनती करती हूँ कि

आप एक क्षण भी विलम्ब किए बिना मुझे दर्शन दें। हे ब ज नाथ ! हे गोपाल ! गोपियाँ चकोरियाँ हैं एवं अपने चाँद जैसे मुखड़े को दिखाकर सुख एवं सांत्वना दें। हे ब जनाथ ! हे यादवपति ! हे यशोदा के ज्येष्ठ पुत्र ! हे गायों के रखवाले ! हमारी विनती स्वीकार करो। हे काली नाग को नथने वाले, हे दैत्यों का वध करने वाले, हे गोकुल के स्वामी, यहाँ आने से आपकी कोई हानि नहीं होने लगी। हे कंस का नाश करने वाले, अपना चाँद सा मुख दिखा कर चकोरी रूपी गोपियों को दर्शन देने की कृपा कीजिये।'' उदासीन चंद्रभगा एक के पश्चात् एक संदेश श्री कृष्ण जी को उद्धव के द्वारा भेजती है।

।।सवैया।। हे नंद नंद कहयो सुख कंद
मुकंद सुनो बतीया गिरधारी।
गोकल नाथ कहो बक के रिप
रूप दिखावहु मोहि मुरारी।
स्त्री ब्रिजनाथ सुनो जसुधा सुत भी
बिन तवै् ब्रिजनार बचारी।
जानत है हरि जू अपने मन ते
सभ ही इह त्रीय बिसारी।।६७३।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८४

चंद्रभगा ने अपने प्रिय प्रियतम ईष्ट को संदेश भेजा,''हे नंद पुत्र ! हे सुख नंद ! हे मुक्ति के दाता ! हे बकासुर रिपु ! मैं आपके श्री चरणों में विनती करती हूँ कि मुझे मुर दैत्य का संहार करने वाला रूप दिखाओ। हे श्री कृष्ण जी ! हे ब ज के स्वामी ! हे यशोधा पुत्र ! मेरी विनती सुनो, आप के बिना ब ज की स्त्रियाँ दया व करूणा की पात्र हो गई हैं। हे कंस का वध करने वाले, हे करतार रूप, हे बकासुर का मुख चीरने वाले, मैं आपके श्री चरणों में विनती करती हूँ आप प्रवानित करें। हे ब जनाथ ! इन गोपियों के सम्पूर्ण दुःखों को दूर करके, तुरंत ही आकर, अपना मोहिनी रूप दिखा दो। आप के सुंदर मुख को

देखे बिना मन को कुछ भी अच्छा नहीं लगता। इस कारण, हे मेरे प्यारे हरि जी, मथुरा को छोड़कर आप शीघ्र ब ज में आकर दर्शन दें एवं हम सभी के कष्टों को दूर करने की क पा करें।''

श्री कृष्ण जी की अन्य प्रिय उदासीन गोपियों बिजछटा एवं मैनप्रभा ने भी उद्धव के द्वारा अपने–अपने संदेश भेजे। उन्होंने कहा,''हे हमारे प्रियतम ! हमारे साथ इतनी प्रीत लगाकर, छोड़कर जाने का क्या कारण है ? हे श्री कृष्ण जी, आप शीघ्र आओ, तनिक भी देरी न करो एवं फिर पहले जैसा खेल हमारे साथ खेलो। राधा आपसे रूठ गई थी उनको मनाने के लिए जिस प्रकार आपने हमें भेजा था, फिर वैसा ही करो। हे हमारे प्रियतम ! तेरी स्म ति में हम जोगिनों वाले वस्त्र डाल लेंगी या विष खाकर अपने शरीर को त्याग देंगी। हे हरि जू ! आप पर राधा पुनः अभिमान करेगी। इस कारण आप ब ज में लौटकर अपने दर्शनों का सौभाग्य प्रदान करें। एक क पा और करें कि हमें बुलाने के लिए कोई दूत ही भेज दें, यदि कोई दूत नहीं भेज सकते तो आप स्वयं ही यहाँ चले आइये।''

उद्धव ने श्री कृष्ण जी के चरणों में गोपियों की ओर से विनती की,''हे मेरे प्रिय स्वामी ! गोपियों को धैर्य प्रदान करने की क पा करें। उनको सांत्वना प्रदान करें।'' उद्धव ने श्री कृष्ण जी के चरणों में विनती की,

तेरो ही धयान धरै हरि जू
अरु तेरो ही लै कर नामु पुकारै।
मात पिता की न लाज करै
हरि साइत सयाम ही सयाम चितारै।
नाम अधार ते जीवत है
बिन नाम कहयो छिन मै कस टारै।
या बिधि देख सदा उनकी
अति बीच बढ़यो जीय सोक हमारै।।६७६।।

–दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८५

उद्धव ने श्री कृष्ण जी को बताया कि सभी गोपियाँ हर समय श्री कृष्ण जी का ध्यान करती हैं, उनका नाम ले लेकर पुकारती

हैं। उनको अपने माता-पिता की तनिक भी चिन्ता नहीं, लाज नहीं एवं हर क्षण, हर पल उनके होठों पर श्री कृष्ण जी का नाम है। वह श्री कृष्ण जी के नाम का आधार लेकर ही जीवित हैं। यदि वह एक क्षण भी उनका नाम नहीं लेती तो वह अत्यंत दुःखी हो जाती हैं। उद्धव से गोपियों की ऐसी दशा नहीं देखी जाती। उनकी करूणा भरी दशा, उनके मुरझाए हुए उदासीन तन-बदन उद्धव को बहुत चिंतित करते हैं, दुःखी करते हैं। गोपियों की जीह्वा पर हर क्षण श्री कृष्ण जी का नाम रहता है, इसी नाम की रट दिन-रात वह लगा रही हैं, हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! पुकारती हुई वह धरती पर इस प्रकार लुढ़कती हैं जिस प्रकार कोई अत्याधिक मदिरा पान करके लड़खड़ा के गिरता है। वह बार-बार श्री कृष्ण जी के चरणों में अपनी ओर से विनती करती हैं कि वह उनको शीघ्र दर्शन देकर उनके सभी कष्टों का निवारण करें। गोपियों की दशा मीन की तरह हो रही थी, जो दर्शन रूपी जल के बिना तड़प कर मर जाएँगी, इसलिए श्री कृष्ण जी उनको लाने के लिए दूत भेज दें या फिर स्वयं ब ज में पहुँच कर दर्शन दें, नहीं तो उन्हें धैर्य का वरदान दें।

।।सवैया।। ब्रिज बासन हाल किधौ हरि जू
फुन ऊधव ते सभ ही सुन लीनो।
जा की कथा सुन कै चित ते
सु हुलास घटै दुख होवत जी नो।
सयाम कहयो मुख ते इह भांत
किधों कबि नै सु सोऊ लखि लीनो।
ऊधव मै उन गव्ारनि कों सु
कयो द्रिड़ता को अबै बर दीनो।।६८२।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८६

इस प्रकार वियोग में तड़प रही अति उदासीन, दुखी, मुरझाई हुई गोपियों को श्री कृष्ण जी ने मथुरा में बैठे-बैठे ही द ढ़ता का वरदान प्रदान किया।

सुन्दर श्याम

२७

माहि मै नाहि नही घरि माहि सु
दाह करै रवि जोति दिखाई।।
जानी न जात बिलातत दयोसन
रैनि की बिरध भई अधिकाई।।
कोकिल देखि कपोत मिली मुख
कूंजत ए सुनि कै डर पाई।।
प्रीत की रीत करी उन सो
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६२४।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७७

शब्दार्थ : माहि—माघ के मास में। नाहि—पति, स्वामी। दाह—जलाता है, दुखाता है। रवि—सूर्य। बिलातत—बीता हुआ। दयोसन—दिनों के। बिरध—लंबी हो गई। अधिकाई—लंबाई। कपोत—कबूतरियाँ अपने प्रियों को मिलती देखकर। कूंजत—बोलते। टसकयो—झुका। कसकयो—खींच। कसाई—जालिम।

व्याख्या : माघ का मास आ गया है। श्री कृष्ण जी ब जवासियों को छोड़कर मथुरा चले गए। रोती, बिलखती, तड़पती हुई गोपियों को छोड़कर मथुरा के लोगों का उद्धार करने के लिए, वहाँ की भूमि का भाग्य जगाया। ब ज में गोपियाँ अकेली रह गईं। उनका प्रिय उनसे दूर है इसलिए जब सूर्य व उसका तेज उनको दिखाई देता है तो ह्रदय में जलन उतपन्न होने लगती है। अपने प्रिय के बिना गोपियों को रात्रि बहुत लंबी लगती है व समाप्त होने को नहीं आती। एक ओर कोयलें बोल रही हैं,

दूसरी ओर कबूतरियाँ गुटरगूँ करके अपने हृदय के उदगारों को प्रकट कर रही हैं। उन सभी की आवाजें सुन कर गोपियाँ मन ही मन में डरती हैं। गोपियों के मन में बार-बार आता है कि उन्होंने तो श्री कृष्ण जी के साथ प्रीत की रीति की है परन्तु उस निदर्यी के हृदय मे तनिक सा खींचाव भी उत्पन्न नहीं हुआ और न ही उसका हृदय गोपियों की ओर झुका है। मथुरा पहुँचकर श्री कृष्ण जी ने पूर्ण रूप में उनको भुला दिया है। गोपियाँ कैसे अपना पल-पल, क्षण-क्षण, बिरह की अग्नि में जलकर व्यतीत कर रहीं हैं यह उनके प्रिय इष्ट को पता ही नहीं।

श्री कृष्ण जी की प्रेमिकाओं की रात्रि नहीं गुजरती, उनकी आँखों में निद्रा नहीं है। इसके साथ पक्षी अपनी भिन्न-भिन्न आवाजें निकालकर उनको भयभीत करते हैं। श्री कृष्ण जी को क्या चिन्ता, उन्होंने तो गोपियों को भुला दिया है, परन्तु गोपियों ने श्री कृष्ण जी के साथ प्रीत की रीति निभाने का निर्णय किया हुआ है।

भावार्थ : रातें अत्याधिक लंबी होने के कारण समाप्त होने को नहीं आती। सभी प्रकार के पशु-पक्षियों की आवाजें सुनकर गोपियाँ अति अधीर होकर भयभीत होती हैं, उनको अपने प्रिय प्रियतम की याद तड़पाती है।

प्रीत की रीत करी उन सो

प्रीत, प्यार और वह भी सच्चा प्रेम, प्रत्येक को नहीं होता, प्रत्येक के साथ नहीं होता एवं प्रत्येक के वश की बात नहीं। सच्ची प्रीत तो भाग्य वालों को ही प्राप्त होती है। वह भाग्यशाली लोगों के हिस्से में आती है और वह भाग्यशाली प्रीत करने वाले अपने प्रीतम के साथ सदैव के लिए अनुरक्त हो जाते हैं। वह उनकी सेवा के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। वह अपना सर्वस्व अपने प्रिय के चरणों मे समर्पण करने के लिए सर्वदा लालायत रहते हैं।

गोपियों को तो केवल अपने प्रिय का साथ ही अच्छा लगता था। वह सदैव उसके अंग-संग रहना चाहती थी। उनको दीन-दुनिया की कोई चिन्ता नहीं थी। यदि वे पल भर के लिए भी दूर चला जाता, तो वह जल के बिना मीन की तरह तड़पती है, चात्रिक रूप बनकर स्वाति बूंद के लिए छटपटाती हैं। वह बावरी होकर तड़पती, सिसकती रहती हैं। उनके नेत्र अपनी प्रियतम की खोज में टकटकी लगाए रहते हैं। ऐसी हालत हो गई उन गोपियों की जब श्री कृष्ण जी उनको छोड़कर मथुरा चले गए। उनको अपने प्रिय श्री कृष्ण जी की याद आती है कि उनके हृदय में गोपियों के लिए तनिक भी खिंचाव नहीं। उनको अपने प्रिय के बांकपन व गुणों की याद आती है कि उनके प्रियतम ने किस प्रकार प्रेम की रीति निभाई है। वह प्रियतम, जिसने पूतना का वध किया, जिसने त्रिणाव्रत नाम के दैत्य की देह नाश की थी, जिसने अघासुर नाम वाले दैत्य का सिर फोड़ दिया, जिसने बगुले जैसी शक्ल वाले दैत्य की चोंच तोड़ दी थी, भूमासुर को इस प्रकार चीर डाला जिस प्रकार आरी लकड़ी को चीर डालती है, जिसने राम रूप होकर दैत्यों की सेना मार भगायी एवं अपने सेवक विभीषण को सम्पूर्ण लंका सौंप दी, जिसने पत्थर हो गई अहिल्या का उद्धार किया था, उसी ने श्री कृष्ण जी का अवतार धारण कर ब्राह्मणों की स्त्रियों का इस प्रकार उद्धार किया जिस प्रकार प्रभु ने साधु रूप होकर सम्पूर्ण धरती का भार हल्का किया था।

गोपियों ने अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के साथ काली नाग को नथने वाले, कंस को मारने वाले, कमल जैसी आँखों वाले, कौल नाभ, लक्ष्मीपति के रूप जैसे, कार्यों को सिद्ध करने वाले, कामिनी के काम को निव त्त करने वाले, काल के भय को समाप्त करने वाले, कलंक रूपी कालिमा को दूर करने वाले, साधुओं के कार्य को सिद्ध करने वाले, क पा की अमुल्य निधि के साथ प्रीति की एवं वह उन पर अपने प्राण, तन, मन, धन सब कुछ निछावर करने के लिए तत्पर थी।

राधा ने उस कृष्ण जी को सर्वस्व अर्पण किया जो सभी लोगों को इस भवसागर से पार करते हैं, वही श्री कृष्ण रूप हो कर ब ज में सभी लीलाएँ करते हैं। वही साधुओं के दुःखों का विनाश करने वाले हैं। उन्होंने ही सीता की मर्यादा रख ली थी एवं उन्होंने ही संकट के समय द्रोपदी की रक्षा की थी, तथा वह जो अत्याधिक बलवान एवं हठीले सूरमे थे, उनसे सभी गोपियों ने अपना ह्रदय लगाया हुआ था, उनके साथ अपनी प्रीत की डोर बांधी हुई थी।

श्री कृष्ण जी बहुत बड़े व्रतधारी व बलवीर हैं। जिसने जल में फंसे हुए हाथी की रक्षा की थी, ऐसे श्री कृष्ण जी ने गोपियों के चित को चुरा लिया था, वह श्री कृष्ण जी के मोह जाल में बुरी तरह फंस गयी थीं।

।।सवैया।। जाहि न जानत भेद मुनी मनि
भा इह जापन को इह जापी।।
राज दयो इन ही बल को
इन ही कबि सयाम धरा सभ थापी।।
मारत है दिन थोरन मै रिप
गोप कहै इह कानह् प्रतापी।।
कारन याह धरी इह मूरत
मारन को जग के सभ पापी।।३८६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३०४

जिसके भेद को मुनि जनों ने नहीं जाना। सभी जिसका जाप करते हैं। जिसने बावन रूप धारकर राजा बली को पाताल का राज्य दिया था, जिसने सम्पूर्ण धरा थाम रखी है, जो तेज प्रतापी है एवं विरोधियों का विनाश कर देता है, जिसने जगत के सभी पापियों के लिए अवतार धारण किया, ऐसे श्री कृष्ण जी से बिछुड़कर राधा अपनी सखियों सहित अत्यंत दुःखी होकर विरह की आग में जल रही है। जो हजार मुख वाले शेषनाग के शरीर की श्यया पर सो कर जल में खेल करते हैं,

जिसने प्रसंन होकर विभीषण को लंका का राज्य सौंप दिया और क्रोधित हो कर रावण का वध कर दिया था, जिसने संसार में हाथी से लेकर चींटी तक को उत्पन्न कर सभी को खाने-पीने व पहनने को दिया है, जिसने दैत्यों व देवताओं में विवाद उत्पन्न कर दिया, जिसने श्री कृष्ण जी का रूप धारण कर ब ज भूमि में गोप-गोपियों के साथ अनेक प्रकार की क्रीड़ाएँ की थीं, उस प्रिय मनमोहन श्री कृष्ण जी की स्म ति में राधा सोचती है कि उनसे प्रेम करने में उसने तनिक भी कसर नहीं छोड़ी, फिर भला यह वियोग क्यों ? यह यातना क्यों ?

जिस प्रभु को ब्रह्मा इन्द्र, लक्ष्मी, एवं सनक, सनंदन, सनातन, सनत कुमार जैसे सदैव जपते हैं, सूर्य, चंद्रमा, देवते, नारद व शारदा ने उसके ध्यान में मन को जोड़ा हुआ है, सिद्ध व महा मुनि जिसको खोज रहे हैं, व्यास व पराशर जिसके भेद को नहीं जान सके, ऐसे गुणों के धारणी, श्री कृष्ण जी गोपियों के मन मंदिर में सदैव के लिए समाये हुए थे क्योंकि ऐसे हरि जी के साथ उनकी असीम प्रीत थी।

चारों युगों में जिसका जाप लोग करते हैं, जिनके नाम के प्रताप के कारण ध्रुव और प्रहलाद ने अविनाशी पदवी प्राप्त की, जो चौदह लोकों की पालना करते हैं, जिनका स्मरण करने से सब पाप धुल जाते हैं, जो सम्पूर्ण ब्रह्मांड का रक्षक है, जिसका एक क्षण स्मरण करने से मनुष्य सात समुद्र पार हो जाता है, जिससे ब्राह्मण मांग कर खाते हैं, जिसने अनाथ हुई द्रोपदी की लाज रखी, गोपियाँ ऐसे कान्हा के चरणों की भ्रमर बनी हुईं थी, उन चरणों का रसास्वादन करने का गोपियों का मन करता है।

सूर्य, चांद, गणेश, व शिवजी जिसका सुबह उठकर ध्यान धरते हैं, नारद व व्यास जैसे ब्राह्मण जिसका जाप करते हैं, जिसने शिशुपाल जैसे योद्धा को मार गिराया, जिसके बल से सभी डरते हैं, जो श्री कृष्ण जी की सेवा करता है व सभी प्रकार का ऐश्वर्य प्राप्त करता है, जो अभेद्य है, जो साधुओं को वर देने

वाला है, दुःखों का विनाश करने वाला है, उस सर्व प्रतिपालक, दीन दयाल, शत्रु हंतक, सदैव प्रतिपालक के साथ ब ज की गोपियों ने प्रेम किया, आनंद क्रीड़ाएँ की, रास लीलाएँ रचाईं। अब वह मथुरा चले गए हैं। उनका प्रेम बार-बार आकर गोपियों के हृदय को जला रहा है। उनके नेत्र अपने प्रिय के रंग में रंगे हुए थे, उनको एक क्षण भर भी धैर्य नहीं आ रहा, वह अत्यंत विह्वल पीड़ाग्रस्त होकर तड़प रहीं थीं।

२८

।।सवैया।। फागुन फाग बढयो अनुराग
सुहागन भाग सुहाग सुहाई।
केसर चीर बनाइ सरीर
गुलाब अबीर गुलाल उडाई।
सो छबि मै न लखी जन द्वादस
मास की सोभत आग जगाई।
आस को तयाग निरास भई
टसकयो न हीयो कसकयो न कसाई।।६२५।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ३७७

शब्दार्थ : फाग—होली की रंग रलियां। अनुराग—प्रेम, मोह। सुहागन—पतियों से मिली हुई। चीर—वस्त्र। गुलाब—गुलाब का अरक। अबीर—आलता। छबि—उपमा। मै न—कामदेव। जन—मानो। द्वादस—बारहवें मास में मानों काम (मदन) की अग्नि जली हुई शोभा दे रही है।

व्याख्या : फागुन का मास आ पहुँचा। इस मास में सुहागनों की प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं रहती। जिन के प्रेमी-प्रेमिकाओं के समीप होते हैं वह अत्यंत प्रसंन्नचित्त रहती हैं। इस मास में वह केसरी रंग के वस्त्र अपने तन पर सजाती हैं। वे अर्क, गुलाब व अलता उड़ाती हैं एवं गुलाब को मुख पर मलती हैं। ऐसे लगता है कि बारह मास की सोई हुई काम अग्नि अब जागी है। गोपियाँ श्री कृष्ण जी की आस छोड़कर निराश हो गई क्योंकि उनके प्रेमी का निदर्यी हृदय उनकी ओर झुका नहीं

एवं न ही उसमे गोपियों के लिए कोई खींचाव उत्पन्न हुआ है। यही गोपियों की व्यथा है।

भावार्थ : सुहागनें अपने शरीर को हर प्रकार से सुसज्जित करती हैं परन्तु गोपियों के चित्त अति उदास हैं क्योंकि वह श्री कृष्ण जी के दर्शनों की आशा को छोड़कर निराश हो गई हैं।

आस को तयाग निरास भई

उद्धव व श्री कृष्ण जी का परस्पर अत्याधिक स्नेह था। उद्धव अपने नेत्रों द्वारा अपने प्रिय श्याम सुंदर जी के दर्शन कर निहाल होता रहता। श्री कृष्ण जी उद्धव की आँखों के तारे थे व उद्धव ने अपने जीवन की डोर अपने प्रिय श्री कृष्ण जी के चरणों में पूर्ण रूप से अर्पित की हुई थी एवं वही उनके जीवन की आशा थे। उद्धव को लगता है कि उनका प्रेम श्री कृष्ण जी के साथ अटूट व असीम है। उसको इस बात का अभिमान हो गया कि वह सर्वाधिक श्री कृष्ण जी को प्रेम करता है। उसका अहं भाव दूर करने के लिए श्री कृष्ण जी ने उसको मथुरा से ब ज में भेजा ताकि उद्धव को यह पता चल सके कि उससे बढ़कर श्री कृष्ण जी को प्रेम करने वाले अन्य भी मतवाले हैं, जिनकी जीवन ज्योति हर पल, हर क्षण, लट-लट करती अपने प्रिय के दर्शनों की लालसा में जलती रहती हैं। उद्धव को अपने ज्ञान पर अत्याधिक गर्व था इसलिए उन्होंने अपने ज्ञानानुसार गोपियों को संतुष्ट करने का प्रयत्न किया। गोपियों को हर प्रकार के उपदेश देकर समझाने की कोशिश की परन्तु गोपियों के गहरे प्रेम के समक्ष उद्धव का ज्ञान हार गया।

उनके असीम स्नेह के समक्ष उद्धव के ज्ञान ने घुटने टेक दिए। वह यहाँ तक पिघल गए कि उनकी आँखों से आँसुओं की वर्षा होने लगी। उद्धव ने गोपियों के सभी प्रकार के संदेश लाकर श्री कृष्ण जी को दिए।

एक दिन विदुर ने उद्धव से पूछा,''हे उद्धव जी ! आप तो श्री कृष्ण जी के बिना एक क्षण भर भी नहीं रहते थे, आज क्या कारण है कि आप मुझे अकेले ही दिख रहे हो। मेरे प्राण प्रिय श्याम सुंदर जी व अन्य शेष लोग सुखी तो हैं। यह सुनते ही उद्धव की आँखों से अश्रु की धारा बह निकली व उन्होंने विदुर को कोई उत्तर नहीं दिया। जब विदुर जी ने उद्धव को तीव्रता से रोते देखा तो उन्होंने जान लिया कि श्री कृष्ण जी अंर्तध्यान हो गए लगते हैं। इस कारण उनकी स्म ति में उद्धव रो रहे हैं। कुछ देर के पश्चात् उद्धव ने अपने आप को संभालते हुए विदुर जी को बताया कि श्री कृष्ण रूपी सूर्य अस्त हो गया है। उन्होंने कहा,''हे विदुर जी आप निश्चय से जान लो, जब से मेरे प्रिय श्याम सुंदर जी यदुवंशियों का विनाश कर बैकुंठ चले गए हैं, तब से ही सत्य एवं धर्म संसार से समाप्त हो गया है। मैंने अपने प्रिय के चरणों में बहुत विनती की कि,''हे मेरे प्राण प्रिय ! मैंने जन्म भर आपकी सेवा की है। मुझे भी अपने संग ले चलो।'' उत्तर में प्रिय श्याम सुंदर जी ने मुझे आदेश दिया कि 'बदरी केदार' जाकर श्री कृष्ण जी का ध्यान कर मुक्ति प्राप्त करो। यह संसार तो नाशवान है परन्तु जीवात्मा कभी भी नहीं मरती। इस कारण मेरा वियोग भी नहीं करना। जिस प्रकार जीव एक वस्त्र उतारकर दूसरा डाल लेता है उसी प्रकार यह जीव इस चोले को छोड़कर दूसरे तन में प्रवेश कर जाता है। हे विदुर जी ! अब तो उनके दर्शनों की आशा सदैव के लिए समाप्त हो गई है, मैं निराशा की गहरी खाई में जा गिरा हूँ एवं अब मैं अपने प्रिय श्याम सुंदर जी को इस जन्म में कभी भी नहीं मिल सकूंगा।

इस प्रकार निराशमय होकर उद्धव विरह के सागर में डूब गए व विलाप करने लगे। उद्धव ने कहा,''हे विदुर जी ! श्याम सुंदर जी के ज्ञान से शिक्षा लेकर यह मन संसारी मोह माया से विरक्त हो गया है परन्तु मुझे मुरली मनोहर के वियोग का

जितना दुःख है, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। जिस क्षण मेरे मुरली मनोहर अर्न्तध्यान होना चाहते थे उस क्षण मैत्रे जी ने परभास क्षेत्र में जाकर श्री कृष्ण जी को दंडवत् प्रणाम किया, उस समय श्री कृष्ण जी ने कहा,''मैत्रे जी मैं आपके मन की सम्पूर्ण दशा जानता हूँ। आप धैर्य रखो, मेरी माया आपको नहीं सताएगी क्योंकि आप मेरे भक्त हैं। पूर्व जन्म में वसु देवता एवं इस जन्म में वेद व्यास जी के भ्राता एवं पराशर मुनीवर के पुत्र हो। आपको मेरी लीला—प्रकट व गुप्त—सारी मालूम रहेगी। जो धर्म आपको वातस्यायन ऋषि ने कहा, उस धर्म को याद रखना, आप इस भवसागर से पार उतार जाओगे।''

श्री कृष्ण जी के पवित्र वचन सुनकर मैत्रे जी ने कहा,''हे बैकुंठ नाथ ! आपकी लीला स्मरण कर मैं बहुत चकित हो रहा हूँ, क्योंकि ब्रह्मा, महादेव एवं काल में सामर्थ्य नहीं जो आपके समक्ष आँख उठाकर देखें। आप जरासंघ एवं कालयमन के सामने पैदल भागे थे, आपके भेद को कोई नहीं जान सकता।''

इस प्रकार मैत्रे जी का वर्णन कर उद्धव ने विदुर को बताया कि वह श्री कृष्ण जी के आदेशानुसार 'बदरी केदार' जाकर अपने शरीर का त्याग करने के बारे में सोच रहे हैं। उन्होंने विदुर जी को कहा कि वह यह न सोच लें कि इतना ज्ञान होने के बावजूद भी उद्धव जी की आँखों में आँसू व शोक करने का क्या कारण है ? उद्धव श्री कृष्ण जी की दया व प्रीत-प्रेम को स्मरण कर उनके वियोग में एक दिन भी उनको नहीं भुला सके। उनसे मिले ज्ञान के प्रताप से उद्धव अब तक जीवित रह सके हैं नहीं तो श्री कृष्ण जी के शरीर त्यागने के साथ ही उद्धव के प्राण भी निकल जाने थे। श्याम सुंदर जी ने धरती का भार उतारने के लिए अवतार धारण किया था।

श्री कृष्ण जी ने बड़े-बड़े अधर्मी राजाओं व दैत्यों का संहार किया। कौरवों व पाण्डवों में महाभारत का युद्ध कराया और इस युद्ध में अठारह अक्षौहिणी दलों का संहार करा कर प थ्वी

का बोझ कम किया। परमेश्वर की इच्छा बहुत बलवान है। श्री कृष्ण जी का स्मरण कर उद्धव बहुत निराशमय हो रहे थे। इसलिए उन्होंने विदुर के पास से बद्रीनाथ जाने की आज्ञा मांगी। उद्धव से श्री कृष्ण जी के बारे में प्रेम भरी बातें सुनकर, विदुर जी के नेत्रों में अश्रु आ गए व वह भी अपने प्रिय श्याम सुंदर जी की स्तुति करने से न रह सके। विदुर जी ने कहा,''हे उद्धव ! श्याम सुंदर जी ने चंद्रमा के समान संसार में प्रकाश प्रकट कर प थ्वी का भार उतारा था। धर्म, गोप व ब्राह्मणों की रक्षा कर वह परलोक को चले गए। हम अज्ञानी लोग उनकी महिमा व यश को नहीं जान सके। हे उद्धव ! आप आठों पहर उनके पास रहते थे। उनकी महिमा इतनी बलवान् है कि आप भी उनको न पहचान पाए। इसलिए एक बात तो बिल्कुल स्पष्ट है कि बिना परमेश्वर की क पा से उसको कोई भी नहीं जान सकता।''

उद्धव ने अपने प्रिय प्रियतम की याद में निराशामय होकर, बद्रीनाथ में जाकर अपना शरीर त्याग दिया।

फागुन

अंतिका

गोपियाँ श्री कृष्ण जी के असीम–अथाह प्रेम के लिए कृष्ण रूपी जल के लिए मछली के समान तड़प रही हैं। कृष्ण रूपी स्वाति बूंद के लिए वह पपीहा बनकर, मुख खोलकर, लालायित हो रही हैं। कृष्ण रूपी चात्रिक के लिए वह चकवी बन रहीं हैं। प्रत्येक गोपी ने उद्धव द्वारा अपने दिल के दुःख, कसक, पीड़ा व हाव-भाव इत्यादि का चित्र उतार कर भिजवा दिया। मथुरा में बैठे श्री कृष्ण जी ने सब कुछ सुनने के पश्चात् भी गोपियों को दर्शन नहीं प्रदान किए। उनकी विरह की अग्नि पर जल का छिड़काव नहीं किया, बल्कि वहीं बैठे-बैठे द ढ़ता का वरदान प्रदान किया एवं गोपियों के विरह अध्याय को समाप्त कर डाला।

।।सवैया।। ब्रिज बासन हाल किधौ हरिजू
फुन ऊधव ते सभ ही सुन लीनो।
जाकी कथा सुनकै चित ते
सु हुलास घटै दुख होवत जीनो।
सयाम कहयो मुख ते इह भांत
किधों कबि नै सु सोऊ लखि लीनो।
ऊधव मै उन गव्ारनि को सु
कयो द्रिड़ता को अबै बर दीनो।।६८२।।

–दशम ग्रंथ प ष्ठ ३८६

साधारणतया बारह माह में विरहनी आरम्भिक महीनों में अपने प्रियतम के दर्शनों के लिये तड़पती है, परन्तु अन्तिम महीने में उसका अपने इष्ट से मिलाप हो जाता है, संयोग वश खुशियों से भरपूर क्षण उपलब्ध हो जाते हैं। जैसे कि श्री गुरू नानक देव जी ने बारह माह राग तुखारी में उच्चारण किया है कि वह जीव रूपी स्त्रियाँ भाग्यशाली बन जाती हैं जिन को

अपने प्रिय के दर्शन हो जाते हैं और वह रात-दिन अपने प्रिय के मेल-मिलाप का रसास्वादन करती हुई अपने हरि स्वरूप सुहाग को अमर व स्थिर कर लेती है।

नानक अहिनिस रावै प्रीतम, हरि वरू थिरू सोहागो।।

—आदि ग्रंथ साहिब, प ष्ठ १११०

श्री गुरू अर्जुन देव जी राग माझ में रचित 'बारहमाह' के अंत में जीव रूपी स्त्री का अपने प्रभु के साथ मिलाप करा देते हैं, उसकी सारी इच्छाओं की पूर्ति हो जाती है, वह हर्ष से झूम उठती है। उसे अपने प्रिय जैसा कोई और दिखाई नहीं देता। एक जीह्वा से प्रिय का गुणगान कैसे किया जा सकता है और इसलिये साधक की यह इच्छा है कि उसे दर्शनों का सौभाग्य सदैव प्राप्त रहे और वह इसी की मांग करें।

नानक मंगै दरस दानु किरपा करहु हरे।।

परन्तु श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी के 'ब्रिह नाटक बारहमाह' में गोपियों को संयोग और मिलाप प्राप्त नहीं, वह तो आशाओं के बड़े-बड़े महल बनाती हैं, परन्तु उन्हें आशा की कोई किरण दिखाई नहीं देती और वह आशा को त्याग कर निराश हो जाती हैं। उन्हें मंडराते हुये काले बादलों में कोई भी प्रसन्नता की लहर, मिलाप की रोशनी दिखाई नहीं देती, तो वह कहती हैं,

आस को तयाग निरास भई।।

परन्तु उनकी निराशता सदैव नहीं थी। निराशा आशा में परिवर्तित हो गई जब गोपियाँ सूर्य ग्रहण को अवसर पर नंद बाबा और यशोदा के साथ कुरूक्षेत्र पहुँच गई। सूर्य ग्रहण के समय कुरूक्षेत्र सरोवर में स्नान करने का अपना विशेष महत्व है। लोग दूर-दूर से एकत्र होकर, इतनी भीड़ के होते हुए भी, इस सरोवर में स्नान कर स्वयं को स्वच्छ और उज्जवल बनाते हैं, दूसरी ओर श्री कृष्ण जी भी अपने सेवकों सहित कुरूक्षेत्र आ पहुँचे।

इत ते ब्रिज नाइक आवत भे
उत नंद ते आदि सभै तिह आए।

चंद्रभगा ब्रिखभान सुता सभ
गुआरनि सयाम जबै दरसाए।
रूप निहार रही चकिकै
जकिगी कछु बैन कहयो नही जाए।
नंद जसोमत मोह बढाइकै
कानह् जू के उर मै लपटाए।।२४१६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ५६१

जब गोपियों को यह पता चला कि कुरूक्षेत्र में श्री कृष्ण जी भी पधारे हैं, तो राधा, चंद्रभगा इत्यादि गोपियों की खुशी का कोई ठिकाना ही न रहा। अपने इष्ट के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त करने के लिये उनका मन विचलित हो उठा। नंद बाबा और यशोदा ने अपने पुत्र को जब अपने ह्रदय से लगाया तो ममता और वात्सल्य का समुद्र उमड़ने लगा। माता-पिता के नेत्र आँसुओं से भीग गये क्योंकि र्निमोही श्री कृष्ण जी के दिल के में अपने माता-पिता के लिये मोह ही नहीं था। माता अपने ह्रदय उद्गारों को स्पष्ट करती है और अपने पुत्र पर बलिहार जाती है।

अपने माता-पिता को मिलकर श्री कृष्ण जी गोपियों को दर्शन देने गये तो गोपियों की प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं थी गोपियाँ उनका स्वागत करने के लिये दौड़ कर बाहर आईं, उस समय इस तरह प्रतीत हो रहा था जैसे म तक शरीरों में फिर से आत्मा आ गई हो, भूखे को अन्न और प्यासे को रेगिस्तान में ठण्डे जल का फुव्वारा मिल गया हो और उसे पी कर गोपियों ने अपनी प्यास बुझाकर स्वयं को त प्त कर लिया हो, चार्तिक को स्वाति बूंद मिल गई, भ्रमर को फूलों का रस, परवाने को शमा मिल गई, वह श्री कृष्ण जी का दर्शन करते ही स्वयं को भूल गई। यह सब देखते हुये श्री कृष्ण जी ने सभी गोपियों को ज्ञान स्वरूप कर दिया।

।।बिसन पद।। धनासरी।।
सुन पाई ब्रिज बाला

मोहन आए है कुरखेत।।
दरसन देख सभै दुख बिसरे
बेद कहत जिह नेत।।
तन मन अटिकयो चरन कवल सौ
धन निवछावर देत।
क्रिशन इकांत कीयो तिह ही
छिन कहयो गिआन सिख लेहु।।
मिल बिछुरन दोऊ इह जग मै
मिथिआ तनु असनेहु।।२४२६।।

—दशम ग्रंथ प ष्ठ ५६२

श्री कृष्ण जी ने गोपियों के मन को उसी समय एकांत करके कहा कि वह ज्ञान की प्राप्ति कर लें। संयोग, वियोग, मिलना, बिछुड़ना यह संसार ही रीति है और यह शरीर तो नश्वर है।

श्री गुरू गोबिन्द सिंह जी ने गोपियों की व्याकुलता विरहा और तड़प के लिये बड़ी ही सुन्दर शब्दावली का प्रयोग किया है। उन्होनें उनकी मनोदशा को बड़े ही संक्षिप्त रूप में वर्णन किया है। गागर में सागर भरना तो उनकी शैली की एक विशेषता है। वह बड़ी से बड़ी बात को कम से कम शब्दों में कहने की सामर्थ्य हैं। गोपियों की व्यथा सुनना कोई सरल काम नहीं। गोपियों के आँसुओं की वर्षा के साथ ही पाठक की आँखें में भी अश्रुओं से भीग जाती हैं और चारों ओर घनघोर बादल छा जाते हैं, उस वर्षा का कोई अंत दिखाई नहीं देता, विरह वियोग के असीम सागर में लहरें मचलती रहती है और गोपियों के साथ-साथ पाठक भी उस सागर में डूबता हुआ सिसकता है। इस 'ब्रिह नाटक बारहमाह' का एक-एक शब्द पाठक के हृदय में समा जाता है और पाठक उसका ही एक महत्वपूर्ण अंग बन जाता है।

प्रिं० बेअन्त कौर

प्रिं० बेअन्त कौर जी का साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण स्थान है। आपने पंजाबी, अंग्रेजी तथा हिन्दी भाषा में अनेकों विषयों पर अपनी सुन्दर लेखनी द्वारा अनूठी छाप छोड़ी हैं। अपनी भाषा को सुदृढ़ बनाने हेतु ही आपने पंजाबी, अंग्रेजी में एम. ए. किया एवम् हिन्दी में साहित्य रत्न की डिग्री प्राप्त की।

आपने अध्यापन के क्षेत्र में रहकर भी शिक्षा को एक नया आयाम दिया। आपको विभिन्न संस्थाओं में कार्य करने का अवसर मिला और आपने अपने अनुभव का भरपूर प्रदर्शन भी किया। अध्यापन कार्य और साहित्यिक योगदान के लिए आपको कई बार सम्मानित भी किया गया।

आपकी साहित्य में रूचि बहुत छोटी उम्र से पनपने लगी थी। आपकी अनेकों रचनाएँ राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं, जो क्रम आज भी जारी है। आपने कई पुस्तकें लिखकर साहित्य को अपने ढंग से समृद्ध किया है। आपने गुरू गोबिन्द सिंह जी की लगभग सभी रचनाओं का सूक्ष्म रूप से अध्ययन किया है। यही उनका लक्ष्य भी है और साधना का विषय भी, जिस ने उनको एक नई जीवन दिशा और प्रेरणा दी।